



Impact Factor :
7.834

गीना देवी शोध संस्थान

द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037

July-Aug. 2026

Volume 14, Issue 7-8

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Editor :
Dr. Rekha Soni
Chief-Editor :
Dr. Naresh Sihag Adv.



संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष
डॉ. विश्वकीर्ति

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI
LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

www.ginajournal.com



संस्थापक संरक्षक :
स्मृति शेष
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 14 अंक : 7-8, भाग-2 जुलाई-अगस्त : 2026 आईएसएसएन : 23 21-803 7

सम्पादक :

डॉ. रेखा सोनी

टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर, राज.

प्रधान सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)

अंतर्राष्ट्रीय सम्पादक मण्डल :

डॉ. लक्ष्मी जोशी

त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।

शिओंग छन श्यू, चीन।

डॉ. ऋतु शर्मा ननन पाँडे

साहित्यकार, शिक्षाविद, नीदरलैंड।

डॉ. सुनीता शर्मा

हिन्दी साहित्यकार, कवयित्री, संपादक

एवं शिक्षाविद मेलबोर्न, ऑस्ट्रेलिया

डॉ. अनुरुद्ध बायन

मध्य कामरूप कॉलेज, सुभा

जिला बारपेटा, असम।

डॉ. सृष्टि चौधरी

लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड

कम्युनिकेशन, सरकारी पॉलिटेक्निक

कॉलेज फॉर गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्री श्रेष्ठ चौधरी,

सीनियर मैनेजर,

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, साहिबजादा

अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब।

कानूनी सलाहकार :

डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट,

श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

सलाहकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत

अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अरूणा अंचल

बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला

चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।

डॉ. अल्पना शर्मा

आईएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर

डॉ. विजय महादेव गाडे

बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल

राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी

दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती

साहित्यकार, अनुवादक, यूकेन।

डॉ. हेमराज न्यौपाने

काठमाण्डू, नेपाल।

डॉ. ममता तनेजा

अबोहर, पंजाब।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल

बराण, राजस्थान।

डॉ. संदीप

ओम विश्वविद्यालय, हिसार।

डॉ. मधुबाला

राजकीय महाविद्यालय, लाखनमाजरा।

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका

राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मानसिंह दहिया

संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा

शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया

माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट

हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर

डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी

सीहेच एसडीएसटी थेरेसा महिला
महाविद्यालय, एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.

यूनाईटेड किंगडम।

डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,

अंकारा विश्वविद्यालय, अंकारा, टर्की

डॉ. आर.के विश्वास

अध्यक्ष होम्योपैथिक, लखनऊ।

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, पुराना बस स्टैंड रोड, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

**AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI
LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL**

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerce, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalism.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

- Disclaimer :**
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
 2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
 3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originality of their views/opinions expressed in their articles.
 4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdiction only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gagan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

50

THE GAZETTE OF INDIA : EXTRAORDINARY

[PART III—SEC. 4]

तालिका- 2

शैक्षणिक/ शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसे: प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान/ अभियांत्रिकी/ कृषि/ चिकित्सा/ पशु-चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा/ सामाजिक विज्ञान/ कला/ विज्ञान/ शारीरिक शिक्षा/ वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान- अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021



www.bohalsm.blogspot.com

grsbohals@gmail.com

8708822674

9466532152

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07-07
2.	रामदरश मिश्र का यात्रा-साहित्य : संवेदना, संस्कृति और मानवीय दृष्टि का अनुशीलन	डॉ. रेम्मा के आर	08-12
3.	भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रासंगिकता : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन	डॉ. निरंजन कुंभकार	13-16
4.	नालंदा और जावा के बौद्ध शिक्षा केन्द्रों का तुलनात्मक अध्ययन (7वीं-12वीं शताब्दी)	प्रभात यादव	17-23
5.	एकविंशत्य शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीतील सामाजिक संवेदन : एक अभ्यास	डॉ. गजानन भाऊराव घोंगटे, कु. प्रगती माणिक बेलखेडे	24-28
6.	मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सांस्कृतिक चेतना	राजेश कुमार साव	29-37
7.	RESHAPING OF CONSUMER BEHAVIOUR WITH EMERGENEC OF ONLINE MARKET AND AI	Dr. Ramesh Kumar Chouhan, Poonam Bishnoi	38-45
8.	फणीश्वरनाथ रेणु की 'नैना जोगिन' में गाली का सौंदर्यबोध और सामाजिक अर्थ	डॉ. गायत्री सिंह, रंजीत कुमार पुष्पाकर	46-49
9.	प्रशासनिक कार्यों पर "संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण" का एक अध्ययन	सुरेश चंद्र यादव, डॉ० एस०पी० सिंह	50-57
10.	भारतीय अर्थव्यवस्था पर स्टार्टअप्स योजना का प्रभाव	डॉ. कामिनी सिंह	58-69
11.	भारतीय ऑनलाइन बाजार का स्वरूप - एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. हर्षिता श्रीवास्तव	70-79
12.	दक्षिण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय चेतना	डॉ. फत्ताराम नायक	80-86
13.	न्याय प्रणाली और महिलाओं के अधिकार : एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण	Dr. Nisha Rani	87-97
14.	Negotiating Indian and Western Cultural Influences in the Writings of Amitav Ghosh : A Postcolonial Perspective	Rakesh Kumar Singh	98-103
15.	आलोचना की परंपरा और स्त्री लेखन	रश्मि, डॉ० अनिल कुमार	104-108
16.	उत्तराखण्ड के समाज में जाति व्यवस्था का वर्तमान परिदृश्य : एक ऐतिहासिक अध्ययन	दीपक कुमार	109-117

17. बौद्ध दर्शन में मध्यम मार्ग की अवधारणा एवं वर्तमान युग में प्रासंगिकता	सिद्धार्थ सिंह पटेल	118-121
18. THE HINDU BIRTH RITUALS : THEIR RELEVANCE IN THE CURRENT SOCIETY	Dr. Kumari Soni Rekha	122-125
19. महिलाओं में प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता एवं समस्याएं : पटना के अशोक नगर के मलिन बस्ती के संदर्भ में	शीतल सिन्हा, डॉ. मीरा रानी	126-133
20. अल्फा-बीटा-गामा : संवेदना का नवीन आख्यान	डॉ. मिन्नु जोसेफ	134-141
21. स्वामिविवेकानन्दस्यप्रारम्भिकजीवनम्	डॉ. बलवन्त सिंह वत्स	142-146
22. Women Entrepreneurship Through Traditional Indian Skills	Neelam Singh, Dr. Nageshwar Prasad Agrawal	147-150
23. डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक-आर्थिक चिन्तन का विश्लेषणात्मक अध्ययन	पूजा साकेत, डॉ. अनुराधा जैन	151-156
24. 'धूप से रूठी चाँदनी' में प्रवासी जीवन की काव्यात्मक अभिव्यक्ति	डॉ. सदफ इशत्याक	157-161
25. वर्तमान संदर्भों में हनुमान के आदर्शों की आवश्यकता	डॉ. दीपक कुमार	162-165
26. भाषा एवं साहित्य के विकास में तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता का योगदान	डॉ. टी. अरुणा कुमारी	166-173
27. औपनिवेशिक भारत में महिलाओं के कानूनी अधिकार : एक अध्ययन	सुनीता कुमारी	174-178
28. CYBERSECURITY GOVERNANCE AND RISK MANAGEMENT : STRATEGIES FOR SECURING CRITICAL INFORMATION INFRASTRUCTURE	Bagwan Kaisar Parvez Nisar, Dr. Kalpana Midha	179-187
29. The Relationship between Mental Health and Life Satisfaction in the Digital Age	Amirah Kaisar Parvez Bagwan, Dr. Pawar Anuradha Vijay	188-194
30. Artificial Intelligence and Generative AI in Commerce and Business Models: Transformations, Applications, and Future Implications	Prof. (Dr.) Manish Kumar Kannoja	195-200
31. महिला सशक्तिकरण में पंचायती राज की भूमिका	बिभा कुमारी, प्रो.(डॉ.) अवध बिहारी सिंह	201-207
32. विकसित भारत 2047 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी कृषि विकास हेतु सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियों एवं अवसरों का अध्ययन	गगन दीप सिंह, डॉ. दिनेश जोशी	208-218
33. आधुनिकता के दौर में मानवीयता का अतिक्रमण - नाटकों के विशेष संदर्भ में	खुशबू	219-223
34. पारिवारिक उपेक्षा का यथार्थ 'गिलिगडु'	राहुल वर्मा	224-228

साहित्य और समाज : समय के संग संवाद

वर्तमान दौर में जब समाज बहुआयामी संकटों और संभावनाओं के द्वंद्व में फंसा हुआ है, साहित्य की भूमिका और भी अधिक प्रासंगिक हो जाती है। साहित्य केवल कल्पनाओं का ताना-बाना नहीं है, यह समाज की आत्मा का आईना है। 'गीना शोध संगम' के जुलाई-अगस्त अंक में हम इसी आत्मा की पड़ताल करने का विनम्र प्रयास कर रहे हैं — एक ऐसे विमर्श की ओर जो न केवल ज्ञानवर्धक हो, बल्कि संवेदनाओं को भी स्पर्श करे।

यह अंक साहित्य, समाज और संस्कृति की त्रिवेणी में डुबकी लगाने का आमंत्रण है, जहां विचार, संवेदना और विवेक के साथ विभिन्न लेखकों ने समसामयिक विषयों की पड़ताल की है। आज जब तकनीक ने सूचनाओं को तेजी से फैलाना शुरू कर दिया है, तब यह जरूरी हो गया है कि हम इस प्रवाह में मूल्य, मर्यादा और मौलिकता को बनाए रखें। गीना शोध संगम का यह विशेषांक उसी प्रयोजन की एक कड़ी है — जहाँ शोध, समीक्षा और सृजन के तीनों स्तरों को संतुलित दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है।

साहित्य महज अक्षरों का संकलन नहीं, बल्कि एक कालबद्ध चेतना है जो युगों को पार कर संवेदना की मशाल थामे चलती है। कबीर, तुलसी, मीरा से लेकर प्रेमचंद, अज्ञेय, नागार्जुन और समकालीन कवियों तक हर युग में साहित्य ने न केवल सामाजिक विसंगतियों को रेखांकित किया, बल्कि वैकल्पिक सोच को जन्म भी दिया। इस अंक में प्रकाशित शोध आलेखों और समीक्षाओं में यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि साहित्य आज भी मनुष्य को मनुष्यता की ओर लौटने का आमंत्रण देता है। पत्रिका के इस अंक में शामिल शोधार्थियों और लेखकों ने भारतीय साहित्य के विविध पक्षों 'जैसे दलित विमर्श, नारी चेतना, ग्रामीण यथार्थ, शिक्षण में साहित्य की भूमिका, और वैश्विक साहित्य में भारतीयता' पर अत्यंत गंभीर और संतुलित विवेचन किया है। उनकी यह विशेषता रही कि उन्होंने न केवल सैद्धांतिक विमर्श किया, बल्कि व्यावहारिक पहलुओं को भी सामने रखा। यह शोध न केवल विद्वानों के लिए उपयोगी हैं, बल्कि विद्यार्थियों और सामान्य पाठकों को भी दिशा देने में सक्षम हैं।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि साहित्य समाज से कटकर जीवित नहीं रह सकता और न ही समाज साहित्य से विमुख होकर अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ा रह सकता है। इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ इस तथ्य की पुष्टि करती हैं। चाहे वह ग्रामीण परिवेश की समस्याओं पर आधारित लघु कथाएँ हों या स्त्री-विमर्श पर केंद्रित आलोचनात्मक लेख, सभी में यह अनुभव किया जा सकता है कि साहित्यकार अपने समय की नब्ज को पहचान रहा है। 'गीना शोध संगम' का यह अंक केवल एक साहित्यिक संकलन नहीं, बल्कि एक संवाद है — शोध और सृजन के मध्य। यह संवाद न केवल पाठक और लेखक के बीच होता है, बल्कि समाज और विचार के मध्य भी एक सेतु का कार्य करता है। इस अंक की विशेषता यह भी है कि इसमें रचनात्मक साहित्य के साथ-साथ विश्लेषणात्मक और आलोचनात्मक दृष्टिकोण को भी समान महत्व दिया गया है।

अंत में, हम गीना शोध संगम के सभी लेखकों, शोधार्थियों, संपादन सहयोगियों और पाठकों का आभार प्रकट करते हैं, जिनकी सहभागिता इस अंक को समृद्ध बनाती है। हम आशा करते हैं कि यह अंक आपको न केवल विचारों में नवीनता देगा, बल्कि आपको आपके सामाजिक सरोकारों के प्रति भी और अधिक सजग करेगा। साहित्य-संधान-संवाद की यह परंपरा यों ही चलती रहे — इसी मंगलकामना के साथ...

-संपादक



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 7-8
पृष्ठ : 08-12

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

रामदरश मिश्र का यात्रा-साहित्य : संवेदना, संस्कृति और मानवीय दृष्टि का अनुशीलन

डॉ. रेम्या के आर

सह आचार्य, हिंदी विभाग,

श्री शंकरा विद्यापीठम कॉलेज, पेरुम्बूर, केरल।

बीज शब्द :

रामदरश मिश्र, यात्रा-साहित्य, हिंदी साहित्य, संस्मरण, मानवीय संवेदना, सांस्कृतिक चेतना, तना हुआ इन्द्रधनुष, भोर का सपना, पड़ोस की खुशबू।

सारांश :

हिंदी साहित्य में यात्रा-साहित्य एक महत्वपूर्ण विधा के रूप में स्थापित है, जिसके माध्यम से लेखक केवल स्थानों का भौगोलिक परिचय नहीं देता बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा मानवीय यथार्थ को भी अभिव्यक्त करता है। रामदरश मिश्र हिंदी साहित्य के बहुआयामी रचनाकार हैं जिन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, आत्मकथा और यात्रा-वृत्तांत जैसी अनेक विधाओं में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके यात्रा-साहित्य में विशेष रूप से 'तना हुआ इन्द्रधनुष', 'भोर का सपना' तथा 'पड़ोस की खुशबू' उल्लेखनीय हैं। इन रचनाओं में विदेशी यात्राओं के माध्यम से लेखक ने राष्ट्रीय अस्मिता, भाषा चेतना, सांस्कृतिक आत्मीयता, प्रकृति-सौंदर्य तथा मानवीय संबंधों का सशक्त चित्रण किया है। प्रस्तुत शोध आलेख में उनके यात्रा-साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य की गद्य-विधाओं में यात्रा-साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। यात्रा केवल स्थान परिवर्तन नहीं होती, बल्कि अनुभवों, संस्कृतियों, समाजों और जीवन-दृष्टियों से परिचित होने का माध्यम बनती है। यात्रा-साहित्य लेखक के व्यक्तिगत अनुभवों का सामाजिक दस्तावेज बन जाता है। रामदरश मिश्र हिंदी साहित्य के उन रचनाकारों में हैं जिन्होंने जीवन के यथार्थ को अत्यंत सरल, संवेदनात्मक और मानवीय दृष्टि से प्रस्तुत किया। उनके यात्रा-वृत्तांत केवल देशों का वर्णन नहीं करते, बल्कि वहाँ के समाज, राजनीति, संस्कृति और मनुष्य के संघर्ष को भी सामने लाते हैं।

हिंदी यात्रा-साहित्य की परंपरा :

हिंदी में यात्रा-साहित्य की परंपरा प्राचीन है। आधुनिक काल में राहुल सांकृत्यायन, अज्ञेय, यशपाल, विष्णु

प्रभाकर आदि ने इस विधा को समृद्ध किया। इस संदर्भ में अज्ञेय लिखते हैं— “ऐसे यात्रा संस्मरण टूरिस्ट गाइड का स्थान लेने के लिए नहीं लिखे जाते, वे लेखक की बाहरी और भीतरी यात्रा दोनों का दस्तावेज होते हैं।”¹ यही विशेषता रामदरश मिश्र के यात्रा-साहित्य में भी दिखाई देती है।

रामदरश मिश्र : व्यक्तित्व और साहित्यिक परिचय :

रामदरश मिश्र आधुनिक हिंदी साहित्य के अत्यंत महत्वपूर्ण, बहुमुखी प्रतिभा संपन्न तथा संवेदनशील रचनाकारों में अग्रगण्य हैं। उनका जन्म 15 अगस्त 1924 को उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के डुमरी गाँव में एक सामान्य ग्रामीण परिवार में हुआ। ग्रामीण परिवेश में जन्म लेने के कारण बचपन से ही उन्होंने भारतीय ग्राम्य जीवन, लोक-संस्कृति, सामाजिक विषमताओं, संघर्षशील जीवन और मानवीय संबंधों को निकट से देखा। यही अनुभव आगे चलकर उनकी साहित्यिक चेतना का आधार बने। प्रारंभिक शिक्षा गाँव में प्राप्त करने के बाद उन्होंने उच्च शिक्षा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त की, जहाँ हिंदी साहित्य के गंभीर अध्ययन ने उनकी साहित्यिक प्रतिभा को नई दिशा प्रदान की।

वे हिंदी साहित्य के उन विरल रचनाकारों में हैं जिन्होंने साहित्य की लगभग सभी प्रमुख विधाओं में सृजन किया। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, आलोचना, निबंध, संस्मरण, आत्मकथा, डायरी तथा यात्रा-साहित्य जैसी विविध विधाओं में उल्लेखनीय योगदान देकर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। उनके प्रमुख उपन्यासों में ‘जल टूटता हुआ’, ‘दूसरा घर’, ‘अपने लोग’, ‘आकाश की छत’ आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। कविता के क्षेत्र में भी उन्होंने जनजीवन, प्रकृति और सामाजिक यथार्थ को अत्यंत सहज भाषा में अभिव्यक्त किया। उनका साहित्य मूलतः मानवीय संवेदनाओं का साहित्य है। वे किसी विचारधारा विशेष के आग्रह से अधिक मनुष्य और उसके जीवन-संघर्ष को महत्व देते हैं। उनके साहित्य में सामान्य मनुष्य, विशेषकर ग्रामीण समाज, किसान, मजदूर, निम्नवर्ग और संघर्षरत व्यक्ति की पीड़ा, आशा और जीवन-यथार्थ का अत्यंत मार्मिक चित्रण मिलता है। उनकी दृष्टि प्रगतिशील होते हुए भी पूर्णतः मानवीय है।

रामदरश मिश्र की लेखनी की सबसे बड़ी विशेषता है – सहजता, यथार्थबोध और मानवीय संवेदना। वे भाषा के अनावश्यक आडंबर से बचते हैं और अत्यंत सरल, स्वाभाविक तथा संप्रेषणीय भाषा का प्रयोग करते हैं। उनके साहित्य में जीवन की वास्तविक परिस्थितियाँ बिना किसी कृत्रिमता के अभिव्यक्त होती हैं। साहित्यकार होने के साथ-साथ वे एक सजग सामाजिक चिंतक भी हैं, इसलिए उनकी रचनाओं में सामाजिक विसंगतियों, सांस्कृतिक परिवर्तनों और राष्ट्रीय चेतना का भी सशक्त स्वर सुनाई देता है।

रामदरश मिश्र का यात्रा-साहित्य :

यात्रा-साहित्य के क्षेत्र में भी रामदरश मिश्र का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनकी कृतियाँ ‘तना हुआ इन्द्रधनुष’, ‘भोर का सपना’ और ‘पड़ोस की खुशबू’ केवल यात्रा-वृत्तांत नहीं हैं, बल्कि वे विभिन्न देशों और समाजों को समझने की मानवीय दृष्टि प्रस्तुत करती हैं। उनमें लेखक का संवेदनशील हृदय, प्रकृति-प्रेम, सांस्कृतिक चेतना और मनुष्य के प्रति गहरा विश्वास दिखाई देता है। इन रचनाओं में क्रमशः उत्तर कोरिया, दक्षिण कोरिया तथा नेपाल की यात्राओं का वर्णन है।

‘तना हुआ इन्द्रधनुष’ : उत्तर कोरिया की यात्रा :

यह यात्रा-वृत्तांत उत्तर कोरिया यात्रा पर आधारित है। लेखक वहाँ एक शिष्टमंडल के नेता के रूप में

गए थे। लेखक अपनी पहली विदेश यात्रा के अनुभव को लिखते हैं— “मैं विदेश कभी नहीं गया था इसलिए विदेश की यात्रा के नाम से एक घबराहट महसूस हुई।”² यह कथन लेखक के सहज और सामान्य मानवीय स्वभाव को व्यक्त करता है। इस यात्रा में लेखक ने उत्तर कोरिया की सामाजिक व्यवस्था, राष्ट्रीय अनुशासन और जनता के संघर्षशील जीवन का चित्रण किया है। रामदरश मिश्र हिंदी भाषा के प्रबल समर्थक थे। विदेश यात्रा में भी उन्होंने हिंदी में बोलने का आग्रह रखा। वे लिखते हैं— “मैं कितनी हीनता अनुभव कर रहा था कि मैं उस देश का वासी हूँ जो अंग्रेजी को माथे पर ताज की तरह पहने हुए है।”³ यह कथन भारतीय समाज की भाषिक मानसिकता पर गंभीर प्रश्न खड़ा करता है।

‘भोर का सपना’ : दक्षिण कोरिया की यात्रा :

यह यात्रा—वृत्तांत दक्षिण कोरिया यात्रा पर आधारित है। यहाँ लेखक अपने छात्र के निमंत्रण पर पत्नी सहित गए थे। इस यात्रा में लेखक को विदेशी भूमि पर भी भारतीय पारिवारिक आत्मीयता का अनुभव हुआ। वे लिखते हैं— “पारिवारिक स्नेह की ऊष्मा और हर्षोल्लास अद्भुत था, मैं उसमें एक भारतीय परिवार की आंच अनुभव कर रहा था।”⁴ यह कथन बताता है कि लेखक मनुष्य को सीमाओं से नहीं, संवेदना से पहचानते हैं। दक्षिण कोरिया के प्राकृतिक सौंदर्य ने लेखक को अत्यधिक प्रभावित किया। पहाड़, घाटियाँ, फूल, समुद्र और सड़कें उनके वर्णन में अत्यंत सजीव हो उठती हैं। उनका प्रकृति-वर्णन कवि-सुलभ संवेदना लिए हुए है।

‘पड़ोस की खुशबू’ : नेपाल और भारतीय यात्राएँ :

यह संग्रह नेपाल सहित अन्य यात्राओं पर आधारित है। यहाँ लेखक “पड़ोस” की अवधारणा को केवल भौगोलिक नहीं, बल्कि मानवीय निकटता के रूप में प्रस्तुत करते हैं। नेपाल यात्रा के संदर्भ में वे लिखते हैं— “नेपाल विदेश है भी और नहीं भी, वहाँ जाना घरेलू यात्रा जैसा अनुभव है।”⁵ यह कथन भारत-नेपाल सांस्कृतिक संबंधों की आत्मीयता को व्यक्त करता है।

मानवीय संवेदना : रामदरश मिश्र के यात्रा-साहित्य का मूल स्वर :

रामदरश मिश्र के यात्रा-वृत्तांतों की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उनकी गहन मानवीय संवेदना है। वे केवल एक पर्यटक की दृष्टि से किसी देश, नगर अथवा स्थान का वर्णन नहीं करते, बल्कि वहाँ के सामान्य जन-जीवन, उनकी पीड़ा, संघर्ष, श्रम, संस्कृति और जीवन-मूल्यों को समझने का प्रयास करते हैं। उनके लिए यात्रा केवल भौगोलिक सीमाओं का अतिक्रमण नहीं, बल्कि मनुष्य और मनुष्यता की खोज का माध्यम है। इसी कारण उनके यात्रा-वृत्तांतों में प्रकृति और स्थापत्य के साथ-साथ मानवीय संबंधों का अत्यंत संवेदनशील चित्रण मिलता है।

रामदरश मिश्र की दृष्टि वर्ग, जाति, धर्म, भाषा और राष्ट्र की सीमाओं से ऊपर उठकर विश्व-मानव की भावना से प्रेरित है। वे जहाँ भी जाते हैं, वहाँ के आम नागरिकों के जीवन की कठिनाइयों, उनके श्रम, उनकी आशाओं और उनके संघर्षों को अपनी अनुभूति का हिस्सा बना लेते हैं। उनकी संवेदना किसी विशेष देश या समाज तक सीमित नहीं रहती, बल्कि समस्त मानव जाति के प्रति समान रूप से व्यक्त होती है।

उनकी पुस्तक ‘तना हुआ इन्द्रधनुष’ में कोरिया की यात्रा के दौरान विभाजित कोरिया की त्रासदी का वर्णन अत्यंत मार्मिक रूप में मिलता है। वे केवल राजनीतिक घटनाओं का विवरण नहीं देते, बल्कि विभाजन के कारण टूटे हुए परिवारों, बिछुड़े हुए संबंधों और सामान्य नागरिकों के मानसिक कष्ट को अनुभव करते हैं। वे

लिखते हैं— “देश का विभाजन एक भीषण त्रासदी होती है, चाहे भारत का हो या कोरिया का, स्वार्थ केवल राजनीतिज्ञों का सिद्ध होता है।”⁶ यह कथन केवल कोरिया की स्थिति का वर्णन नहीं है, बल्कि भारत के विभाजन की ऐतिहासिक पीड़ा का भी स्मरण कराता है। इससे स्पष्ट होता है कि लेखक राजनीतिक घटनाओं का मूल्यांकन सत्ता या विचारधारा के आधार पर नहीं, बल्कि मानवीय परिणामों के आधार पर करते हैं। उनके लिए किसी भी युद्ध, विभाजन या राजनीतिक संघर्ष का सबसे बड़ा शिकार सामान्य मनुष्य होता है।

रामदरश मिश्र के यात्रा-वृत्तांतों में श्रमिकों, किसानों, विद्यार्थियों, कलाकारों तथा साधारण नागरिकों के जीवन के प्रति गहरी आत्मीयता दिखाई देती है। वे विदेशी समाजों की आर्थिक उन्नति को केवल आँकड़ों में नहीं देखते, बल्कि यह समझने का प्रयास करते हैं कि वहाँ के नागरिकों का जीवन कितना सम्मानजनक, सुरक्षित और मानवीय है। वे यह भी अनुभव करते हैं कि किसी राष्ट्र की वास्तविक प्रगति उसके नागरिकों के जीवन-स्तर, शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक समानता में निहित होती है। उनकी मानवीय संवेदना का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष सांस्कृतिक सह-अस्तित्व है। वे विभिन्न देशों की परम्पराओं, रीति-रिवाजों और जीवन-पद्धतियों का सम्मान करते हैं। वे सांस्कृतिक भिन्नताओं को संघर्ष का कारण नहीं मानते, बल्कि उन्हें मानव सभ्यता की विविधता और समृद्धि का प्रतीक मानते हैं। इस प्रकार उनका यात्रा-साहित्य ‘वसुधैव कुटुम्बकम्’ की भारतीय भावना को आधुनिक संदर्भ में पुनः स्थापित करता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि रामदरश मिश्र का यात्रा-साहित्य केवल स्थानों का वर्णन नहीं, बल्कि मनुष्य और उसकी संवेदनाओं का दस्तावेज है। उनकी दृष्टि करुणा, सहानुभूति, सामाजिक न्याय और मानवीय समानता के मूल्यों से अनुप्राणित है। यही कारण है कि उनके यात्रा-वृत्तांत पाठकों को केवल जानकारी नहीं देते, बल्कि उन्हें अधिक संवेदनशील और मानवीय बनने की प्रेरणा भी प्रदान करते हैं।

राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक दृष्टि :

रामदरश मिश्र के यात्रा-वृत्तांतों में राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक दृष्टि का अत्यंत सशक्त स्वर उपस्थित है। विदेश यात्राओं के दौरान वे अन्य देशों की उपलब्धियों और विकास का सूक्ष्म अध्ययन करते हैं, किन्तु उनका उद्देश्य केवल उनकी प्रशंसा करना नहीं होता। वे प्रत्येक अनुभव की तुलना भारतीय समाज, संस्कृति और राष्ट्रीय जीवन से करते हुए आत्ममंथन की दृष्टि विकसित करते हैं। इस कारण उनके यात्रा-वृत्तांतों में राष्ट्रीय आत्मचिंतन और सांस्कृतिक आत्मबोध का स्वर प्रमुख रूप से उभरता है।

रामदरश मिश्र भारतीय संस्कृति, हिंदी भाषा और भारतीय जीवन-मूल्यों के प्रति गहरी आस्था रखते हैं। विदेशों में रहते हुए भी उनकी दृष्टि निरंतर भारत की ओर लौटती रहती है। वे विदेशी समाजों की वैज्ञानिक प्रगति, अनुशासन, स्वच्छता, शिक्षा व्यवस्था तथा तकनीकी विकास का निष्पक्ष मूल्यांकन करते हैं और यह विचार करते हैं कि भारत इन क्षेत्रों में क्या सीख सकता है। उनके लिए विदेश यात्रा का उद्देश्य अंधानुकरण नहीं, बल्कि रचनात्मक आत्मविश्लेषण है। विशेष रूप से चीन और कोरिया की यात्रा के दौरान वे इस तथ्य से प्रभावित होते हैं कि इन देशों ने आधुनिक विज्ञान, तकनीक और आर्थिक विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है, जबकि उन्होंने अपनी मातृभाषाओं को ही शिक्षा, प्रशासन और अनुसंधान का आधार बनाए रखा है।

इसके विपरीत भारत में अंग्रेजी के प्रति अत्यधिक निर्भरता उन्हें चिंतित करती है। वे संकेत करते हैं कि वास्तविक आधुनिकता किसी विदेशी भाषा पर निर्भर नहीं होती, बल्कि अपनी भाषा और संस्कृति में विश्वास रखते

हुए भी प्राप्त की जा सकती है। उनकी यह दृष्टि सांस्कृतिक स्वाभिमान और भाषाई आत्मनिर्भरता का समर्थन करती है। वे यह मानते हैं कि जो राष्ट्र अपनी भाषा, संस्कृति और परंपराओं का सम्मान करता है, वही स्थायी और समावेशी विकास की दिशा में आगे बढ़ सकता है। इस संदर्भ में उनका चिंतन राष्ट्रवाद का संकीर्ण रूप प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि ऐसा राष्ट्रवाद प्रस्तुत करता है जो आत्मसम्मान, सांस्कृतिक अस्मिता और वैश्विक संवाद— तीनों को समान महत्त्व देता है।

रामदरश मिश्र विदेशी समाजों की अच्छाइयों को खुले मन से स्वीकार करते हैं, परंतु भारतीय संस्कृति की मूल मानवीय विशेषताओं 'सहिष्णुता, पारिवारिक संबंध, आध्यात्मिकता, सह-अस्तित्व और विविधता में एकता' को भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानते हैं। वे यह स्पष्ट करते हैं कि आधुनिकता का अर्थ अपनी सांस्कृतिक पहचान को खो देना नहीं है। उनके अनुसार विकास और परंपरा परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक-दूसरे के पूरक हो सकते हैं। उनके यात्रा-वृत्तांतों में भारतीयता का यह स्वर किसी प्रकार की सांस्कृतिक श्रेष्ठता का दावा नहीं करता, बल्कि आत्मविश्वास और आत्मसम्मान पर आधारित है। वे भारत की कमियों को भी ईमानदारी से स्वीकार करते हैं 'जैसे भाषा-नीति की अस्पष्टता, प्रशासनिक जटिलताएँ, सामाजिक असमानताएँ और विकास संबंधी चुनौतियाँ' और विदेशों के सकारात्मक अनुभवों के आधार पर उनके समाधान की दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करते हैं।

इस प्रकार रामदरश मिश्र की राष्ट्रीय चेतना आलोचनात्मक, प्रगतिशील और आत्ममंथनपरक है। उनका यात्रा-साहित्य पाठकों में अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति सम्मान, राष्ट्रीय आत्मविश्वास तथा विश्व की श्रेष्ठ उपलब्धियों से सीखने की प्रेरणा उत्पन्न करता है। यही संतुलित दृष्टि उनके यात्रा-वृत्तांतों को केवल यात्रा-वर्णन न बनाकर राष्ट्रीय और सांस्कृतिक विमर्श का महत्त्वपूर्ण दस्तावेज बना देती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रामदरश मिश्र का यात्रा-साहित्य हिंदी गद्य परंपरा की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। उनके यात्रा-वृत्तांत केवल भौगोलिक यात्राएँ नहीं बल्कि मानवीय संवेदना की यात्राएँ हैं। उन्होंने विदेशों के माध्यम से भारत को देखा और भारतीय समाज की समस्याओं को नए दृष्टिकोण से समझने का प्रयास किया। उनकी रचनाएँ पाठक को यह सिखाती हैं कि यात्रा केवल स्थान बदलना नहीं, बल्कि दृष्टि बदलना भी है।

संदर्भ सूची :

1. अज्ञेय, अरे यायावर रहेगा याद, राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, पृ. 12
2. रामदरश मिश्र, तना हुआ इन्द्रधनुष, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 23
3. रामदरश मिश्र, तना हुआ इन्द्रधनुष, वाणी प्रकाशन, पृ. 41
4. रामदरश मिश्र, भोर का सपना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 88
5. रामदरश मिश्र, पड़ोस की खुशबू, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 27
6. रामदरश मिश्र, तना हुआ इन्द्रधनुष, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 65

Email: remyagr@ssvcollege.ac.in



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 13-16

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रासंगिकता : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन

डॉ. निरंजन कुंभकार

ग्राम-जोजोहातु, पोस्ट-दलभंगा, प्रखण्ड-कुचाई, जिला-सरायेकेला-खरसावाँ, झारखण्ड-833216

सारांश (Abstract)

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक राष्ट्र है, जिसकी सामाजिक संरचना बहुधार्मिक, बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक तथा बहुजातीय है। ऐसी विविधता वाले समाज में धर्मनिरपेक्षता केवल एक राजनीतिक सिद्धांत नहीं बल्कि राष्ट्रीय एकता और सामाजिक समरसता का आधार है। भारतीय संविधान ने प्रत्येक नागरिक को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करते हुए राज्य को सभी धर्मों के प्रति समान व्यवहार करने का दायित्व सौंपा है। वर्तमान समय में धार्मिक ध्रुवीकरण, सांप्रदायिक तनाव, सोशल मीडिया के माध्यम से फैलती घृणा, राजनीतिक ध्रुवीकरण तथा वैश्वीकरण जैसी चुनौतियों के बीच भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रासंगिकता और अधिक बढ़ गई है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में भारतीय धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा, संवैधानिक स्वरूप, ऐतिहासिक विकास, वर्तमान चुनौतियों तथा भविष्य की संभावनाओं का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता पश्चिमी मॉडल से भिन्न है तथा यह 'सर्वधर्म समभाव' और 'समान सम्मान' के सिद्धांत पर आधारित है। लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय तथा राष्ट्रीय अखंडता की रक्षा के लिए भारतीय धर्मनिरपेक्षता को सुदृढ़ करना समय की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द : धर्मनिरपेक्षता, संविधान, लोकतंत्र, धार्मिक स्वतंत्रता, सर्वधर्म समभाव, सामाजिक समरसता।

प्रस्तावना :

भारत की सांस्कृतिक पहचान उसकी विविधता में निहित है। यहाँ हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन, पारसी तथा अनेक अन्य धार्मिक समुदाय सहस्राब्दियों से साथ रहते आए हैं। इस विविधता को बनाए रखने के लिए संविधान निर्माताओं ने धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना को आवश्यक माना। भारतीय संविधान की प्रस्तावना भारत को 'सम्पूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य' घोषित करती है।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता का अर्थ धर्म-विरोध नहीं है, बल्कि सभी धर्मों के प्रति समान सम्मान तथा प्रत्येक नागरिक को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करना है। वर्तमान समय में बढ़ते धार्मिक तनाव, सांप्रदायिक हिंसा, चुनावी राजनीति में धार्मिक मुद्दों का उपयोग तथा सोशल मीडिया पर फैलती कट्टरता के कारण धर्मनिरपेक्षता की प्रासंगिकता पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण हो गई है।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा :

धर्मनिरपेक्षता (Secularism) का सामान्य अर्थ राज्य और धर्म के पृथक्करण से लगाया जाता है, किंतु भारतीय संदर्भ में इसका अर्थ भिन्न है। भारत में धर्मनिरपेक्षता का आधार 'सभी धर्मों के प्रति समान सम्मान' है।

पश्चिमी देशों में धर्मनिरपेक्षता मुख्यतः चर्च और राज्य के पृथक्करण पर आधारित रही है, जबकि भारत में राज्य सभी धर्मों का सम्मान करता है तथा आवश्यकता पड़ने पर सामाजिक सुधार के उद्देश्य से धार्मिक संस्थाओं में हस्तक्षेप भी कर सकता है। यही कारण है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता को 'सकारात्मक धर्मनिरपेक्षता' कहा जाता है।

भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता :

भारतीय संविधान धर्मनिरपेक्षता को अनेक अनुच्छेदों के माध्यम से सुनिश्चित करता है।

- प्रस्तावना में पंथनिरपेक्ष राज्य की घोषणा।
- अनुच्छेद 14 : कानून के समक्ष समानता।
- अनुच्छेद 15 : धर्म के आधार पर भेदभाव का निषेध।
- अनुच्छेद 16 : सार्वजनिक रोजगार में समान अवसर।
- अनुच्छेद 25 : धर्म की स्वतंत्रता।
- अनुच्छेद 26 : धार्मिक संस्थाओं के प्रबंधन का अधिकार।
- अनुच्छेद 27 : किसी विशेष धर्म के प्रचार हेतु कर लगाने का निषेध।
- अनुच्छेद 28 : सरकारी शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा पर नियंत्रण।
- अनुच्छेद 29 एवं 30 : अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार।

42वें संविधान संशोधन (1976) द्वारा प्रस्तावना में 'पंथनिरपेक्ष' शब्द को औपचारिक रूप से जोड़ा गया, यद्यपि इसकी मूल भावना संविधान के प्रारंभ से ही विद्यमान थी।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता का ऐतिहासिक विकास :

भारत में धार्मिक सहिष्णुता की परंपरा अत्यंत प्राचीन रही है। सम्राट अशोक ने सभी धर्मों के सम्मान की नीति अपनाई। मुगल सम्राट अकबर ने 'सुलह-ए-कुल' की नीति द्वारा धार्मिक सद्भाव को प्रोत्साहित किया।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी ने सर्वधर्म समभाव पर बल दिया जबकि जवाहरलाल नेहरू ने आधुनिक वैज्ञानिक एवं धर्मनिरपेक्ष राज्य की परिकल्पना प्रस्तुत की। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान में धार्मिक स्वतंत्रता एवं समानता के सिद्धांतों को संस्थागत रूप दिया।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय धर्मनिरपेक्षता :

1. सांप्रदायिक तनाव :

देश के विभिन्न भागों में समय-समय पर होने वाले सांप्रदायिक विवाद सामाजिक समरसता को प्रभावित करते हैं। इससे धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को चुनौती मिलती है।

2. राजनीतिक ध्रुवीकरण :

चुनावी राजनीति में धार्मिक पहचान का उपयोग लोकतांत्रिक मूल्यों को कमजोर करता है। मतदाताओं का ध्रुवीकरण सामाजिक विभाजन को बढ़ा सकता है।

3. सोशल मीडिया की भूमिका :

सोशल मीडिया सूचना के प्रसार का प्रभावी माध्यम है, किंतु इसके माध्यम से भ्रामक सूचनाएँ, अफवाहें तथा घृणास्पद सामग्री भी तेजी से फैलती हैं। इससे सामाजिक तनाव उत्पन्न होने की संभावना रहती है।

4. वैश्वीकरण एवं सांस्कृतिक परिवर्तन :

वैश्वीकरण ने विभिन्न संस्कृतियों को निकट लाया है, परन्तु इसके साथ धार्मिक पहचान की राजनीति भी कई स्थानों पर उभरकर सामने आई है।

5. न्यायपालिका की भूमिका :

भारतीय न्यायपालिका ने अनेक निर्णयों के माध्यम से धर्मनिरपेक्षता को संविधान की मूल संरचना का हिस्सा माना है। न्यायालय समय-समय पर धार्मिक स्वतंत्रता तथा संवैधानिक मूल्यों के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता रहा है।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रमुख चुनौतियाँ :

- सांप्रदायिक राजनीति।
- धार्मिक कट्टरता।
- फर्जी समाचार एवं दुष्प्रचार।
- अल्पसंख्यकों की असुरक्षा की भावना।
- बहुसंख्यक एवं अल्पसंख्यक राजनीति।
- धार्मिक ध्रुवीकरण।

शिक्षा में संवैधानिक मूल्यों के प्रति जागरूकता का अभाव :

इन चुनौतियों के कारण लोकतंत्र की गुणवत्ता तथा सामाजिक एकता प्रभावित हो सकती है।
भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रासंगिकता :

- **राष्ट्रीय एकता :**
धर्मनिरपेक्षता भारत जैसे विविधतापूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने का कार्य करती है।
- **लोकतंत्र की मजबूती :**
लोकतंत्र तभी सफल हो सकता है जब सभी नागरिक समान अधिकारों का अनुभव करें।
- **सामाजिक न्याय :**
धर्मनिरपेक्षता समान अवसर तथा समान नागरिकता की भावना को सुदृढ़ करती है।
- **धार्मिक स्वतंत्रता :**
प्रत्येक नागरिक को अपनी आस्था का पालन, प्रचार तथा परिवर्तन करने की स्वतंत्रता प्राप्त होती है।
- **अल्पसंख्यकों का संरक्षण :**
धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकारों की रक्षा करती है।
- **संवैधानिक मूल्यों की रक्षा :**
स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व तथा न्याय जैसे संवैधानिक आदर्श धर्मनिरपेक्षता के माध्यम से ही व्यवहारिक रूप प्राप्त करते हैं।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता को सुदृढ़ करने के उपाय :

1. संविधान के मूल्यों पर आधारित नागरिक शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए।
2. विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संवैधानिक नैतिकता का समावेश किया जाए।
3. सोशल मीडिया पर दुष्प्रचार रोकने के लिए प्रभावी तंत्र विकसित किया जाए।
4. अंतरधार्मिक संवाद एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान को प्रोत्साहित किया जाए।
5. राजनीतिक दलों द्वारा धार्मिक ध्रुवीकरण से बचने की लोकतांत्रिक प्रतिबद्धता विकसित की जाए।
6. कानून का समान एवं निष्पक्ष अनुपालन सुनिश्चित किया जाए।
7. न्यायपालिका एवं संवैधानिक संस्थाओं की स्वतंत्रता को सुदृढ़ किया जाए।

निष्कर्ष :

भारतीय धर्मनिरपेक्षता भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधारशिला है। यह केवल संवैधानिक सिद्धांत नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता, राष्ट्रीय एकता तथा लोकतांत्रिक मूल्यों का संरक्षण करने वाला जीवन-दर्शन है। वर्तमान समय में धार्मिक ध्रुवीकरण, राजनीतिक प्रतिस्पर्धा, डिजिटल माध्यमों पर बढ़ती गलत सूचनाएँ तथा सामाजिक तनाव धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था के समक्ष नई चुनौतियाँ प्रस्तुत करते हैं। इन चुनौतियों का समाधान संविधान के मूल्यों, विधि के शासन, नागरिक शिक्षा तथा परस्पर सम्मान की संस्कृति को सुदृढ़ करके ही संभव है। भारतीय धर्मनिरपेक्षता की सफलता इसी में है कि प्रत्येक नागरिक स्वयं को समान अधिकारों और समान गरिमा का अधिकारी अनुभव करे। इसलिए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इसकी प्रासंगिकता पहले की अपेक्षा और अधिक बढ़ गई है।

संदर्भ (References)

- Austin, G. (1999). Working a democratic constitution: The Indian experience. Oxford University Press.
- Basu, D. D. (2018). Introduction to the Constitution of India (23rd ed.). LexisNexis.
- Bhargava, R. (1998). Secularism and its critics. Oxford University Press.
- Constituent Assembly Debates. (1946–1950). Government of India.
- Government of India. (2024). The Constitution of India. Ministry of Law and Justice.
- Madan, T. N. (1997). Modern myths, locked minds: Secularism and fundamentalism in India. Oxford University Press.
- Nehru, J. (1946). The discovery of India. Oxford University Press.
- Smith, D. E. (1963). India as a secular state. Princeton University Press.
- Supreme Court of India. (1994). S. R. Bommai v. Union of India, (1994) 3 SCC 1.
- Thapar, R. (2002). Early India: From the origins to AD 1300. Penguin Books.

नालंदा और जावा के बौद्ध शिक्षा केन्द्रों का तुलनात्मक अध्ययन (7वीं-12वीं शताब्दी)

प्रभात यादव

शोध छात्र, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्त्व विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

सार :

सातवीं से बारहवीं शताब्दी ईस्वी के मध्य भारतीय उपमहाद्वीप तथा दक्षिण-पूर्व एशिया में बौद्ध धर्म केवल एक धार्मिक परम्परा नहीं था, बल्कि ज्ञान, शिक्षा और सांस्कृतिक आदान-प्रदान का एक व्यापक अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क भी था। इस नेटवर्क का प्रमुख केन्द्र भारत का नालंदा महाविहार तथा जावा में शैलेन्द्र शासकों के संरक्षण में विकसित बौद्ध शिक्षा केन्द्र थे। नालंदा ने जहाँ महायान, योगाचार, माध्यमक, तर्कशास्त्र, व्याकरण तथा चिकित्सा जैसे विषयों में अंतरराष्ट्रीय ख्याति अर्जित की, वहीं जावा के बौद्ध केन्द्रों ने इन परम्पराओं को स्थानीय सांस्कृतिक संदर्भों में विकसित किया। श्रीविजय और जावा के विद्वानों का नालंदा से निरन्तर संपर्क था तथा चीनी यात्री इत्सिंग (इत्सिंग) ने भी दक्षिण-पूर्व एशिया और नालंदा के मध्य विद्यमान विद्वत् संबंधों का उल्लेख किया (इत्सिंग, 1896, पृ. 11, सुकुमार दत्त, 1962, पृ. 331)।

यह शोध-पत्र नालंदा और जावा के बौद्ध शिक्षा केन्द्रों का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि दोनों क्षेत्रों में शिक्षा व्यवस्था, पाठ्यक्रम, संरक्षण प्रणाली, अंतरराष्ट्रीय छात्र समुदाय तथा बौद्ध दर्शन के प्रसार में क्या समानताएँ और भिन्नताएँ थीं।

मुख्य शब्द : नालंदा, जावा, शैलेन्द्र, बौद्ध शिक्षा, महायान, श्रीविजय, बोरोबुदुर, अंतरराष्ट्रीय शिक्षा।

भूमिका :

प्राचीन भारत के शिक्षा इतिहास में नालंदा महाविहार का स्थान अद्वितीय है। पाँचवीं शताब्दी में स्थापित यह महाविहार सातवीं से बारहवीं शताब्दी तक सम्पूर्ण एशिया का सर्वाधिक प्रतिष्ठित बौद्ध विश्वविद्यालय रहा। चीन, कोरिया, तिब्बत, श्रीलंका, सुमात्रा तथा जावा से विद्यार्थी यहाँ अध्ययन हेतु आते थे। ह्वेनसांग (ह्वेनसांग) तथा इत्सिंग (इत्सिंग) के यात्रा-वृत्तांत नालंदा की शैक्षणिक व्यवस्था के सबसे विश्वसनीय समकालीन स्रोत माने जाते हैं। आधुनिक इतिहासकार भी इन्हें नालंदा के पुनर्निर्माण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हैं।

दूसरी ओर, जावा में आठवीं-नौवीं शताब्दी के दौरान शैलेन्द्र वंश के संरक्षण में महायान एवं वज्रयान बौद्ध परम्परा का उल्लेखनीय विकास हुआ। बोरोबुदुर केवल एक स्मारक नहीं था, बल्कि धार्मिक शिक्षा, ध्यान और बौद्ध

दार्शनिक प्रशिक्षण का भी महत्वपूर्ण केन्द्र था (जॉर्ज कोएदेस, 1968, पृ. 149–156)।

इतिहासकार जॉर्ज कोएदेस का मत है कि भारतीय बौद्ध शिक्षा का प्रभाव दक्षिण-पूर्व एशिया में प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, विशेषकर शैलेन्द्र शासनकाल में (जॉर्ज कोएदेस, 1968, पृ. 151)।

नालंदा और जावा के बीच संबंध केवल धार्मिक नहीं थे, बल्कि शैक्षणिक भी थे। पाल सम्राट देवपाल के नालंदा ताम्रपत्र से ज्ञात होता है कि शैलेन्द्र शासक बालपुत्रदेव ने नालंदा में अपने देश के विद्यार्थियों हेतु एक विहार के निर्माण का अनुरोध किया था, जिसे स्वीकार किया गया (हरप्रसाद शास्त्री, 1942, पृ. 89–93)। यह अभिलेख भारत-जावा शैक्षणिक संबंधों का प्रत्यक्ष पुरातात्विक प्रमाण है।

नालंदा और जावा के बौद्ध शिक्षा केन्द्रों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

नालंदा महाविहार की स्थापना सामान्यतः गुप्त सम्राट कुमारगुप्त प्रथम (5वीं शताब्दी ई.) के काल से मानी जाती है। सातवीं शताब्दी तक यह सम्पूर्ण एशिया का प्रमुख बौद्ध विश्वविद्यालय बन चुका था। ह्वेनसांग के अनुसार यहाँ लगभग 10,000 विद्यार्थी और 1,500 आचार्य विद्यमान थे तथा प्रवेश अत्यंत कठिन था (ह्वेनसांग, ली रोंगशी अनुवाद, 1996, पृ. 153–156)।

इत्सिंग लगभग दस वर्षों तक नालंदा में रहे। उन्होंने लिखा कि यहाँ शिक्षा का स्तर इतना उच्च था कि दक्षिण-पूर्व एशिया के भिक्षुओं को पहले श्रीविजय में संस्कृत और बौद्ध व्याकरण का अध्ययन करके बाद में नालंदा आने की सलाह दी जाती थी (इत्सिंग, 1896, पृ. 11–14)। इससे स्पष्ट होता है कि श्रीविजय और जावा नालंदा के सहयोगी बौद्ध शिक्षा केन्द्रों के रूप में कार्य करते थे।

आठवीं-नौवीं शताब्दी में जावा में शैलेन्द्र वंश के संरक्षण में महायान बौद्ध धर्म का उत्कर्ष हुआ। इसी काल में विश्वप्रसिद्ध बोरोबुदुर का निर्माण हुआ। यह स्मारक केवल धार्मिक पूजा का स्थल नहीं था, बल्कि बौद्ध दर्शन, ध्यान तथा आध्यात्मिक प्रशिक्षण का जीवंत केन्द्र भी था (जान फॉन्टेन, 1990, पृ. 27–35)।

भारत और जावा के शैक्षणिक संबंधों का सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण नालंदा ताम्रपत्र है। इसमें उल्लेख है कि शैलेन्द्र नरेश बालपुत्रदेव ने नालंदा में अपने राज्य के भिक्षुओं और विद्यार्थियों के लिए विहार निर्माण का अनुरोध किया, जिसे पाल सम्राट देवपाल ने स्वीकार किया (हरप्रसाद शास्त्री, 1942, पृ. 89–93)। यह घटना सिद्ध करती है कि नालंदा केवल भारतीय संस्था नहीं था, बल्कि सम्पूर्ण एशिया का अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय था।

आधुनिक विद्वान मैक्स डीग का मत है कि नालंदा के इतिहास के पुनर्निर्माण में चीनी यात्रियों के विवरण, अभिलेख और पुरातात्विक साक्ष्य सबसे विश्वसनीय स्रोत हैं।

नालंदा और जावा की शिक्षा व्यवस्था : एक तुलनात्मक विश्लेषण :

सातवीं से बारहवीं शताब्दी के मध्य नालंदा और जावा दोनों ही महायान बौद्ध परम्परा के महत्वपूर्ण ज्ञान-केंद्र थे। दोनों का मूल उद्देश्य केवल धार्मिक शिक्षा देना नहीं था, बल्कि ऐसे विद्वानों का निर्माण करना था जो बौद्ध दर्शन, तर्क, भाषा, अनुवाद, शास्त्रार्थ और सांस्कृतिक नेतृत्व में दक्ष हों। फिर भी दोनों संस्थाओं की संरचना, प्रशासन और कार्यप्रणाली में कुछ उल्लेखनीय समानताएँ और भिन्नताएँ दिखाई देती हैं।

नालंदा पूर्णतः एक आवासीय (आवासीय) विश्वविद्यालय था। ह्वेनसांग के अनुसार यहाँ अनेक बहुमंजिला विहार, विशाल व्याख्यान कक्ष, अध्ययन-मंडप, उद्यान, पुस्तकालय और विद्यार्थियों के निवास की सुव्यवस्थित

व्यवस्था थी। विश्वविद्यालय का संचालन वरिष्ठ आचार्यों की परिषद् द्वारा किया जाता था तथा कुलपति (प्रधान आचार्य) उसकी शैक्षणिक दिशा निर्धारित करते थे (ह्वेनसांग, ली रोंगशी, 1996, पृ. 154–158).

इसके विपरीत जावा के बौद्ध शिक्षा केन्द्र मुख्यतः विहारों और मन्दिर-समूहों के रूप में विकसित हुए। बोरोबुदुर, मेंदुत (मेंदुत) और पावोन (पावोन) जैसे केन्द्र धार्मिक अनुष्ठान, ध्यान और बौद्ध शिक्षा के संयुक्त संस्थान थे। वहाँ शिक्षा अपेक्षाकृत विकेन्द्रित थी तथा विभिन्न विहार स्थानीय आचार्यों के नेतृत्व में संचालित होते थे (जान फॉन्टेन, 1990, पृ. 42–49).

यह अंतर इस तथ्य को दर्शाता है कि नालंदा एक संगठित विश्वविद्यालयीय मॉडल था, जबकि जावा में शिक्षा का स्वरूप मठ-आधारित (मठ-आधारित नेटवर्क) था।

प्रवेश प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन :

नालंदा की प्रवेश प्रणाली अत्यन्त कठोर मानी जाती थी। ह्वेनसांग लिखते हैं कि विश्वविद्यालय के द्वार पर विद्वान भिक्षु अभ्यर्थियों की मौखिक परीक्षा लेते थे। केवल वही विद्यार्थी प्रवेश प्राप्त कर सकते थे जो बौद्ध दर्शन, व्याकरण और तर्कशास्त्र में पर्याप्त ज्ञान रखते थे। उन्होंने उल्लेख किया है कि अनेक अभ्यर्थी प्रवेश परीक्षा में असफल हो जाते थे (ह्वेनसांग, 1996, पृ. 156).

सुकुमार दत्त के अनुसार यह व्यवस्था नालंदा की शैक्षणिक गुणवत्ता बनाए रखने का प्रमुख साधन थी (सुकुमार दत्त, 1962, पृ. 123–126).

इसके विपरीत जावा के विहारों में प्रवेश अपेक्षाकृत लचीला था। वहाँ स्थानीय भिक्षुओं के साथ-साथ विदेशी साधुओं को भी स्थान दिया जाता था। यद्यपि अध्ययन का स्तर उच्च था, परन्तु नालंदा जैसी औपचारिक प्रवेश परीक्षा का उल्लेख किसी समकालीन स्रोत में नहीं मिलता (जॉर्ज कोएदेस, 1968, पृ. 150–153).

यह अंतर दर्शाता है कि नालंदा में प्रवेश योग्यता-आधारित चयन पर आधारित था, जबकि जावा में शिक्षा का उद्देश्य बौद्ध धर्म के व्यापक प्रसार और स्थानीय प्रशिक्षण पर अधिक केन्द्रित था।

पाठ्यक्रम का तुलनात्मक अध्ययन :

नालंदा का पाठ्यक्रम अत्यन्त व्यापक था। यहाँ केवल बौद्ध दर्शन ही नहीं, बल्कि—

- व्याकरण
- तर्कशास्त्र (हेतुविद्या)
- चिकित्सा
- ज्योतिष
- गणित
- वेद एवं वेदांग
- सांख्य
- योग
- मीमांसा
- साहित्य

का भी अध्ययन कराया जाता था (सुकुमार दत्त, 1962, पृ. 164–171).

इत्सिंग के अनुसार संस्कृत भाषा का अध्ययन प्रत्येक विद्यार्थी के लिए अनिवार्य था, क्योंकि सम्पूर्ण बौद्ध साहित्य संस्कृत में उपलब्ध था (इत्सिंग, 1896, पृ. 178–180).

इसके विपरीत जावा के शिक्षा केन्द्रों का पाठ्यक्रम मुख्यतः—

- महायान दर्शन
- वज्रयान साधना
- बोधिसत्त्व सिद्धान्त
- ध्यान
- संस्कृत बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन
- स्थानीय भाषाओं में अनुवाद

पर केन्द्रित था (जॉन एन. मिक्सिक, 2017, पृ. 286–291).

जावा में भारतीय ग्रन्थों को स्थानीय सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुसार व्याख्यायित किया जाता था। इस कारण वहाँ शिक्षा अधिक व्यावहारिक एवं धार्मिक अनुष्ठानों से जुड़ी हुई थी।

शिक्षण-पद्धति का तुलनात्मक अध्ययन :

नालंदा की शिक्षा प्रणाली संवाद, व्याख्यान, वाद—विवाद तथा शास्त्रार्थ पर आधारित थी। प्रत्येक विद्यार्थी को केवल ग्रन्थ पढ़ना ही नहीं, बल्कि सार्वजनिक शास्त्रार्थ में अपनी विद्वत्ता सिद्ध करनी होती थी।

ह्वेनसांग लिखते हैं कि प्रतिदिन अनेक दार्शनिक चर्चाएँ होती थीं और जो विद्वान शास्त्रार्थ में सफल होते थे, उन्हें विशेष सम्मान प्राप्त होता था (ह्वेनसांग, 1996, पृ. 157–160).

सुकुमार दत्त ने इसे भारतीय उच्च शिक्षा का सर्वोच्च बौद्धिक मॉडल माना है (सुकुमार दत्त, 1962, पृ. 188).

जावा में भी मौखिक शिक्षा, गुरु—शिष्य परम्परा और ध्यान का महत्वपूर्ण स्थान था, किन्तु वहाँ शास्त्रार्थ की अपेक्षा ध्यान—साधना तथा धार्मिक अनुष्ठानों को अधिक महत्व दिया जाता था (जान फॉन्टेन, 1990, पृ. 52–56).

भाषा एवं माध्यम :

नालंदा में संस्कृत मुख्य शिक्षण भाषा थी। पाली का भी प्रयोग होता था, किन्तु उच्च अध्ययन संस्कृत में सम्पन्न होता था (इत्सिंग, 1896, पृ. 179–181).

जावा में संस्कृत के साथ—साथ पुरानी जावानी (प्राचीन जावानी/कावी) भाषा का प्रयोग भी होने लगा। भारतीय ग्रन्थों के अनेक अंश स्थानीय भाषाओं में अनूदित किए गए जिससे बौद्ध धर्म व्यापक समाज तक पहुँच सका (जॉर्ज कोएदेस, 1968, पृ. 155–157).

विदेशी विद्यार्थियों की भूमिका :

नालंदा की सबसे बड़ी विशेषता उसकी अंतरराष्ट्रीय प्रकृति थी। चीन, तिब्बत, कोरिया, श्रीलंका, सुमात्रा, जावा और खोतान से विद्यार्थी अध्ययन हेतु आते थे।

इत्सिंग लिखते हैं कि दक्षिण—पूर्व एशिया के अनेक भिक्षु पहले श्रीविजय में अध्ययन करते थे और तत्पश्चात् नालंदा आते थे (इत्सिंग, 1896, पृ. 11–14).

यह तथ्य सिद्ध करता है कि श्रीविजय और जावा, नालंदा के सहयोगी शिक्षा केन्द्रों के रूप में कार्य करते थे।

नालंदा-जावा बौद्धिक सम्पर्क :

भारत और जावा के मध्य विद्वानों का नियमित आवागमन होता था। इसका सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण देवपाल का नालंदा ताम्रपत्र है, जिसमें शैलेन्द्र शासक बालपुत्रदेव द्वारा नालंदा में जावानी भिक्षुओं के लिए विहार निर्माण का उल्लेख मिलता है (हरप्रसाद शास्त्री, 1942, पृ. 89-93)।

यह केवल धार्मिक संरक्षण नहीं था, बल्कि एक प्रकार का अंतरराष्ट्रीय शैक्षणिक सहयोग (शैक्षणिक आदान-प्रदान कार्यक्रम) था।

आधुनिक इतिहासकार हर्मन कुल्के का मत है कि शैलेन्द्र शासकों ने भारतीय बौद्ध शिक्षा को दक्षिण-पूर्व एशिया में संस्थागत रूप प्रदान किया (हर्मन कुल्के, 1998, पृ. 203-207)।

पुस्तकालय व्यवस्था और ज्ञान-संरक्षण :

नालंदा की सबसे विशिष्ट विशेषताओं में उसका विशाल पुस्तकालय था, जिसे परंपरागत रूप से धर्मगंज (धर्मगञ्ज) कहा जाता है। इसके अंतर्गत रत्नसागर, रत्नोदधि और रत्नरंजक नामक तीन पुस्तकालय-भवनों का उल्लेख मिलता है। यहाँ बौद्ध दर्शन के अतिरिक्त व्याकरण, तर्कशास्त्र, चिकित्सा, ज्योतिष, गणित तथा अन्य शास्त्रों के हस्तलिखित ग्रंथ सुरक्षित रखे जाते थे (सुकुमार दत्त, 1962, पृ. 295-301, एस. एन. सेन, 1999, पृ. 142-145)।

देवपाल के नालंदा ताम्रपत्र से यह भी ज्ञात होता है कि दान में प्राप्त आय का उपयोग केवल भिक्षुओं के निर्वाह के लिए ही नहीं, बल्कि बौद्ध ग्रंथों की प्रतिलिपियाँ तैयार करने (पांडुलिपियों की प्रतिलिपि-निर्माण) तथा विहार के रख-रखाव के लिए भी किया जाता था। इससे स्पष्ट है कि नालंदा में ज्ञान-संरक्षण एक संस्थागत प्रक्रिया थी।

जावा में भी बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन और संरक्षण किया जाता था, किन्तु वहाँ पुस्तकालयों का स्वरूप नालंदा जितना केंद्रीकृत नहीं था। बोरोबुदुर, मेंदुत तथा अन्य विहारों में संस्कृत और स्थानीय कावी भाषा में ग्रंथों का अध्ययन एवं अनुवाद होता था (जान फॉन्टेन, 1990, पृ. 58-66)।

राजकीय संरक्षण एवं आर्थिक प्रबंधन :

नालंदा की आर्थिक शक्ति का आधार राजकीय अनुदान, ग्राम-दान तथा समाज का सहयोग था। गुप्त, हर्ष तथा विशेष रूप से पाल शासकों ने इसे उदार संरक्षण प्रदान किया। पाल सम्राट देवपाल के प्रसिद्ध ताम्रपत्र से ज्ञात होता है कि बालपुत्रदेव (शैलेन्द्र शासक) के अनुरोध पर नालंदा स्थित विहार के निर्वाह हेतु पाँच ग्राम दान में दिए गए। यह दान भोजन, वस्त्र, औषधि, पांडुलिपियों की प्रतिलिपि तथा भवनों के रख-रखाव के लिए था।

यह अभिलेख केवल धार्मिक संरक्षण का प्रमाण नहीं है, बल्कि यह दर्शाता है कि नालंदा का आर्थिक मॉडल अंतरराष्ट्रीय सहयोग पर भी आधारित था। शैलेन्द्र शासकों द्वारा भारतीय महाविहार में निवेश इस बात का प्रमाण है कि शिक्षा तत्कालीन एशिया की साझा बौद्धिक संपदा मानी जाती थी।

जावा में शैलेन्द्र वंश ने बोरोबुदुर सहित अनेक बौद्ध संस्थानों को भूमि, कर-मुक्त गाँव तथा राजकीय सहायता प्रदान की (जॉर्ज कोएदेस, 1968, पृ. 151-156)।

भारत-जावा बौद्धिक एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान :

नालंदा और जावा के संबंधों की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता विद्वानों, ग्रंथों और धार्मिक विचारों का निरंतर आदान-प्रदान था।

इत्सिंग (इत्सिंग) ने स्पष्ट लिखा है कि चीन जाने वाले अनेक भिक्षु पहले श्रीविजय में संस्कृत और बौद्ध व्याकरण का अध्ययन करते थे, उसके बाद नालंदा आते थे (इत्सिंग, 1896, पृ. 11-14)। इससे ज्ञात होता है कि श्रीविजय और जावा, नालंदा से जुड़े अंतरराष्ट्रीय शैक्षणिक नेटवर्क का अभिन्न भाग थे।

बोरोबुदुर की मूर्तिकला और स्थापत्य में भी नालंदा तथा पालकालीन भारतीय कला की स्पष्ट छाप दिखाई देती है (हर्मन कुल्के, 1998, पृ. 205-208, जान फॉन्टेन, 1990, पृ. 84-89)।

आलोचनात्मक मूल्यांकन :

तुलनात्मक अध्ययन से निम्न तथ्य स्पष्ट होते हैं—

- नालंदा एक पूर्ण विकसित विश्वविद्यालयीय संस्थान था, जबकि जावा के बौद्ध केन्द्र मुख्यतः मठ-आधारित शिक्षण संस्थाएँ थे।
- नालंदा में प्रवेश-परीक्षा, विषय-विविधता और औपचारिक शैक्षणिक संगठन अधिक विकसित था।
- जावा ने भारतीय बौद्ध शिक्षा का अनुकरण मात्र नहीं किया, बल्कि उसे स्थानीय सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुरूप रूपांतरित किया।
- देवपाल-बालपुत्रदेव ताम्रपत्र यह सिद्ध करता है कि शिक्षा का यह नेटवर्क राजनीतिक सीमाओं से परे था और भारत तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच संस्थागत शैक्षणिक सहयोग विद्यमान था।

निष्कर्ष :

सातवीं से बारहवीं शताब्दी के मध्य नालंदा और जावा के बौद्ध शिक्षा केन्द्र एशिया की ज्ञान-परम्परा के दो महत्वपूर्ण स्तंभ थे। नालंदा ने उच्च शिक्षा, अनुसंधान, शास्त्रार्थ और अंतरराष्ट्रीय छात्र-समुदाय का आदर्श प्रस्तुत किया, जबकि जावा ने उसी परम्परा को स्थानीय सांस्कृतिक संदर्भ में विकसित कर दक्षिण-पूर्व एशिया में बौद्ध दर्शन और शिक्षा का व्यापक प्रसार किया।

देवपाल के ताम्रपत्र, ह्वेनसांग और इत्सिंग के वृत्तांत, पुरातात्विक अवशेष तथा आधुनिक अनुसंधान यह प्रमाणित करते हैं कि नालंदा और जावा के बीच केवल धार्मिक नहीं, बल्कि सुविकसित अंतरराष्ट्रीय शैक्षणिक संबंध थे। इस दृष्टि से इन दोनों केन्द्रों का अध्ययन आधुनिक वैश्विक उच्च शिक्षा के ऐतिहासिक विकास को समझने में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

ग्रंथ सूची :

1. जॉर्ज कोएदेस (1968). द इंडियनाइज्ड स्टेट्स ऑफ साउथईस्ट एशिया. होनोलूलू : यूनिवर्सिटी ऑफ हवाई प्रेस।
2. सुकुमार दत्त (1962). बौद्ध मॉक्स एंड मोनेस्ट्रीज ऑफ इंडिया. लंदन : जॉर्ज एलन एंड अनविन।
3. जान फॉन्टेन (1990). द पिलग्रिम्स गाइड टू बोरोबुदुर. टोक्यो : कोडांशा।
4. हर्मन कुल्के (1998). नागपट्टिनम टू सुवर्णद्वीप : रिप्लेक्शन्स ऑन द चोला नेवल एक्सपीडिशनस.

इंस्टीट्यूट ऑफ साउथईस्ट एशियन स्टडीज।

5. जॉन एन. मिक्सिक (2017). बोरोबुदुर : गोल्डन टेल्स ऑफ द बुद्धाज. पेरिप्लस एडिशनस।
6. एस. एन. सेन (1999). एन्शिएंट इंडियन हिस्ट्री एंड सिविलाइजेशन. न्यू एज इंटरनेशनल।
7. हरप्रसाद शास्त्री (1942). नालंदा एंड इट्स एपिग्राफिक मटेरियल. आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया
8. ह्वेनसांग (1996). द ग्रेट तांग डायनेस्टी रिकॉर्ड ऑफ द वेस्टर्न रीजन (अनुवाद : ली रोंगशी). बर्कले :
नुमाता सेंटर।
9. इत्सिंग (1896). ए रिकॉर्ड ऑफ द बुद्धिस्ट रिलिजन ऐज प्रैक्टिस्ड इन इंडिया एंड द मलय आर्किपेलागो
(अनुवाद : जे. जे. ताकाकुसु). ऑक्सफोर्डर्स क्लैरेंडन प्रेस।
10. एन. जी. मजूमदार (1926). नालंदा कॉपर-प्लेट ऑफ देवपालदेव. राजशाही : वरेन्द्र रिसर्च सोसायटी।
11. डी. सी. सरकार (1983). सेलेक्ट इन्स्क्रिप्शन्स बियरिंग ऑन इंडियन हिस्ट्री एंड सिविलाइजेशन (खंड 2).
दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास।
12. हरप्रसाद शास्त्री (1923-24). 'द नालंदा कॉपर-प्लेट ऑफ देवपालदेव'. एपिग्राफिया इंडिका, खंड 17,
पृ. 310-327.
13. मैक्स डीग (2020). स्टडीज ऑन नालंदा टेक्चुअल ट्रेडिशनस एंड हिस्टोरिकल सोर्सेज. कैम्ब्रिज
यूनिवर्सिटी प्रेस।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 24-28

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

एकविसाव्या शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीतील सामाजिक संवेदन : एक अभ्यास

डॉ. गजानन भाऊराव घोंगटे

मार्गदर्शक, मराठी विभाग प्रमुख

श्रीमती साळुंकाबाई राऊत कला व वाणिज्य महाविद्यालय, वनोजा.

कु. प्रगती माणिक बेलखेडे,

संशोधक विद्यार्थीनी

श्रीमती साळुंकाबाई राऊत, कला व वाणिज्य महाविद्यालय, वनोजा.

सारांश :

प्रस्तुत शोधनिबंधात “एकविसाव्या शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीतील सामाजिक संवेदन” एक अभ्यास या घटकाचा अभ्यास करण्यात आला आहे. स्त्रियांचे जागृत झालेले आत्मभान आणि स्त्रियांसाठी स्त्रीमुक्ती साठी सुरु झालेले प्रयत्न स्त्रीवादी कादंबरीत कसे दिसून येतात याचाही अभ्यास करण्यात आला आहे. मेघना पेठे यांच्या कादंबरीतील ‘मीरा’ स्त्रीपुरुष समानता ही ‘लिंगभाव’ यांच्या आधारे कसे अधोरेखित करते याचेही चित्रण शोधनिबंधामधून दिसून येते. एकविसाव्या शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीतील सामाजिक संवेदन कसे बहुतस्तरीय आहे, याही घटकांचाही अभ्यास प्रस्तुत शोधनिबंधात केला आहे तो पुढील प्रमाणे पाहता येईल.

बीज :

‘एकविसाव्या शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीतील सामाजिक संवेदन’ एक अभ्यास या घटकांचा अभ्यास करताना स्त्रीवाद अर्थ, व्याख्या, स्त्रीमुक्तीची चळवळ, स्त्रीवादी साहित्य स्वरूप व भूमिका, कविता महाजन ‘ब्र’, मेघना पेठे ‘नातीचरामि’, आशा बगे ‘भूमी’, या कादंबऱ्यामधील सामाजिक संवेदन.

प्रास्ताविक :

पारंपरिक समाज व्यवस्थेत स्त्रीला असलेल्या स्थानाचा विचार करता असे दिसते की, पुरुष प्रधान संस्कृतीने स्त्रीचे विविध पातळ्यावर शोषण केले आहे. परंतु औद्योगिक क्रांतीनुसार ‘अबला’ हे विशेषण बदलताना आपल्याला दिसून येत आहे.

साहित्य हे समाजाचे प्रतिबिंब असते याच प्रतिबिंबाचा विचार स्त्रीवादी लेखिका करताना दिसतात. स्त्रीवादी लेखिका आपल्या जाणिवा कादंबरीतून मांडताना दिसतात. त्यापैकी एक जाणीव म्हणजेच सामाजिक संवेदन या घटकाचा अभ्यास प्रस्तुत शोधनिबंधात करणार आहोत.

त्यामध्ये स्त्रीवाद अर्थ, व्याख्या, स्त्रीवादी चळवळ, स्त्रीवादी साहित्याचे स्वरूप व भूमिका एकविसाव्या शतकातील मराठी स्त्रीवादी कादंबरी, समाजसंवेदन इ. घटकांचा परामर्श घेण्याचा प्रयत्न आपण करणार आहोत हे पुढील प्रमाणे.

विषय विवेचन :

स्त्रीवाद अर्थ :

सूर्य जरी पूर्वेला उगवत असला तरीही विज्ञानाचा आधुनिक विचारांचा उदय हा पश्चिमेला होत आला आहे. 'स्त्रीवाद' या संकल्पनेचा उदय पाश्चिमात्य देशात झाला असे असले तरीही बदलत्या काळानुसार जगातील विविध राष्ट्रांमधून स्त्रीवाद उत्तरोत्तर विकसित होऊ लागल्याचे दिसते.

माणूस हा जन्मापासूनच स्वतंत्र असतो. ज्याला बळाच्या जोरावर कोणीही गुलाम म्हणून ठेवू शकत नाही या विचाराने प्रेरित होऊन पारतंत्र्यात खितपत पडलेल्या विविध देशातील स्वतंत्र चळवळींनी जोर धरला. आतापर्यंत गुलामगिरीच्या बेड्यात बंदिस्त असलेल्या दुर्बलघटकांची अस्मिता जागी झाली. याला स्त्रिया ही अपवाद नव्हत्या आणि याच काळात स्त्रियांच्या चळवळीचा उदय झाला. यातूनच 'स्त्रीवाद' नावाची विचारसरणी आकाराला येऊ लागली. स्त्रीवादाने अखिल स्त्री जातीच्या मुक्तीचा जाहीरनामा आणला. हजारो वर्षांच्या गुलामगिरीला धक्के दिले जाऊ लागले व ती एक राजकीय विचारप्रणाली बनली.

व्याख्या :

भारतीय स्त्री ही रुढीप्रधान व बुरसटलेल्या मनोवृत्तीची भक्ष्य बनली आहे. व आपले स्वत्व हरवून बसली आहे. तिची अस्मिता जागृत करणारी विचारसरणी म्हणजेच अभिप्रेत असलेला 'स्त्रीवाद' असे म्हणणे वावगे ठरणार नाही.

यावरून काही विचारवंतांचा विचार करता येईल.

'सिमोन द बोव्हा' यांच्या मते, "स्त्रीवाद" म्हणजे केवळ स्त्री हक्कांचे समर्थन नव्हे तर स्त्रीची 'स्त्री' अशी ओळख करून देणे, स्त्री प्रश्नापंती आस्था निर्माण करणे."¹

'फिमेल म्हणजे स्त्री', फेमिनिझम म्हणजे स्त्रीप्राधान्य फेमिनिस्ट म्हणजे स्त्रीवादी विचारधारा या विचाराच्या आधारावर समानतेच्या तत्वाचा पुरस्कार करीत स्त्रीजीवन विचार प्राधान्य देणारा प्रवाह म्हणजेच स्त्रीवाद"²

वरील व्याख्याचे परिशिलन केल्यास असे म्हणता येईल की, स्त्रियांच्या सांगोपांग चर्चा करणारी मतप्रणाली म्हणजे स्त्रीत्वासाठी, कुटुंबातील स्थान, स्वतःच्या शरीरावर हक्क आणि राजकीय, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, कौटुंबिक इ. क्षेत्रातील समानता मिळण्यासाठी स्त्रियांना प्रचलित समाज व्यवस्थेविरुद्ध केलेला संघर्ष म्हणजे स्त्रीवाद होय.

स्त्रीमुक्तीची चळवळ :

स्त्रीवादी चळवळ ही मानवमुक्तीची चळवळ आहे. महाराष्ट्रात झालेल्या दलित चळवळीतून ज्याप्रमाणे दलित वर्गाचे आत्मभान जागृत झाले.

स्त्री जीवनाची कक्षा वाढत असतानाच आपल्या स्वतंत्र अस्तित्वाची व व्यक्तिमत्त्वाची जाणीव होऊ लागलेल्या स्त्रीला स्त्रियांनी संघटित होण्याची, पर्यायाने स्त्री चळवळीची अपरिहार्यता जाणवली स्वहक्कासाठी पाश्चात्य स्त्रीमुक्ती चळवळीने प्रेरित होऊन विविध स्तरावर आपल्या न्याय हक्कासाठी लढा देण्याची निकड

स्त्रियांना भासू लागली. यातून स्त्रीमुक्ती चळवळीचा उदय झाला.

1975 हे जरी 'आंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष' म्हणून साजरे करण्यात आले. तरी स्त्री-पददलित व उपेक्षित असल्याची जाणीव 1789 मधील फ्रेंच राज्यक्रांतीमधून घेतलेल्या स्त्रीमुक्ती विचारांना निश्चित दिशा लाभली. पाश्चात स्त्रीवादी प्रेरणांचे बळ घेऊन गतिमान झालेल्या भारतीय स्त्रीवाद्याला भारतीय स्त्री मुक्तीचा वैचारिक स्त्रोत बळ देणारा ठरला आहे.

स्त्रीवादी साहित्याचे स्वरूप व भूमिका :

1975 नंतर विश्वस्तरावर स्त्रियांचे आत्मभान जागृत झाले. आणि त्यांचा परिणाम साहित्यावर झाला. स्त्रियांचे जागृत झालेले आत्मभान आणि स्त्रीमुक्तीसाठी सुरु झालेले प्रयत्न स्त्रीलिखित साहित्यात चित्रीत झालेले दिसतात. पुरुष लेखकांनी केलेल्या स्त्रीचित्रणापेक्षा स्त्रीलिखित साहित्यातून आलेले स्त्री चित्रण, आशय, भाषा अनुभवाच्या दृष्टीने बदलत्या मूल्यभावाचे प्रकटीकरण करणारे असे आहे.

कथा, कादंबरी, आत्मचरित्र, नाटक, कविता इत्यादी वाङ्मय प्रकारात स्त्रीकेंद्री समाजसंवेदना एकविसाव्या शतकात अग्रक्रमानेच आलेली दिसून येतात. आधुनिक युगात, संगणकीय व स्पर्धेच्या युगात पाय रोवून उभे राहण्याची क्षमता या स्त्रीच्या विचारात देहबोलीतून व कृती उत्तीतून सातत्याने दिसते.

स्त्री व तिची भूमिका यात वेगळेपण उरलेले नाही. याची जाणीव नव्याने झालेली आहे हा महत्त्वाचा बदल एकविसाव्या शतकातील साहित्यात प्रकर्षाने जाणवतो.

एकविसाव्या शतकातील मराठी स्त्रीवादी कादंबरी :

समाज आणि मानवी जीवनातील विविध क्षेत्रे आणि त्यातील पर्यावरणाचे संदर्भ पकडताना मराठी कादंबरीने वेग वेगळी वळणे घेतलेली दिसतात. त्यामुळे तिचा आशय व रूप बदललेले दिसून येते.

स्वातंत्र्यपूर्व आणि स्वातंत्र्योत्तर अशा दोन्ही काळात मराठी कादंबरीने मराठी भाषा आणि साहित्य व्यवहार यामध्ये मोलाचे योगदान दिलेले आहे.

'मराठी कादंबरी बाबत विसाव्या शतकातील काळ' हा अधिक आश्वासक आणि प्रवाही आहे असे म्हणता येईल.

या काळातील समाजविश्व कादंबरीतून अधिक ठळक आणि सकसपणे चित्रीत झालेले आहे. या काळावर जागतिकीकरणाचा प्रभाव असल्यामुळे सामान्यांचे जगणे सामाजिक, आर्थिकदृष्ट्या गुंतागुंतीचे झालेले दिसते. या बदललेल्या जीवनमानाचा आलेख एकविसाव्या शतकातील काही स्त्रीवादी लेखिकांनी समाजसंवेदन या घटकातून तो मांडलेला आहे. तो पुढील प्रमाणे पाहता येईल.

समाज संवेदन :

कोणताही लेखक आपल्या भोवतालच्या समाजाविषयी आपले भान व्यक्त करीत असतो हे भान म्हणजेच समाजसंवेदन होय. समाजसंवेदनातील लेखकांची समाजाबद्दलची जाणीव व्यक्त होते यालाच सामाजिक जाणीव असेही म्हणता येईल.

समाजाबद्दलचे भान समाजसंवेदनातून व्यक्त झालेले आहे आणि हे समाजसंवेदन सामाजिक जाणिवेशी निगडित आहे. त्यामुळे समाजसंवेदन आणि समाजिकता या एकाच नाण्याच्या दोन बाजू आहेत. स्त्रिया समाजाकडे ज्या नजरेने पाहतात त्याबद्दलचा दृष्टिकोन या संवेदनातून अधोरेखित होतो.

एकविसाव्या शतकातील मराठी लेखिकांच्या कादंबरीतील सामाजिक जाणीव आणि त्यातून प्रकट होणारी सामाजिक संवेदना अत्यंत महत्त्वाची आहे. सामाजिक जाणीव ही या काळातील लेखिकांच्या कादंबरीचा गाभा आहे. काही स्त्रीवादी लेखिकांच्या कादंबरीचा अभ्यास पुढीलप्रमाणे करता येईल. सर्वप्रथम कविता महाजन 'ब्र' या कादंबरीत आदिवासी समाजाचे चित्रण येते. या कादंबरीची नायिका 'प्रफुल्ला' आहे. 1992 मध्ये 73 व्या घटनादुरुस्तीच्या आधारे स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये स्त्रियांसाठी राखीव जागांची तरतूद केली या तरतुदीमुळे आदिवासी भागात ग्रामपंचायतीवर निवडून येणाऱ्या स्त्रियांची संख्या विलक्षण प्रमाणात वाढली.

परंतु आदिवासी महिला सरपंच होणे हे पुरुषसत्ताक व्यवस्थेने निर्माण केलेल्या पुरुषी मानसिकतेच्या विरोधात होते त्यामुळे पुरुषवृत्तीने अनेक महिलांवर अविश्वास ठराव दाखल केले. या संदर्भातील वस्तुस्थितीची पाहणी करण्यासाठी आणि त्या पाहणीच्या आधारे अहवाललेखन करण्यासाठी प्रफुल्लाची निवड होते.

'ब्र' कादंबरीत अहवाल तयार करताना प्रफुल्ला महाराष्ट्रातील आदिवासी पाड्यांना भेटी देते. अनेक अन्यायग्रस्त आदिवासी स्त्रियांच्या जीवनातील गोष्टी ती समजून घेते. या विषयातून या कादंबरीचे कथानक आकाराला आलेले आहे.

परंतु केवळ आदिवासी समाजापुरते समाजसंवेदन मर्यादित नाही, तर या समाजसंवेदनातून महानगर, शहर, खेडेगाव याचे दर्शन देखील घडते.

या कादंबरीतील नायिका महाराष्ट्रातील 37 जिल्ह्यातील 47 आदिवासी वस्त्यांना भेट देते. यातून तिला आदिवासी समाजाच्या भोवताल समुहगान, जातस्तर याचे दर्शन घडते. ठकार, महादेव, कोळी, कातकरी, वारली गोंड, माटिया, आंध अशा अनेक जमाती तिला भेटतात. या जमातीच्या बोली वेगवेगळ्या आहेत त्यांच्याशी समरस होत शहरीकरणापासून, सुविधांपासून दूर असणारे पण निसर्गाशी जवळीक साधणारे आदिम प्रेरणांशी इमान राखणारे समूहमन प्रफुल्लाच्या माध्यमातून कविता महाजन मांडतांना दिसतात.

आदिवासी समाजाशी एकरूप झालेली नायिका "किती बायकांच्या जगण्यात मी माझ्या जगण्याचे प्रतिबिंब पाहिले"³ असे म्हणते यातून तिची आदिवासी स्त्री जीवनाची जोडलेली संवेदनशीलता अधोरेखित होते. 'नातीचरामि' या मेघना पेठेच्या कादंबरीत येणाऱ्या समाजस्तरीय महानगरीय आहे. महानगरीय समाजात वावरणाऱ्या काही स्त्रिया विवाह संस्था नाकारताना दिसतात. 'नातीचरामि' या कादंबरीतील नायिका 'मीरा' ही विवाह संस्था नाकारताना दिसते.

मेघना पेठे यांनी मिराच्या माध्यमातून स्त्री पुरुष यांच्यातील लैंगिक संबंधाबाबत प्रश्न उपस्थित केलेला आहे. विवाह ही बाब वरकरणी सोईची वाटत असली तरी ती स्त्री पुरुष समानतेसाठी गैरसोईचीच ठरते हे समाजसंवेदन येथे व्यक्त होते.

"बाई आणि पुरुष" या कोटीध्ये हे आक्रमण आणि समर्पण वाटून देण्यापेक्षा त्या इच्छा मोकळ्याच ठेवल्या तर? म्हणजे ती बाई असो अथवा पुरुष, मला दोन्हीची मुभा का नसावी? कधी हे नी कधी ते? कुठल्या दोन व्यक्ती काळाच्या कुठल्या टप्प्यावर सेज सोबती म्हणून एकत्र येतात ते महत्त्वाचे नाही का?⁴

मेघना पेठे स्त्री पुरुष समानतेचा आग्रह धरतात त्यात लिंगभाव समानता हीच त्यांना अभिप्रेत आहे.

आशा बगे 'भूमी' या कादंबरीत खेडे आणि महानगरात वाढलेल्या मैथिलीच्या माध्यमातून दोन समाज स्तरावर वाढलेल्या मैथिलीच्या माध्यमातून दोन समाजस्तरावर वाढलेल्या मुलींचे भाव विश्व येते. खेडे आणि

महानगर (मुंबई, मद्रास, बंगलोर) कॉलेज, विद्यापीठ या अवकाशातले अनुभव या कादंबरीत येतात.

या कादंबरीतही अनैतिक संबंध, नातेसंबंधातील विश्वासघात, माणसात भेद निर्माण करणारी धर्मव्यवस्था आदिच्या माध्यमातून आधुनिक काळातील समाजसंवेदन अशा बगे यांनी साकारलेले आहे.

पुरुषप्रधान व्यवस्था स्त्रियांच्या बाबतीत जीवनाच्या विशिष्ट टप्प्यावर विशिष्ट भूमिका स्वीकारण्याबाबत आग्रही असते. एखादी गोष्ट वेळेत झाली नाही तर त्याचे गंभीर परिणाम केवळ स्त्रीलाच भोगावे लागतात उदा. मैथिलीला आल्या विचारते, “तो लांबचा रस्ता आहे. तुझी आधीच दोन वर्षे गेलीत... लग्न केव्हा करशील? म्हणजे पैशाचा प्रश्न नाही का? तिनं विचारलं,

आहे तोच आहे मुद्दा मुलीचे एक-एक वर्ष महत्त्वाचं असतं” “फक्त मुलीचच?”⁵ मैथिलीने केलेला हा प्रश्न स्त्री-पुरुषात केला जाणारा भेदभाव अधोरेखित करतो. जीवनातील महत्त्वपूर्ण गोष्टीसाठी शिक्षण, विवाह, अपत्यप्राप्ती असलेली सीमारेषा केवळ स्त्रियांसाठी असते हे समाजसंवेदन अधोरेखित करते. एकविसाव्या शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीत येणारे समाजसंवेदन हे बहुस्तरीय आहे. समाजातील वेगवेगळ्या जातसमूहाचे चित्रण या कादंबरीतून येते. यामध्ये खेडे, शहर आणि महानगर असेच स्तर आढळतात. खेड्याची संस्कृती तेथील बदल या कादंबरीतून येतात. दलित, भटके विमुक्त, आदिवासी, कष्टकरी, वेश्या, कंपन्यामधील कार्पोरेट, महाविद्यालय, विद्यापीठ, एनजीओ इत्यादी स्तरांचे चित्र या प्रस्तुत कादंबरीतून समाजासमोर मांडताना स्त्रीवादी लेखिका दिसून येतात असे म्हणता येईल.

निष्कर्ष :

1. स्त्रियांचे जागृत झालेले आत्मभान आणि स्त्रीमुक्तीसाठी सुरु झालेले प्रयत्न स्त्रीवादी कादंबरीत दिसून येतात, असे म्हणता येईल.
2. पुरुषप्रधान व्यवस्था स्त्रियांच्या बाबतीत जीवनाच्या विशिष्ट टप्प्यावर विशिष्ट भूमिका स्वीकारण्यात आग्रही असते असे दिसून येते.
3. मेघना पेठे यांच्या ‘नातीचरामि’ या कादंबरीतील ‘लिंगभाव समानता’ हे सामाजिक संवेदनेतून अभिप्रेत आहे, असे दिसून येते.
4. एकविसाव्या शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीत येणारे ‘समाजसंवेदन’ बहुस्तरीय आहे. असे दिसून येते.

संदर्भ सूची :

1. माने रचना, “स्त्रीवाद” अक्षर दालन, कोल्हापूर डिसेंबर 2013 पृ. 20
2. महाजन वंदना, “मराठी कादंबरीतील स्त्रीवाद” स्नेहवर्धन प्रकाशन, पुणे नोव्हेंबर 2010 पृ. 19
3. महाजन कविता, “ब्र” राजहंस प्रकाशन, पुणे सातवी आवृत्ती 2010 पृ. 69.
4. पेठे मेघना, “नातीचरामि”, राजहंस प्रकाशन, पुणे सहावी आवृत्ती 2009 पृ. 195.
5. बगे आशा, “भूमी” मौज प्रकाशन गृह, चौथी आ. 2009 पृ. 63.

Email id - Pragatibelkhedeooo@gmail.com

मो.. 7378426729

मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सांस्कृतिक चेतना

राजेश कुमार साव

शोधार्थी, हिंदी भवन, विश्वभारती, शान्तिनिकेतन।

प्रस्तावना :

पराधीन भारत का संकट केवल राजनीतिक दासता तक सीमित नहीं था। सत्ता का हस्तांतरण तो एक बाह्य घटना थी, किंतु उसके भीतर एक गहरा और अदृश्य क्षरण चल रहा था—आत्मविस्मृति का क्षरण। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में भारतीय जनमानस अपनी ही परंपरा, अपने ही मूल्यों और अपने ही अतीत के प्रति संदेहग्रस्त हो उठा था। पाश्चात्य शिक्षा-पद्धति, पाश्चात्य आचार और पाश्चात्य जीवन-दृष्टि की चमक ने शिक्षित वर्ग को इस सीमा तक आकर्षित कर लिया था कि अपनी संस्कृति उसे पिछड़ी, अंधविश्वासी और त्याज्य प्रतीत होने लगी थी। वे अपनी खुली आँखों से देश को लुटते हुए देख रहे थे, परंतु जागरूकता के अभाव में मौन थे।

अंग्रेजी शासन की नीतियाँ और भारतीयों के प्रति उनका दृष्टिकोण किसी भी बुद्धिजीवी की समझ से परे नहीं था। शासक वर्ग जानता था कि किसी जाति को स्थायी रूप से दास बनाने का सबसे सरल उपाय उसे उसकी स्मृति से वंचित कर देना है। जिस जाति को अपने पूर्वजों पर गर्व नहीं रहता, वह भविष्य की कल्पना करने का साहस भी खो देती है। इसी कारण भारतीय ज्ञान-परंपरा, भारतीय दर्शन, भारतीय कला-कौशल और भारतीय सामाजिक व्यवस्था को हीन सिद्ध करने का सुनियोजित प्रयास हुआ। इसी प्रकार हिंदी साहित्य के साहित्यकारों को भी भारतीयों का यह पतन स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

ऐसे संक्रांतिकाल में द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि मैथिलीशरण गुप्त भारतीय संस्कृति को आधार बनाकर भारतीयों में जागरूकता का संचार करना चाहते थे। उनके सामने प्रश्न केवल यह नहीं था कि देश स्वतंत्र कैसे हो, अपितु यह भी था कि स्वतंत्र होने के योग्य आत्मविश्वास इस जाति में लौटे कैसे। इसीलिए वे अतीतकालीन गौरवमयी परंपराओं और मूल्यों को पुनः स्थापित करने हेतु काव्य-सृजन का कार्य करते हैं। उनका काव्य केवल शब्दों का विन्यास नहीं, वह एक सांस्कृतिक अभियान है—एक ऐसा अभियान जिसमें कविता उपदेश नहीं देती, स्मरण कराती है; और यही स्मरण उनके काव्य की सबसे बड़ी शक्ति है। प्रस्तुत शोध-आलेख में मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में अभिव्यक्त सांस्कृतिक चेतना के विविध आयामों का विश्लेषण किया गया है। इसमें यह देखने का प्रयास है कि गुप्तजी ने भारतीय संस्कृति के किन तत्वों को अपने काव्य का आधार बनाया, उन्हें किस दृष्टि से देखा और तत्कालीन समाज के समक्ष किस उद्देश्य से प्रस्तुत किया। साथ ही यह भी विवेच्य है कि उनकी सांस्कृतिक दृष्टि केवल अतीत-मोह थी अथवा उसमें सुधार और विवेक का स्वर भी सम्मिलित था।

बीज शब्द : आध्यात्म, समन्वय भावना, मानव-कल्याण, विश्वबंधुत्व, वर्णाश्रम, धर्म-व्यवस्था, परतंत्रता, क्षुब्धता बोध, हीन-भावना, पाश्चात्य संस्कृति, राष्ट्रीय चेतना, अतीत-गौरव, मातृभूमि-प्रेम, आदर्शवाद।

किसी भी संस्कृति के विकास की परंपरा दीर्घकालिक होती है। वह किसी एक व्यक्ति की कल्पना अथवा किसी एक युग की उपलब्धि नहीं होती। जब मानव जाति विकास करती है, तब स्वयं ही अपना शुद्धिकरण करते हुए कुछ विशिष्ट गुणों को महत्व देने लगती है। इन विशिष्ट गुणों को आत्मसात करने के पश्चात मनुष्य और समाज को यह गुण परंपरा के रूप में प्राप्त होते हैं। ऐसे संस्कारयुक्त गुणों को ही संस्कृति कहा जा सकता है। अर्थात् संस्कृति चयन की एक दीर्घ प्रक्रिया का परिणाम है।

सामान्य अर्थ में संस्कृति सीखे हुए व्यवहारों की संपूर्णता है। इसकी व्युत्पत्ति संस्कृत के 'कृ' धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय और 'सम्' उपसर्ग से हुई है, जिसका मूल अर्थ है- परिष्कार करना। यह परिष्कार किसी बाह्य वस्तु का नहीं, अपितु मनुष्य के आचार-विचार, धार्मिक मान्यताओं, नैतिक मूल्यों और सामाजिक मूल्यों का परिष्कार है। यही परिष्कृत रूप भारतीय संस्कृति के मूल तत्व हैं। ध्यातव्य है कि 'संस्कृति' शब्द अपने भीतर 'संस्कार' का बोध लिए हुए है, और संस्कार का अर्थ ही है- किसी वस्तु को उसके शुद्धतम और उपयोगी रूप में ले आना।

संस्कृति के अंतर्गत आने वाले मूल्यों और तत्वों में सहिष्णुता, आध्यात्म, समन्वय भावना, मानव-कल्याण, विश्वबंधुत्व, सम्मिलित परिवार पद्धति, वर्णाश्रम, धर्म-व्यवस्था, प्राचीनता का बोध, निरंतरता, ग्रहणशीलता, कर्म और पुनर्जन्म सिद्धांत में आस्था आदि सम्मिलित हैं। यह एक व्यवस्था है, जिसमें जीवन के प्रति मानव-व्यवहार के तरीकों, अनेकानेक भौतिक और अभौतिक प्रतीकों, परंपराओं और आविष्कारों को सम्मिलित किया गया है। इन तत्वों में सहिष्णुता और ग्रहणशीलता विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, क्योंकि इन्हीं दो गुणों के कारण भारतीय संस्कृति सहस्रों वर्षों की टकराहटों के बाव भी अपना अस्तित्व बचाए रख सकी।

संस्कृति प्रकृति-प्रदत्त नहीं होती, इसे समाजीकरण की दीर्घ प्रक्रिया द्वारा अर्जित किया जाता है। मनुष्य जन्म से केवल जैविक प्राणी होता है; वह सांस्कृतिक प्राणी परिवार, समाज, भाषा और परंपरा के संपर्क में आकर बनता है। यह उन संस्कारों से संबद्ध होती है, जो वंश-परंपरा एवं सामाजिक व्यवहार की विशिष्टताओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानांतरित करती है। स्थानांतरण की इसी दीर्घकालीन प्रक्रिया में संस्कृति का अस्तित्व निहित होता है। जिस दिन यह हस्तांतरण रुक जाता है, उस दिन संस्कृति जीवित परंपरा न रहकर संग्रहालय की वस्तु बन जाती है।

इस संदर्भ में रामधारी सिंह 'दिनकर' का कथन उल्लेखनीय है- "संस्कृति मानव जीवन में उसी तरह व्याप्त है, जिस प्रकार फूलों में सुगंध और दूध में मक्खन। इसका निर्माण एक या दो दिन में नहीं होता, युग-युगांतर में संस्कृति निर्मित होती है।" दिनकर का यह कथन संस्कृति की दो विशेषताओं को एक साथ स्पष्ट करता है- एक, वह जीवन से पृथक् कोई वस्तु नहीं, अपितु जीवन में घुली-मिली उपस्थिति है; और दो, वह तात्कालिक नहीं, दीर्घकालिक निर्मिति है।

यहाँ 'टी. एस. इलियट' का संस्कृति से संबंधित कथन भी उल्लेखनीय है- "शिष्ट व्यवहार, ज्ञानार्जन, कलाओं के आस्वादन इत्यादि के अतिरिक्त किसी जाति की समस्त राष्ट्रीय क्रिया एवं कला जो उसे विशिष्टता प्रदान करें, संस्कृति के अंग हैं।" इलियट संस्कृति को केवल ललित कलाओं तक सीमित नहीं मानते, अपितु जाति की समग्र जीवन-पद्धति को संस्कृति के अंतर्गत रखते हैं। भारतीय चिंतन और पाश्चात्य चिंतन- दोनों ही इस बिंदु पर सहमत हैं कि संस्कृति किसी जाति की पहचान का सबसे स्थायी आधार है। यही कारण है कि जब किसी जाति की स्वाधीनता छीननी हो, तो सर्वप्रथम उसकी संस्कृति पर प्रहार किया जाता है।

भारतीय संस्कृति का उदात्त स्वर राष्ट्रीय कवि के रूप में प्रसिद्ध एवं द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि मैथिलीशरण गुप्त की अद्वितीय रचनाओं में द्रष्टव्य है। इनके काव्य में भारतीय संस्कृति के उदात्त तत्वों और विशेषताओं का समावेश हुआ है, जो तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक दृष्टिकोण से आवश्यक भी था। कवि का यह चयन आकस्मिक नहीं था; वह अपने युग की माँग को पहचानकर किया गया सचेत चयन था।

तत्कालीन समय परतंत्रता, क्षुब्धता बोध, हीन-भावना, पाश्चात्य संस्कृति से लगाव, भ्रष्टाचार, अनैतिकता बोध, अमानवीयता, निराशा, भारतीय संस्कृति से अलगाव, परंपराओं के विघटन और राष्ट्रीय बोध के अभाव का समय था। एक ओर समाज में जड़ता और रूढ़ियाँ थीं, दूसरी ओर शिक्षित वर्ग में अपनी जड़ों से कटने की प्रवृत्ति। यह दोहरा संकट था- भीतर से क्षय और

बाहर से आक्रमण। ऐसी परिस्थिति में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त भारत की गौरवमयी संस्कृति का स्मरण कर वर्तमान की दुर्दशा के प्रति अपनी भावना व्यक्त करते हैं।

गुप्तजी की विशेषता यह है कि वे केवल विलाप नहीं करते। सुधारवादी दृष्टिकोण को स्थान देते हुए वे उन्नति के पथ पर निरंतर बढ़ते हुए अखंड भारत की कामना करते हैं। उनके अधिकांश ग्रंथों में भारतीय संस्कृति का स्वर गुंजित होता है। वे भारतीय संस्कृति के उदाहरण और विशेषताओं को अपनी कृति में प्रेरक तत्व के रूप में स्थापित करते हैं, जिसके फलस्वरूप इनकी कृतियों में स्वतः ही उत्कृष्टता उत्पन्न हो जाती है। यह उत्कृष्टता कलागत चमत्कार से नहीं, विषय की गरिमा से उत्पन्न होती है।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि गुप्तजी ने संस्कृति को कभी संकीर्ण अर्थ में नहीं लिया। उनके लिए संस्कृति किसी एक संप्रदाय, किसी एक वर्ग अथवा किसी एक कालखंड की संपत्ति नहीं थी। राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर — सभी उनके काव्य में समान आदर के साथ उपस्थित हैं। 'साकेत' में राम-कथा है, 'यशोधरा' में बुद्ध-कथा, 'जयद्रथ-वध' में महाभारत का प्रसंग और 'भारत-भारती' में समग्र भारतीय परंपरा का आख्यान। यह विविधता स्वयं इस बात का प्रमाण है कि उनकी सांस्कृतिक दृष्टि समावेशी थी।

गुप्तजी की सांस्कृतिक चेतना का प्रारंभ आत्म-परीक्षण से होता है। वे जाति के समक्ष सर्वप्रथम एक प्रश्न रखते हैं, और यह प्रश्न ही उनके संपूर्ण काव्य की धुरी बन जाता है। किसी भी जाति के पुनरुत्थान की पहली शर्त यह है कि वह स्वयं से पूछे— मैं कौन हूँ और कहाँ खड़ी हूँ। इस संदर्भ में 'भारत-भारती' की पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं—

"हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी,
आओ, विचारें आज मिलकर यह समस्याएँ सभी।
यद्यपि हमें इतिहास अपना प्राप्त पूरा है नहीं,
हम कौन थे, इस ज्ञान को, फिर भी अधूरा है नहीं।"³

इन पंक्तियों में तीन काल एक साथ उपस्थित हैं— अतीत, वर्तमान और भविष्य। कवि अतीत का उल्लेख गर्व के लिए नहीं, वर्तमान के मूल्यांकन के लिए करते हैं; और वर्तमान का मूल्यांकन विलाप के लिए नहीं, भविष्य के निर्माण के लिए। 'आओ, विचारें आज मिलकर' में जो सामूहिकता का आह्वान है, वह इस काव्य को व्यक्तिगत अभिव्यक्ति से उठाकर जातीय संवाद बना देता है। साथ ही अंतिम पंक्ति में कवि यह स्वीकार करते हैं कि लिखित इतिहास भले अपूर्ण हो, आत्म-ज्ञान अपूर्ण नहीं है— अर्थात् परंपरा की स्मृति दस्तावेजों से अधिक गहरी वस्तु है।

गुप्तजी अपनी रचनाओं में अतीत और वर्तमान के बीच तुलनात्मक विवेचन करते हुए क्षुब्ध परिस्थिति और अचेतन समाज को फिर से समृद्धि के शिखर पर स्थापित करने का सराहनीय प्रयास करते हैं। उनकी यह तुलनात्मक पद्धति अत्यंत प्रभावशाली है, क्योंकि इससे पाठक के मन में स्वयं ही यह प्रश्न उठता है कि जो जाति कभी शिखर पर थी, वह आज इस स्थिति में क्यों है। इसका एक उदाहरण निम्नवत है—

"यह पुण्य भूमि प्रसिद्ध है इसके निवासी आर्य हैं,
विद्या कला कौशल सबके जो प्रथम आचार्य हैं।
संतान उनकी आज यद्यपि हम अधोगति में पड़े,
पर चिह्न उनकी उच्चता के आज भी कुछ हैं खड़े।"⁴

उपरोक्त पंक्तियों में भारतवर्ष की भूमि एवं विद्या-कला में प्रथम आचार्य होने का गौरव एवं हमारी अतीतकालीन समृद्धि है, जिसे गुप्तजी ने सुकुशल प्रेषित किया है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि कवि वर्तमान की अधोगति को छिपाते नहीं, स्पष्ट स्वीकार करते हैं— 'हम अधोगति में पड़े'। किंतु इसी स्वीकार के साथ वे आशा का सूत्र भी थमा देते हैं— 'पर चिह्न उनकी उच्चता के आज भी कुछ हैं खड़े'। अर्थात् पतन पूर्ण नहीं है, अभी बीज शेष है, और बीज शेष है तो वृक्ष पुनः संभव है। यही आशावाद गुप्तजी की सांस्कृतिक चेतना का प्राण है।

भारतीय संस्कृति में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' में आस्था प्राचीन काल से रही है। यह केवल एक सुभाषित नहीं, अपितु एक जीवन-दृष्टि है, जो मनुष्य को अपने परिवार, ग्राम, जाति और राष्ट्र की सीमाओं से आगे ले जाकर संपूर्ण विश्व से जोड़ती है। इस कारण भारत के निवासियों ने संपूर्ण विश्व को एक परिवार मानकर विशाल और भेद-भाव मुक्त चिंतन-धारा को आत्मसात किया है।

यहाँ यह प्रश्न स्वाभाविक है कि पराधीनता के काल में, जब राष्ट्रीय अस्मिता को जगाना कवि का प्रमुख लक्ष्य था, तब विश्वबंधुत्व की बात क्यों? इसका उत्तर गुप्तजी की सांस्कृतिक दृष्टि की गहराई में मिलता है। उनका राष्ट्रवाद संकुचित नहीं था। वे यह मानते थे कि जो जाति संपूर्ण विश्व को परिवार मानने की सामर्थ्य रखती है, वह हीन कैसे हो सकती है। अर्थात् विश्वबंधुत्व स्वयं में भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता का प्रमाण है, और इस प्रमाण का स्मरण ही आत्मगौरव का जनक बनता है।

"यशोधरा" चंपू काव्य में यशोधरा-राहुल संवाद में गौतम बुद्ध की चिंतन-धारा के माध्यम से गुप्तजी ने संपूर्ण विश्व को एक परिवार मानने पर आस्था व्यक्त की है। इस प्रसंग की मार्मिकता यह है कि जो पत्नी अपने पति के गृह-त्याग से सर्वाधिक आहत है, वही पुत्र के समक्ष उस त्याग की व्याख्या करती है— और वह व्याख्या शिकायत की नहीं, गौरव की है। जिसका परिचय 'यशोधरा' में मिलता है—

"बेटा, घर छोड़ वे गए हैं अन्य दृष्टि से,
जोड़ लिया नाता है उन्होंने सब सृष्टि से।
हृदय विशाल और उनका उदार है,
विश्व को बनाना चाहता जो परिवार।"⁵

इन पंक्तियों में गृह-त्याग का अर्थ पलायन नहीं, विस्तार है। कवि यह संकेत देते हैं कि जो संबंध टूटा प्रतीत होता है, वह वस्तुतः विस्तृत हुआ है— एक घर छूटा और समस्त सृष्टि से नाता जुड़ गया। यहाँ भारतीय संस्कृति की वह उदारता प्रतिफलित होती है जो व्यक्तिगत सुख से ऊपर लोक-कल्याण को रखती है। साथ ही यशोधरा के चरित्र के माध्यम से कवि यह भी दिखाते हैं कि इस विशाल दृष्टि को समझने और सहन करने की सामर्थ्य भारतीय नारी में रही है— जो स्वयं में सांस्कृतिक श्रेष्ठता का प्रमाण है।

भारतीय संस्कृति में अतिथि को देवता के तुल्य माना गया है। 'अतिथि देवो भव' की यह भावना केवल शिष्टाचार नहीं, अपितु त्याग की उस पराकाष्ठा की सूचक है जहाँ मनुष्य अपनी आवश्यकता से पहले दूसरे की आवश्यकता को रखता है। गुप्तजी ने इस परंपरा को स्मरण कराने के लिए पौराणिक आख्यानों का सहारा लिया है। इस संदर्भ में 'भारत-भारती' की निम्नलिखित पंक्तियाँ प्रासंगिक हैं—

"सर्वस्व करके दान जो चालीस दिन भूखे रहे,
अपने अतिथि-सत्कार में फिर भी न जो सूखे रहे।
पर-तृप्ति कर निज-तृप्ति मानी रंतिदेव नरेश ने,
ऐसे अतिथि-संतोष-कर पैदा किये किस देश ने?"⁶

रंतिदेव का यह आख्यान भारतीय त्याग-परंपरा का चरम उदाहरण है यह अलंकारिक प्रश्न पाठक के मन में गर्व का संचार करता है और साथ ही एक मौन तुलना भी प्रस्तुत करता है। जिस युग में भारतीय अपनी संस्कृति को हीन मान रहे थे, उस युग में ऐसे उदाहरण केवल स्मृति नहीं थे, वे प्रतिरोध के उपकरण थे। 'पर-तृप्ति कर निज-तृप्ति मानी'— इस एक पंक्ति में भारतीय नैतिकता का संपूर्ण सार निहित है।

भारतीयों द्वारा अपनी संस्कृति के प्रति हीन दृष्टिकोण को देखकर गुप्तजी चिंतित थे। यह चिंता उनके काव्य में ही नहीं, उनके गद्य-वक्तव्यों में भी प्रकट होती है। इसीलिए वे 'भारत-भारती' की भूमिका में लिखते हैं कि— "क्या हम लोग अवनति में ही पड़े रहेंगे? देखते-देखते जंगली जातियाँ तक उठकर हमसे आगे बढ़ जाएँ और हम वैसे ही पड़े रहें, इससे अधिक दुर्भाग्य की बात क्या हो सकती है? क्या हम लोग अपने मार्ग से यहाँ तक हट गए हैं कि अब उसे पा ही नहीं सकते? क्या हमारी सामाजिक अवस्था इतनी बिगड़ गई है कि वह सुधारी ही नहीं जा सकती? क्या सचमुच हमारी यह निद्रा चिर निद्रा है?"⁷

इस उद्धरण में प्रश्नों की जो शृंखला है, वह आकस्मिक नहीं। कवि उत्तर नहीं देते, वरन प्रश्न पूछते हैं— क्योंकि वे जानते हैं कि जिस जाति को जगाना हो उसे उत्तर नहीं, प्रश्न करना चाहिए। उत्तर देने से पाठक श्रोता बना रहता है, प्रश्न पूछने से वह भागीदार बन जाता है।

गुप्तजी चिर निद्रा से समाज और देशवासियों को जगाकर भारतीय संस्कृति के पटल पर एक ऐसे समाज और देश की कल्पना को साकार करना चाहते हैं, जो भारतीय संस्कृति की भाँति उदात्त तत्वों से युक्त हो। यहाँ ध्यातव्य है कि उनका लक्ष्य अतीत की पुनरावृत्ति नहीं, अतीत के मूल्यों की पुनःप्रतिष्ठा है। वे यह नहीं चाहते कि समाज पीछे लौट जाए; वे यह चाहते हैं कि समाज उन मूल्यों को लेकर आगे बढ़े जिनके कारण वह कभी श्रेष्ठ था।

गुप्त अपनी रचनाओं में भारतीय संस्कृति, सभ्यता, आदर्श—जीवन, प्राचीन कला—कौशल आदि को स्थान देते हैं, जिसके परिचय से भारतीयों में आत्मगौरव और स्वाभिमान के भाव का उदय होता है। इसके अतिरिक्त गुप्तजी आनंद के साथ पालन करने वाले पर्व एवं उत्सवों को भी काव्य में स्थान देते हैं, जिससे हम पाश्चात्य ग्रंथों को पढ़कर दिग्भ्रमित न हो सकें। पर्व और उत्सव संस्कृति के सबसे जीवंत रूप हैं, क्योंकि वे शास्त्र में नहीं, जन—जीवन में जीवित रहते हैं।

पराधीन भारत में अंग्रेजों ने हिंदू धर्म और संस्कृति को हीन बताकर भारतीयों को वन्य—जीव तुल्य बर्बर स्थापित करने का प्रयास किया। अतः अपनी संस्कृति और सभ्यता का ज्ञान होना आवश्यक मुद्दों में स्थान प्राप्त कर चुका था। यह केवल शैक्षणिक आवश्यकता नहीं थी, यह अस्तित्व की आवश्यकता थी।

प्राचीन काल से ही मातृभूमि के प्रति प्रेम और समर्पण का भाव भारतवासियों में निहित रहा है। भूमि को माता कहने की परंपरा भारतीय चिंतन की अपनी विशेषता है— यहाँ भूमि केवल संपत्ति नहीं, संबंध है। इन भावों की उत्पत्ति भारतीय संस्कृति से हुई है। जिनका पुनः स्मरण कर वे जागृति का शंखनाद करते हैं।

अपनी रचना 'रंग में भंग' के मुख्य पात्र महाराजा कुंभा के माध्यम से भारतीय संस्कृति के तत्वों का पुनर्गठन करते हैं, जिनका उदाहरण निम्नवत है—

"स्वर्ग से भी श्रेष्ठ जननी जन्मभूमि कही गई,
सेवनीया है सभी को वह महा महिमामयी।
फिर अनादर क्या उसी का मैं खड़ा देखा करूँ,
भीरु हूँ मैं अहो ! जो मृत्यु से मन में डरूँ ?"⁸

इन पंक्तियों में 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' की प्राचीन उक्ति काव्य—रूप में पुनर्जीवित होती है। किंतु गुप्तजी इसे केवल दोहराते नहीं, उसमें कर्तव्य का आयाम जोड़ देते हैं। यदि जन्मभूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है, तो उसका अनादर मौन होकर देखते रहना अक्षम्य है। अंतिम पंक्ति में जो आत्म—भर्त्सना है— 'भीरु हूँ मैं अहो !' वह वस्तुतः प्रत्येक पाठक के लिए है। कवि नायक के मुख से स्वयं को धिक्कार दिलाकर पाठक के भीतर लज्जा और साहस दोनों का संचार करते हैं। यही सांस्कृतिक चेतना का राजनीतिक रूपांतरण है।

यहाँ यह भी रेखांकित करना आवश्यक है कि गुप्तजी की राष्ट्रीय चेतना का आधार सांस्कृतिक है, राजनीतिक नहीं। वे किसी दल, किसी आंदोलन अथवा किसी तात्कालिक कार्यक्रम के कवि नहीं हैं। उनका राष्ट्र भूगोल से अधिक एक सांस्कृतिक इकाई है— मूल्यों, स्मृतियों और परंपराओं की इकाई। इसीलिए उनका काव्य अपने युग के साथ समाप्त नहीं होता।

गुप्तजी की सांस्कृतिक चेतना का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष नारी—विषयक दृष्टि है। वे समाज में व्याप्त अव्यवस्था और नारी की दुर्दशा को देखते हुए वैदिक युग में नारी की अच्छी और सम्माननीय स्थिति से भारतवासियों का परिचय करवाते हैं, जिससे कि देश में उन्नति एवं समाज में नारी की स्थिति में सुधार लाया जा सके। यहाँ उनकी पद्धति पुनः वही है— सुधार का आधार बाहर से नहीं, अपनी ही परंपरा के भीतर से लिया गया है। वे यह नहीं कहते कि नारी को सम्मान देना पाश्चात्य आदर्श है; वे यह कहते हैं कि नारी का सम्मान हमारा अपना, विस्मृत आदर्श है।

यह दृष्टि सांस्कृतिक पुनर्जागरण की दृष्टि से अत्यंत प्रभावशाली है। जब सुधार को विदेशी बताया जाता है तो समाज उसका प्रतिरोध करता है; किंतु जब वही सुधार अपनी परंपरा की पुनर्स्थापना के रूप में प्रस्तुत होता है, तो समाज उसे सहज स्वीकार कर लेता है। गुप्तजी इसी मनोविज्ञान को समझते थे।

आहत गुप्तजी स्वतंत्र व्यक्तित्व के अन्वेषण में संघर्ष कर रही नारी के माध्यम से समाज की रूढ़ परंपराओं का खंडन करते हैं। उनके काव्य की नारी न तो केवल करुणा की पात्र है और न केवल आदर्श की प्रतिमा; वह विचार करती है, प्रश्न करती है और अपने अस्तित्व का दावा प्रस्तुत करती है। जिसका उदाहरण इनकी कृति "अर्जुन और विसर्जन" में देखने को मिलता है—

"नहीं चाहते हम धन वैभव, नहीं चाहते हम अधिक अधिकार।

बस स्वतंत्र रहने दो हमको, और स्वतंत्र रहे संसार ॥"⁹

इन पंक्तियों की माँग अत्यंत संयत किंतु मूलगामी है। यहाँ न धन की कामना है, न वैभव की, न अधिकार की—केवल स्वतंत्रता की। और यह स्वतंत्रता आत्मकेंद्रित नहीं है, क्योंकि दूसरी ही पंक्ति में कवि जोड़ देते हैं—'और स्वतंत्र रहे संसार'। अर्थात् अपनी स्वतंत्रता की कामना दूसरों की स्वतंत्रता की कामना से पृथक् नहीं। यहाँ नारी—मुक्ति, राष्ट्र—मुक्ति और विश्व—मुक्ति एक ही स्वर में गुँथ जाती हैं। भारतीय संस्कृति की समन्वय-भावना का इससे सुंदर काव्यात्मक रूप दुर्लभ है।

गुप्तजी के काव्य में उर्मिला, यशोधरा, विष्णुप्रिया जैसी उपेक्षित नारी-चरित्रों को केंद्र में लाना भी इसी सांस्कृतिक पुनर्मूल्यांकन का अंग है। परंपरा में जिन स्वरों को अनसुना कर दिया गया था, कवि उन्हें वाणी देते हैं। यह अतीत के प्रति अंधश्रद्धा नहीं, अपितु अतीत के साथ सजीव संवाद है—और यही किसी भी जीवित संस्कृति का लक्षण है।

'विनय' शीर्षक कृति में कवि भारतीय संस्कृति और परंपराओं को आत्मसात करने का अनुरोध करते हैं, जिससे भारतवर्ष को पुनः पुण्यभूमि बनाया जा सके। यहाँ कवि की भाषा आदेश की नहीं, प्रार्थना की है और यह भाषिक चयन भी सांस्कृतिक है, क्योंकि भारतीय परंपरा में परिवर्तन की कामना सदैव विनय के साथ व्यक्त हुई है।

वे माता सरस्वती से निवेदन करते हैं कि भारतवर्ष को अतीत की भाँति विद्या, चरित्रवृत्ता, ओज, तेज, उत्साह, उद्योग, व्यवसाय व कला—कौशल से पोषित कर उन्नति के शिखर पर पुनः स्थापित कर दें। ध्यान देने योग्य है कि इस प्रार्थना में जिन तत्वों की माँग है, वे केवल आध्यात्मिक नहीं हैं—उद्योग और व्यवसाय भी उसमें सम्मिलित हैं। अर्थात् गुप्तजी की सांस्कृतिक कल्पना भौतिक उन्नति की विरोधी नहीं। वे यह मानते हैं कि विद्या और चरित्र के साथ यदि उद्योग और व्यवसाय भी हों, तभी राष्ट्र पूर्ण रूप से समृद्ध होता है। यह दृष्टि उन्हें मात्र अतीतजीवी कवि नहीं रहने देती।

भारतीय संस्कृति में मूर्ति-पूजा का विशेष महत्व है। मूर्ति की पूजा करने हेतु सोलह प्रकार माने गए हैं। गुप्तजी की आस्था इस बात पर थी कि निराकार ईश्वर की पूजा संभव नहीं, अपितु ईश्वर का प्रतीक रखना आवश्यक है। यदि मनुष्य प्रतीक रूप में ईश्वर की कल्पना नहीं करता है, तब वह अपने भावों को स्तुतियों के रूप में अनुभव करने में असमर्थ हो जाता है। प्रार्थनाएँ मन में ही रह जाती हैं।

यह तर्क अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि तत्कालीन काल में मूर्तिपूजा पर सर्वाधिक आक्रमण हुआ था। उसे अंधविश्वास और आदिमता का प्रमाण बताया गया था। गुप्तजी इसका उत्तर धार्मिक आग्रह से नहीं, मनोवैज्ञानिक तर्क से देते हैं। मनुष्य का मन मूर्त के माध्यम से ही अमूर्त तक पहुँचता है। मूर्ति-कला के कारण मनुष्य अपने भावों को व्यक्त कर पाने में सहज अनुभव करता है। इसीलिए मूर्ति-पूजा के महत्व को स्थापित करते हुए राष्ट्रकवि अपनी कृति 'भारत-भारती' में कहते हैं—

"होता न मूर्ति-विधान यदि साधन हमारे देश का

पूजन न षोडश विधि यहाँ होता सुगुण सर्वेश का।

अनुभव न होता एक सीमा में असीमाधार का,

होता निदर्शन भी न उस हृदयस्थ रूपोद्धार का ॥"¹⁰

' एक सीमा में असीमाधार का अनुभव'— यह पदावली भारतीय प्रतीक-चिंतन का सारांश है। मूर्ति स्वयं ईश्वर नहीं, वह ससीम में असीम को अनुभव करने का साधन है। कवि यहाँ मूर्तिपूजा को अंधविश्वास के रूप में नहीं, कला और अनुभूति के शास्त्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं। यह उनकी सांस्कृतिक व्याख्या-शक्ति का श्रेष्ठ उदाहरण है।

भारत और भारतीय संस्कृति में वेद, रामायण, महाभारत, गीता आदि ग्रंथों का विशेष महत्व है। ये ग्रंथ केवल धार्मिक साहित्य नहीं, अपितु भारतीय जीवन-दृष्टि के आधार-स्तंभ हैं। इनके पठन-पाठन से आदर्श मूल्यों का स्पंदन होता है। इसीलिए इसके पठन के महत्व को आलोचित करते हुए वे 'भारत-भारती' में कहते हैं —

"श्रद्धा सहित किस भाँति हरि का पूजन हो रहा,
वर वेद-मंत्रों में मनोहर कृति-कूजन हो रहा।
अखिलेश की उस अर्घ्यहारिणी आरती को देख लो,
असमर्थ मूक समान, मुखरा भारती का देख लो।"¹¹

इन पंक्तियों में वेद-मंत्रों के 'कूजन' का बिंब विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कूजन पक्षियों के स्वाभाविक स्वर के लिए प्रयुक्त होता है — अर्थात् कवि वेद-पाठ को कृत्रिम कर्मकांड नहीं, अपितु प्रकृति के सहज संगीत के समान मानते हैं। यहाँ ज्ञान-परंपरा को शुष्क शास्त्रीयता से मुक्त कर सौंदर्य के धरातल पर प्रतिष्ठित किया गया है। अंतिम पंक्ति में 'मुखरा भारती' का उल्लेख इस बात का संकेत है कि भारतीय वाणी असमर्थ अथवा मूक नहीं है; वह मुखर है, बस उसे सुनने वाले कान चाहिए।

हमारी पौराणिक कथाओं के माध्यम से कवि मैथिलीशरण गुप्त आदर्श को पुनः स्थापित करना चाहते हैं। आदर्श पिता, आदर्श पुत्र, आदर्श पत्नी आदि के माध्यम से तत्कालीन समाज की दुर्व्यवस्था को व्यवस्थित करने की प्रेरणा इनके काव्य से मिलती है। उनका विश्वास था कि समाज का सुधार संस्थाओं के परिवर्तन से पूर्व व्यक्ति के चरित्र-निर्माण से होता है, और चरित्र-निर्माण के लिए आदर्श-चरित्रों की उपस्थिति अनिवार्य है।

यही कारण है कि गुप्तजी ने अपने काव्य के लिए ऐसे चरित्रों का चयन किया जो जन-स्मृति में पहले से उपस्थित थे। नया आदर्श गढ़ने की अपेक्षा विस्मृत आदर्श का स्मरण कराना अधिक प्रभावशाली होता है, क्योंकि उसमें परंपरा का बल स्वतः जुड़ जाता है। राम का पितृ-भक्ति, भरत का त्याग, उर्मिला का धैर्य, यशोधरा की उदारता पाठक के मन में नैतिक मानदंड की भाँति कार्य करते हैं।

इन्होंने संस्कृति का अनुसरण करते हुए नैतिकता और अनैतिकता के मापदंड पर विचार किया है। वे कहते हैं कि ऐसी स्थिति में मनुष्य को हंस की भाँति कार्य करना चाहिए। जिस प्रकार हंस पानी मिश्रित दूध में से दूध को ग्रहण करता है, उसी प्रकार मनुष्य को संस्कृति का पालन करते हुए मौलिक और उचित मूल्यों को ग्रहण कर रूढ़ियों का त्याग करना होगा।

गुप्तजी की सांस्कृतिक चेतना का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष यही है कि वह अंधानुकरण की चेतना नहीं है। यदि उनका काव्य केवल अतीत का गुणगान करता तो वह प्रतिक्रियावादी सिद्ध होता। किंतु वे परंपरा और रूढ़ि के बीच स्पष्ट भेद करते हैं। परंपरा वह है जो जीवन को दिशा देती है; रूढ़ि वह है जो जीवन को जकड़ती है। इस संदर्भ में 'भारत-भारती' की पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं—

"प्राचीन हो कि नवीन, छोड़ो रूढ़ियाँ जो हों बुरी,
बनकर विवेकी तुम दिखाओ हंस जैसी चातुरी।
प्राचीन बातें ही भली हैं, यह विचार अलीक है,
जैसी अवस्था हो जहाँ वैसी व्यवस्था ठीक है।"¹²

ये चार पंक्तियाँ गुप्तजी की संपूर्ण सांस्कृतिक दृष्टि का सार-संक्षेप हैं। यहाँ कवि स्पष्ट घोषित करते हैं कि प्राचीनता स्वयं में कोई गुण नहीं वो प्राचीन बातें ही गुण हैं। यह वाक्य किसी भी अतीत-मोही चिंतन का सीधा खंडन है। कवि का मानदंड काल नहीं, उपयोगिता और विवेक है। वह वस्तु ग्राह्य है जो हितकर हो, चाहे वह प्राचीन हो अथवा नवीन; और वह त्याज्य है जो अहितकर हो, चाहे वह कितनी ही पुरानी क्यों न हो।

अंतिम पंक्ति- 'जैसी अवस्था हो जहाँ वैसी व्यवस्था ठीक है' अर्थात् देश-काल-परिस्थिति के अनुसार व्यवस्था के परिवर्तन को स्वीकार करती है। यह भारतीय चिंतन की उस लचीली और ग्रहणशील प्रवृत्ति का काव्यात्मक रूप है, जिसके कारण यह संस्कृति सहस्रों वर्षों तक जीवित रह सकी।

इस प्रकार गुप्तजी की सांस्कृतिक चेतना में तीन स्तर स्पष्ट दिखाई देते हैं। प्रथम स्तर स्मरण का है, जिसमें कवि जाति को उसका विस्मृत गौरव लौटाते हैं। द्वितीय स्तर आत्म-परीक्षण का है, जिसमें वे वर्तमान की दुर्दशा का निर्भीक अंकन करते हैं। और तृतीय स्तर विवेक का है, जिसमें वे परंपरा में से ग्राह्य और त्याज्य का पृथक्करण करते हैं। ये तीनों स्तर मिलकर उनके काव्य को केवल भावुक राष्ट्रगान न बनाकर एक विचारशील सांस्कृतिक विमर्श बना देते हैं।

गुप्तजी की सांस्कृतिक चेतना का विवेचन उनकी भाषा-दृष्टि के उल्लेख के बिना अधूरा रहेगा। द्विवेदी युग की जिस खड़ी बोली को उन्होंने अपनाया, वह उस समय काव्य-भाषा के रूप में अभी स्थिर नहीं हुई थी। ब्रजभाषा की परंपरा प्रबल थी। ऐसी स्थिति में खड़ी बोली को काव्य-भाषा बनाना स्वयं एक सांस्कृतिक निर्णय था, क्योंकि इसका उद्देश्य कविता को विद्वानों के वृत्त से निकालकर सामान्य जन तक पहुँचाना था।

उनकी भाषा में संस्कृत की गरिमा है, किंतु दुर्बोधता नहीं। वे तत्सम शब्दों का प्रयोग करते हैं, परंतु वाक्य-रचना सरल रखते हैं। छंद प्रायः सरल और गेय हैं, जिससे पंक्तियाँ सहज ही स्मृति में बैठ जाती हैं। यह शैलीगत सरलता आकस्मिक नहीं। जिस कवि का लक्ष्य जन-जागरण हो, उसके लिए संप्रेषणीयता कला से अधिक महत्वपूर्ण होती है। यही कारण है कि 'भारत-भारती' की पंक्तियाँ अपने युग में सभा-मंचों पर, विद्यालयों में और घर-घर में दोहराई गईं।

यह भी उल्लेखनीय है कि गुप्तजी ने कथा-काव्य की परंपरा को अपनाकर सांस्कृतिक संदेश को रोचक बनाया। उपदेश शुष्क होता है, कथा सरस। जब आदर्श किसी चरित्र के जीवन में घटित होता हुआ दिखाई देता है, तब वह पाठक के हृदय में उतर जाता है। यही भारतीय आख्यान-परंपरा की भी विशेषता रही है, और गुप्तजी ने उसे आधुनिक हिंदी काव्य में सफलतापूर्वक पुनर्जीवित किया।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रकवि के साथ-साथ भारतीय संस्कृति के भी प्रतिनिधि कवि हैं। इनकी अधिकांश कृतियों का आधार महाभारत, रामायण, आध्यात्मिक गीत, पौराणिक आख्यान आदि रहे हैं, जिनके ज्ञान से आत्मविश्वास का संचार होता है।

भारतीय संस्कृति की उदात्त परंपराओं को जीवन में स्थान देने से संस्कृति की भाँति भारतवासी का जीवन भी उच्च गुणयुक्त और सुव्यवस्थित हो सकता है। संस्कृति से पलायन पतन के गर्त में ले जाता है, इसलिए संस्कृति का पालन आवश्यक है। भारतवासी के लिए उनकी संस्कृति का पालन इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि वह मूल्यों की संचित निधि है, जिसके ज्ञान से आदर्श देश की कल्पना को यथार्थ में परिणत कर पाना संभव है।

किंतु गुप्तजी की सबसे बड़ी देन यह है कि उन्होंने संस्कृति को जड़ वस्तु नहीं माना। उनके काव्य में परंपरा का सम्मान है, परंतु रूढ़ि का प्रतिकार भी है; अतीत का गौरव है, परंतु वर्तमान की आलोचना भी है; राष्ट्र का उद्घोष है, परंतु विश्वबंधुत्व की उदारता भी है। यही संतुलन उन्हें अपने युग के अन्य राष्ट्रीय कवियों से पृथक् और विशिष्ट बनाता है।

अतः कहा जा सकता है कि मैथिलीशरण गुप्त का काव्य भारतीय सांस्कृतिक चेतना का काव्यात्मक दस्तावेज है। वह उस काल की देन है जब एक जाति को अपने ही परिचय की आवश्यकता थी। आज परिस्थितियाँ बदल चुकी हैं, पराधीनता समाप्त हो चुकी है, किंतु आत्मविस्मृति का संकट भिन्न रूपों में आज भी उपस्थित है। इस दृष्टि से गुप्तजी का काव्य केवल ऐतिहासिक महत्व की वस्तु नहीं, अपितु वर्तमान के लिए भी प्रासंगिक है। वह हमें यह स्मरण कराता है कि जो जाति अपनी संस्कृति को जानती है, वही अपना भविष्य गढ़ने का अधिकार रखती है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. नागौरी. एस. एल., भारतीय संस्कृति का विकास, मालिक एंड कंपनी, जयपुर, पृष्ठ – 17
2. वही, पृष्ठ – 14
3. गुप्त मैथिलीशरण, भारत-भारती, लोकभारती प्रकाशन – इलाहाबाद – 211001, (2012), पृष्ठ – 14
4. वही, पृष्ठ – 15
5. गुप्त मैथिलीशरण, यशोधरा, रतन प्रकाश मंदिर, आगरा (1932), पृष्ठ – 39
6. गुप्त मैथिलीशरण, भारत-भारती, लोकभारती प्रकाशन – इलाहाबाद – 211001, (2012), पृष्ठ – 19
7. वही, पृष्ठ – 08
8. गुप्त मैथिलीशरण, रंग में भंग, साहित्य सदन, झाँसी, (1910), पृष्ठ – 22
9. गुप्त मैथिलीशरण, अर्जुन और विसर्जन, साहित्य सदन, झाँसी, (1942), पृष्ठ – 23
10. गुप्त मैथिलीशरण, भारत-भारती, लोकभारती प्रकाशन – इलाहाबाद – 211001, (2012), पृष्ठ – 57
11. वही, पृष्ठ – 68
12. वही, पृष्ठ – 170

मो. : 7001504369

E-Mail – rajeshshaw720@gmail.com



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 38-45

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREE D RESEARCH JOURNAL

RESHAPING OF CONSUMER BEHAVIOUR WITH EMERGENEC OF ONLINE MARKET AND AI

Dr. Ramesh Kumar Chouhan, Assistant Professor,

Poonam Bishnoi, Research Scholar,

Department of Business Administration, Jai Narain Vyas University.

Abstract :

The swiftest changing industry in the today's era is E-Commerce, with enormous shift in the area of consumer shopping from physical or offline stores/platform to online or electronic platform or e-commerce. With an explosion of internet era and big-data analysis the traditional way of retailing, statistics, promotions and data analysis become outdated. Artificial Intelligence (AI) has appeared to be a more sophisticated way of decision making by the way of processing and analyzing the data. AI can provide with more accuracy the analysis of massive data and predictions. Natural language processing, vision, machine learning, robotics, expert system, voice and planning are Artificial Intelligence's main branch, that a business or industry employs to stay forward in the market. AI and internet has transformed the way in which a business and consumer interacts in the market. Buying experience to be more personalized, virtual try-on of the products, data privacy, easy, various and fast payment methods, buying assistance, comparison in between various products at real time, chat-bots, notification for new stock update, availability of more personalized products, effortless shopping, maintaining list for the monthly groceries that saves energy and time of consumers, etc. Easy product availability have also upgraded the threat of the concept of consumerism, which in-turn have effect on the natural environment and existence of human. Artificial Intelligence is on growth but it still requires more and more efforts to become sensible and smart consumer.

Keywords : Artificial Intelligence, Consumer Psychology, Impact, Marketing, Consumer Behavior, Consumerism.

Introduction :

Artificial Intelligence is creating revolution in consumer behaviour by providing more

personalized experiences, optimizing strategies for marketing and raising concern for privacy of data of consumer. AI have enhanced the consumer behaviour by providing personalized experience to consumers based on their history and preferences. Consumer engagement is increased by chatbots, virtual assistance and other available technologies. The increasing use of AI in Marketing and Advertising have created a need to understand the topic and have more and more depth knowledge about it. AI is acquiring explosive growth in marketing field, still there is no specific studies covering holistically and comprehensively the knowledge that is produced on Artificial Intelligence in the related fields of consumer research, marketing and human psychology. The continuously changing technology, growing knowledge of consumers and competition have made it more and more important to have continuous authentic research in the field of AI and its impact on consumer behavior. The AI's transformative potential extends beyond the individual business, which projects such growth that will lead to contribution to global economy of about \$15 trillion till 2030. AI helps marketers by empowering them to influence and forecast behavior of consumers across entire purchase journey by retrieval of consumer past purchase information, need identification to evaluation of purchase decision and post-purchase engagement. Businesses should focus on exploring more about the development and implementation of Artificial Intelligence based technologies and hybrid techs such as data mining, robotics, social AI, analytics, and AI based communications to enhance their performances, customer value and marketing processes. Retailers should use more machine learning tools to analyze information in large sets to personalize services to customers.(Maria Et al.(2024))

Research Methodology :

This is a study of previously done various academic researches, reports of various industries, surveys, case studies and industry and academic experts insights. This a multifaceted research, which used secondary data to find out extent of integration of AI in business arens specially consumer relationship and impact of AI technology on psychology of consumers. Both quantitative and qualitative datas are used in this research study.

Objective of Study :

This research is done with an objective of investigating the impact that has been made by AI on consumer psychology and changing behaviour of consumers while making buying decisions. This research tries to provides evidence based and comprehensive analysis of opportunities, challenges and best practices that may be followed by business houses to make strategies according to changing consumer psychology. This study is aimed to :

- To determine the pioneers of change in consumer behaviour in digital-era,
- Examine the effect of AI-Integrated tools on marketing in field of studying buying behavior of

consumers.

- To study available literature and analyze it for future research guidance.
- Analyzing the impact of social media platform on consumer buying behaviour.
- Examining the ways in which consumer buying pattern have changed after evolution of machine learning and algorithms.
- Examining the impact of AI-Integrated marketing on growth of consumerism.

Literature Review:

Varsha Jain, (2023) along with her co-authors in their research article found that AI advancement has drastically transformed consumer behaviour, by interacting with consumers on multiple platforms and touchpoints. It became so much difficult to understand how consumer behaviour is being affected by AI in terms of attitude, personality, decision making, trust and engagement. This research also developed a TCM-ADO analysis and thematic framework for advancement in future research directions that will have implications for society and industry. Ms .Abraham, (2023) in his research study shows that the evolution of AI based behavioural marketing seems to take off high. Personalised feeds, chatbots, and machine learning tools which tracks consumer behaviour have turned the marketing's world upside-down. Its now essential for business to use AI-Driven solutions for growth in this competitive world. Adam and Taewoo (2023) in their research study found that the emergence of AI technology in past years have major impact on consumer behaviour in each industry. They provides the current state of art in AI based consumer research and also concludes the key issues for importance of research in future. Ali and Shoaleh (2023) in their research study found multifaceted impact Artificial Intelligence on trends and design innovations and shift in behavior of consumers. They also seek to find the main concepts of AI's impact on these domains, with providing the insights into the way how Artificial Intelligence is reshaping design practices, market dynamics and consumer interactions. Their study also underscores the value of ethical considerations, personalized experiences and consumer trust in leveraging Artificial Intelligence's potential.

The study done by Zhang et.al. (2022) also enriches our knowledge by examining reactions of consumers to AI designs. This research concludes how consumers are willing to bear the cost for AI-designed products. Their article also defines the importance of design consideration in artificial intelligence development, with a direct impact on consumer decision making process and it to highlight the need for designers to create such AI designs that positively creates consumer perceptions and expectation. A study conducted by Xulong Dai and Qian Liu (2024) reveals that the personalization driven by AI have significantly enhanced the consumer satisfaction and purchase intention. AI have most prominent impact on consumer's purchase intention, that is followed by effectiveness of chatbot,

and then engagements in social media platform. This study also guides retailers to harness new AI technologies effectively and ethically to improve competitive advantages, drive long term success and improve customer satisfaction. A study by Mussa in 2020, found that utilization of Artificial Intelligence in each stage of consumer journey that form need recognition to post buying behaviour, can significantly predict. This study found that chatbot provides assistance for real time, they answer all queries and also offers product recommendations with enhancing consumer satisfaction and consumer engagement. Khurana and Jain (2022) in their research study explored the relationship between consumer behavior and Artificial Intelligence enabled chatbots. They too emphasised the significance of chatbots in the enhancement of pre-buying, buy and even post-buying experiences.

This research study also suggest that chatbots provide immediate support and personalized interactions and plays a vital role in impacting customer decisions and allaround experience of consumer. Marcello and et. al.(2021) provides in their study the overview about the emerging intellectual structure of Artificial Intelligence research in the three bodies of literature are examined. Their study also recognizes tropical clusters, in the number of 8 like decision making and cognitive process, neural network, memory and computational logic, technology acceptance and adoption etc. Murugan and Mahesh (2024) in their study found that AI driven system have significant impact on purchasing decision of consumers. Through machine learning algorithms and data analysis provide the tailored product recommendation to consumers based on browsing history, individual preferences and past purchases. The study suggested to explore various AI technologies that are employed in online system like chatbots, predictive analytics, recommendation system and virtual assistants and to identify and analyze various factors that are important to mediate the relationship between consumer buying behaviours and AI technologies.

Artificial Intelligence (AI) :

AI is the field of study that focuses mainly on creating new machines that are able to perform the tasks efficiently, which typically requires human intelligence for performance. These tasks basically includes recognizing voice, speech, images etc to make decisions and learning from data provided. AI tech is based on the idea that machines can be effectively programmed to imitate human thought process, which allows them to solve problems and perform tasks that are only possible to be performed by humans. Artificial intelligence programming focus on skills that includes following skills specially cognitive skills like learning, reasoning, creativity and self correction. AI collects and analyse all the information about consumer that it collects from online activity of consumers based on their psychometrics and demographics. This information shows all the information about consumer purchase decisions, frequency of purchase, brands preferred, time taken to take decision, products and brands

surfing on web etc. AI by providing all this information to business helps companies in having an idea about purchase preference and habits of consumers.

AI is a sophisticated and proven tool of processing and analyzing data as well as consumer's decision making process. Computerized self-learning algorithms can make more customized shopping environment for online buyers. The main features of AI-Embedded shopping are real time item focus, voice powered search, conversational trade, virtual pursuit and assortment intelligence tools.

Consumer Behaviour :

Consumer behaviour in general sense refers to the decisions and actions that people take when they purchase or use any product. Consumer behaviour includes every point from the beginning where the decision for buying is taken till the time when decision for next purchase for same product is being taken. According to study of Kotler and Keller (2011), consumer purchase behaviour is analyzing the ways of purchasing and disposing of products, services, ideas, or experiences of the individuals or groups or business organizations in the way to satisfy their wants and needs. Consumers are currently assessing each item and also administering it on a desire scale that is totally different from traditional shopping pattern. The practices which a buyer does while doing web based shopping are :

- They look for goal and issues concerning needs and desires
- They search for all available brands
- They search for sentiment and reviews about product and brand by others
- They worth online encounters
- They search for offers available across all websites.
- They search for recent trends on social media.

Factors affecting consumer behaviour : The major factors that affect the behaviour of consumers are social, psychological, economic, personal and cultural. To attract customers, product & service providers are required to focus on consumer's psychology. They come at the conclusion, that consumer's satisfaction can be increased by considering the elements and factors that have influence on consumer's Behavior (SA Mohamed et Al., 2016) The factors that have impact on buying behaviour of consumers can be summarized as follows :

- **Social Factors :** Societal elements such as family, friends, relatives and other reference groups are termed as social factors. They have significant impact on buying behaviour of consumer. We all live in a society, so it's critical for all of us to follow rules of society.
- **Psychological Factors :** The psychological variables such as motivation, learning, perception, belief and personality play a major role in purchaser process of decision making. Every person have

unique amount of psychological factors. Person's choices are influenced by their perception, values, beliefs and personality.

- **Economic factors :** The economic factors include buyer's financial conditions and market's level of sales. These factors decides how a consumer will spend money and on what product. It also defines the amount of finance to be directed towards buying of products and savings.
- **Personal Factors :** Every consumer as an individual, have unique set of personal factors. These factors include earning source or occupation of consumer, their age and level of income or economic conditions.
- **Cultural Factors :** Every person is member of society and each society have their own set of culture, sub-cultures, social class and ethics.

Research Findings :

This study finds that study of Human and AI collaboration are the base for future of business and marketing perspectives. This research study focuses on Artificial Intelligence in the area of marketing and its interrelated fields such as advertising, consumer behavior and customer relationship management. This study refers to the way to have more holistic approach of research on Artificial Intelligence (AI) and its disciplinary areas. This paper examines how artificial intelligence (AI) is playing a crucial and vital role in shaping consumer behavior and competition in market, by data-enabled learning, exploring newly accessible data sources and behavioral biases present in human beings. This study also finds how easy access to data and information have transformed the purchase decision making process of the consumers. The consumers are now a day have access to user reviews, they can easily compare various articles at a single platform, have access to the available offers, easy of payment, various online credit facilities on one click, chat-bots and also have the option to go for virtual trying on for products. This all have effected the process of making buying decisions by consumers.

The following are the major findings of this paper :

- **Information accessibility and self-directed decision :**

Product-screen, comparison tools, reviews, and user vendors on digital platforms have made consumers more autonomous in purchasing decisions. The role of traditional sales person has reduced to information & filter aid roles. As a result, consumer collect more information and then assesses the profit and loss on purchase and then make the final decision. They emphasize more on transparency and clear information available for products by the brands.

- **Privacy V/s personalization :**

In today's era personalization of process plays a major role in the process of consumer decision

making. Personalized information and recommendations increase consumer-satisfaction and retention, but it also comes with secrecy and data collection concerns. The data collection is used to target advertisement of products preferred by user. Consumer have to choose between privacy and profit or comfort.

- **Social media and influencer's economy :**

Social media is not only a means of communication, but it has become a tool for discovery, building confidence and buying. Influencer marketing motivates prospective buyers by providing live reviews, which creates a quick impact on buying decision making. Several studies have found that influencer's marketing have vital impact on Gene Z and Gen Alpha.

- **Regional and demographic variations :**

Digital effects are not same in the entire market, smart-phone or e-market purchase have been noted higher in Tier-1 and Tier-2 cities. Network availability, online payment options (Like QR codes etc.), online delivery options have make it easier for their residents to opt for online buying. With growth of 5-G network in all geographical areas now a days have increased e-marketing in remote and rural areas too. Industry report shows that e-business will grow faster in coming years.

Policy-makers and business houses are facing unprecedented challenges of facing new, complex and fast evolving environment and to fill the gaps in between policy and its enforcement concerned with the ability to find the evidences of the human involvement, where algorithms or machines indeed facilitate behavior against competition. The use advance machine learning is increasing opacity of the processes adopted by firms in pricing, which creates challenges for Antitrust Authorities in detecting and punishing anticompetitive conduct of firms.

Refrence :

- Ravi Shukla, 2022, Review Study on Factors Affecting Consumer Behaviour, Asian Journal of Management, Vol.-3(1), 49-52.
- Abraham, M. B. (2023), Study on the Role of Artificial Intelligence on Cosumer Buying Behaviour. International Journal of Humanities, Law and Social Science , 51-53.
- Ai-Zhong He, Y. Z. (2022), AI-Powred Touch Points in the Customer Journey: A Systematic Literature Review and Research Agenda. Journal of Research in Interactive Marketing , 620-639.
- Ali Yazdani, S. D. (2023), The Impact of AI on Trends, Design and Consumer Behavior. AI and Tech in Behavioral and Social Sciences , 4-40.
- Beibei Yue, H. L. (2023). The Impact of Human-AI Collaboration Types on Consumer Evaluation and Usage Intentions: A Perspective of Responsibility Attribution. Frontiers in Psychology.

- Dimitris C. Gkikas, P. K. (2021), AI in Consumer Behaviour. In Advances in Artificial Intelligence-based Technologies, 147-176.
- N. Ramya, SA Ali Mohamed, 2016, Factors Affecting Consumer Buying Behaviour, International Journal of Applied Research, Vol.-2(10), 76-80.
- Dr. T. Senthil Murugan, C. M. (2024). Unveiling The Evolution: Impact of Artificial Intelligence on Consumer Buying Behaviors In Online Retail Purchase. Educational Administration: Theory and Practice, 1072-1078.
- Laura Abrardi, C. C. (2021). Artificial Intelligence, Firms and Consumer Behaviour: A Survey. Journal of Economic Surveys , 969-991.
- Marcello M. Mariani, R. P.-V. (2021). AI in Marketing, Consumer Research and Psychology: A Systematic Literature Review and Research Agenda. Psychology & Marketing , 755-776.
- Maria Petrescu, A. S. (2024). Exploring AI Technology and Consumer Behaviour in Retail Interactions. Journal of Consumer Behaviour , 3132-3151.
- Mussa, M. (2020). Predicting Consumer Purchase Behavior using AI: A Comprehensive analysis. Journal of Retailing and Consumer Services , 102-224.
- R. Jain, A. K. (2022). Enhancing consumer Experience with AI-Powered Chatbots in Online Retail. Journal of Business Research , 378-389.
- Saikat Gochhait, O. M. (2020). Role of Artificial Intelligence (AI) in Understanding the Behaviour Pattern: A Study on E-Commerce. Lecture Notes in Electrical Engineering, Vol 601 (pp. 1600-1606). Singapore: Springer.
- Sankaran, V. (2019). Empowering Consumer Research with Data Science. Amity International Conference on Artificial Intelligence(AICAI), (pp. 340-344). Dubai.
- Shashank Vaid, S. P. (2023). Artificial Intelligence and Empirical Consumer Research: A Topic Modeling Analysis. Journal of Business Research , 110-114.
- Taewoo Kim, A. D. (2023). Artificial Intelligence and Consumer Psychology. In The Cambridge Handbook of Consumer Psychology (pp. 247-270). Cambridge.
- Varsha Jain, K. W. (2023). Artificial Intelligence Consumer Behaviour: A Hybrid Review and Research Agenda. Journal of Consumer Behaviour , 676-697.
- Xulong Dai, Q. L. (2024). Impact of Artificial Intelligence on Consumer Buying Behaviours: Study about the Online Retail Purchase. Journal of Infrastructure Policy and Development, 7700.
- Dr. Devendra Kumar, Anil Kumar Srivastava, 2020, Factors Influencing Buying Behaviour of customers, International Journal of Engineering Development and Research, Vol.-8(1), 45-50



फणीश्वरनाथ रेणु की 'नैना जोगिन' में गाली का सौंदर्यबोध और सामाजिक अर्थ

डॉ. गायत्री सिंह, सहायक प्राध्यापिका,
रंजीत कुमार पुष्पाकर, शोध छात्र
हिंदी विभाग, ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज प्रयागराज।

गालियों का मनोविज्ञान बहुत जटिल है, एक निश्चित संदर्भ में गाली के प्रयोग और उसके उद्देश्य को समझ पाना मुश्किल होता है। यदि भारतीय संदर्भ में बात करें तो गालियों का प्रयोग किसी को अपमानित करने या इसके ठीक उलट प्रेम प्रकट करने के लिए किया जाता है। इसके संदर्भ परिस्थितिवश अलग-अलग होते हैं।

गालियों को लोक व्यवहार का अंग कहा जाता है, जब भाषा लाचार होकर चुक जाती है तब गाली ही अभिव्यक्ति का माध्यम बनती है।

'कवि वृंद' अपनी रचना 'वृन्द सतसई' में लिखते हैं कि – "फीकी पर नीकी लगे कहिए समय बिचारी, सबको मन हर्षित करे ज्यों विवाह में गारि।"

भारतीय लोक संस्कृति में विवाह के अवसर पर वधू पक्ष के लोग वर पक्ष के प्रमुख रिश्तेदारों को ढोल बजाकर, नाम लेकर गाली सुनाती हैं। यह प्रेम व लोक व्यवहार माना जाता है। खासकर उत्तर भारत में कोई भी विवाह नकटौरे (एक प्रकार का गारी गीत) के बिना नहीं संपन्न होता है।

हमारे यहां लोक और साहित्य का चोली दामन का साथ है। साहित्य में लोक की झलक साहित्य अकसर दिख जाती है और साहित्य बिना लोक के संदर्भ के अधूरा-सा लगता है।

फणीश्वरनाथ रेणु लोक संस्कृति के कुशल चितरे हैं। उनकी अनेक कहानियों में एक कहानी 'नैना जोगिन' में पात्रा रतनी व उसकी मां गाँव में किसी से झगड़ते समय खुलेआम अश्लील गालियों का प्रयोग करती हैं। रेणु जी इसका जिक्र करते हुए कहते हैं कि 'रतनी के बारे में अब कुछ नहीं लिखा गया तो जीवन में कभी नहीं लिखा जाएगा।' (प्रतिनिधि कहानियां, फणीश्वरनाथ रेणु, पंद्रहवां संस्करण 2018, पृष्ठ 34)

माधो बाबू जो रतनी के मलिकार हैं, रतनी के पिता माधो बाबू के यहां भैंसवार थे। जब माधो बाबू पैदा हुए तो रतनी की मां ने उन्हें दो वर्ष तक स्तनपान कराया था। इस कारण रतनी माधो बाबू से अपना भाई का संबंध जोड़ती है। रतनी और माधो बाबू साथ ही बड़े हुए पर एक कामुक पुरुष की कुंठा ने रतनी की बाल्यावस्था में ही सर्वस्व लूटना चाहा। रतनी की मां ने अपने साहस से उसकी मिट्टी पलीद कर दिया और गांव वालों की

नजर में आ गई। अभी तक साहस और पराक्रम पुरुषों की बपौती समझी जाती थी पर रतनी की मां ने इस लकीर को मिटाकर एक नई लकीर खींच दिया था जो पुरुषों के लिए अलंग्य बन गई थी। स्वभावतः वह पुरुषवादी मानसिकता की आंख में कांटा हो गई। उसे रंडी... आदि का खिताब भी दे दिया गया। पर रतनी की मां सामंतवादी सोच की इन वर्जनाओं से स्वयं को मुक्त रख अपना काम करती रही। 'रतनी के बड़े होने के साथ ही उसकी बदनामियां भी बड़ी हुई।' (वही पृष्ठ 36)

रतनी भी अब मुखर हो गई थी क्योंकि— 'हार न मानने वाली स्त्री के पास नाखूनों के सिवाय उसके हथियार हैं, गालियां ही।'।

निहत्थी स्त्री और कर भी क्या सकती है? रतनी और उसकी मां ने अपनी सुरक्षा में गालियों का कवच धारण कर लिया है। 'तू किसका डर दिखलाती है? शहर से आए भतार का? रोज मांस मछली और ब्रांडील पीकर तेरे (प्रजास्थान में) तेल बढ़ गया है ऐं... (वही पृष्ठ 35)

उक्त पंक्तियां रतनी का नाखून अधिक पैने हो जाने का सबूत हैं। शांति की शर्त है कि, आप युद्ध के लिए हमेशा तैयार रहें। "यों तो गालियां बकना हमारा सिंगर है, मगर खासतौर पर जबरदस्त गुस्से की हालत में हमारे जबान के पर लग जाते हैं। गुस्से की घटा सिर पर मंडराई और मुंह से गलियां मेंह की तरह बरसने लगती हैं।" (निबंध, गालियां, मुंशी प्रेमचंद poshampa.org)

रतनी के मन में भी गुस्सा है। या यूं कहें कि उसके रोम-रोम में उसके प्रति हुए अत्याचार के विरुद्ध क्रोध भरा हुआ है। जब वह अबोध बालिका ही थी तो उसके दादा की उम्र के पुरुष द्वारा उसका शीलहरण करना और आवाज उठाने पर उसे ही समाज से बहिष्कृत किया जाना। इस अन्याय ने बहुत कम उम्र में ही समाज के दोहरे चरित्र से उसे परिचित कर दिया था। पुरुषों को मां बहन की गालियां सुनाकर वह उन्हें चुनौती देती है। उसके हृदय के घाव की पीड़ा गालियों के रूप में निःश्रित होती है। समाज ने उसके प्रति संवेदना व्यक्त करने के बजाय उस पर लांछन ही लगाया है। संवाद के अभाव में रतनी की पीड़ा और भी बढ़ती गई।

मुंशी प्रेमचंद अपने निबंध 'गालियां' में कहते हैं कि— "गालियां हमारी बुरी भावनाओं को उभारती हैं और स्वाभिमान व संकोच की चेतना को दिलों से कम करती हैं।" (poshampa.org)

रतनी को अब उस समाज से कोई लाज शर्म नहीं है जो स्त्रियों को उपभोग की वस्तु समझता है, उसे कमतर आंकता है। उसने पुरुषों की नजरों में स्वयं के लिए सम्मान की बजाय वासना का भाव ही अधिक महसूस किया है।

रेणु जी कहते हैं कि— 'रतनी की गालियों में मर्माहत और अपमानित करने के अलावा उत्तेजित करने की तीव्र शक्ति है।' (वही पृष्ठ 34)

सचमुच रतनी उस पुरुष के पुरुषत्व को ललकारना चाहती है, जिसकी कथनी और करनी में अंतर है जो सिर्फ अपनी ही बहू-बेटियों में देवी का रूप देखता है, और सभी स्त्रियों को ललचाई निगाहों से ताड़ता है। वह पुरुषों को 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।' पंक्ति में निहित भावना के मर्म को समझाना चाहती है। इस ललकार के माध्यम से रतनी तथाकथित समाज में स्त्रियों के लिए भी समान अवसर की आवाज बुलंद करना चाहती है।

'सुबह को मालूम हुआ शहर से लाया हुआ मेरा प्रेस्टीज कुकर गायब है। दोपहर के बाद धोती गुम! रात

में रामेश्वर की मां फुसफुसाकर आंगन में कह रही थी, रतनी बोलती थी, कि सिद करके छोड़ेगी इस बार! उस दिन इस तरह पीठ दिखाना अच्छा नहीं हुआ शायद!’ (वही पृष्ठ 37)

स्त्री जब-जब अपनी बात कहना चाहती है, पुरुष इसी तरह अपनी पीठ फेर लेता है, जैसे स्त्री की बात का कोई महत्व ही ना हो, जैसे कहना उसका स्वभाव ही न हो। पुरुष सिर्फ सुनाना जानता है सुनना जैसे उसके चरित्र के विरुद्ध हो। यही संवादहीनता स्त्री के क्रोध को भड़का देती है और वह तरह-तरह से उसकी अभिव्यक्ति करती है। इस अभिव्यक्ति को पुरुष ने ‘तिरिया चरित्र’ नाम लेकर अपना पल्ला झाड़ लिया। नामर्द उसका घर वाला है और बाँझ कही जाती है रतनी। ‘पूछे कोई इससे की इतना दूध, मलाई, दही, मांस, मछली, कबूतर तिस पर धात पुष्टाई की दवा तो अलानदृधेकान खाकर भी जिस मर्द को आदि पहर रात को हांफनी शुरू हो उसको क्या कहा जाए.? लोग दोख देते हैं मेरे कोख को की रतनी बाँझ है।’ (वही पृष्ठ 36)

रतनी स्त्री है पर हीनभावना से ग्रसित नहीं है। किसी और के द्वारा किए गए अपराध की सजा भी वह भोगने के लिए तैयार नहीं है। पर समाज की रूढ़िवादिता ने स्वभाव से उसे अकखड़ बना दिया है। समाज के नियमों में वह बंधता है जो सामाजिक हो। रतनी व उसकी मां को तो पहले ही इस समाज ने बहिष्कृत कर दिया है तो वह उसका नियम भी अब नहीं मानती है।

रतनी का अकखड़ स्वभाव प्रतिक्रियाजनित है। प्रकृतया भीतर से उसका भी हृदय कोमलता से भरा हुआ है। तभी तो वह स्त्री का साकार रूप ‘मां’ होना चाहती है। उसके लिए उसने सारे जतन भी किये पर सफलता अभी तक हाथ नहीं आई थी।

वह माधो बाबू को दूध का संबंध याद दिलाकर अपनी सहायता करने को प्रेरित करती है। आखिर रतनी का कोई भाई नहीं है। उसकी मदद को कौन आगे आएगा.? रतनी को माधो बाबू से बहुत अपेक्षाएं हैं। वह चाहती है कि माधो बाबू अपने दूध का फर्ज अदा करें। ‘अब इस बार आप आए हैं तो कभी आपके मन में यह नहीं हुआ की रतनी की शादी हुए ढाई साल हो रहे हैं और रतनी को कोई बच्चा क्यों नहीं हुआ.? अटना-पटना, दिल्ली, दरभंगा में आपके इतने डाकडर-डागडरनी जान पहचान के हैं, आखिर रतनी की मां का दूध साल-भर तक पिया है आपने। रतनी की मां को बहुत दिन तक अपने मां कहा था, लोगों को याद है। दूध का भी एक संबंध होता है।’ (वही पृष्ठ 38, 39)

किसी से लेकर कुछ देना भी पड़ता है। प्रकृति इसी सिद्धांत पर चलती है। पर रतनी से इस समाज ने सिर्फ छीना था, उसका बचपन, सम्मान, उसका स्वाभिमान और स्त्रीत्व। जब देने की बारी आई तो सब ने अपने हाथ पीछे खींच लिए यहां तक की माधो बाबू ने भी। रतनी उन्हें याद दिलाती है। ‘रतनी की मां का दूध साल भर तक पिया है आपने...लोगों को याद है।’

रतनी माधो बाबू के सोए हुए कर्तव्यबोध को जगाती है। बुरे से बुरे व्यक्ति में भी कहीं ना कहीं अच्छाई छिपी होती है। शेरनी जिन मजबूत जबड़ों से किसी पशु का शिकार करती है, उसी में अपने नवजात शिशु को बड़ी मुलायमियत से दबाकर इधर-उधर ले जाती है।

माधो बाबू रतनी को अपने साथ शहर इलाज के लिए ले जाते हैं। रतनी का घरवाला जब उसे घर वापस चलने को कहता है तो वह उसे घुड़क देती है। ‘हां, जब आ गई हूं तो यहां हो चाहे लहरिया सराय, चाहे कोलकाता जहां से हो कोख तो भर के लौटूंगी।’ (वही दृश्य 40)

माधो बाबू को रतनी के स्वभाव में परिवर्तन की आहट दिखती है। एक नई सुबह जो रतनी को अंधकार से प्रकाश में खड़ा करेगी। अभी उसका प्रेम छुपा हुआ है। मां बनने पर वह बाहर की ओर प्रवाहित होगा जो अपने पुत्र के साथ-साथ बाकी लोगों को भी सिंचित करेगा। प्रकृति हमें यही तो सिखाती है कि बांटने से बढ़ता है। माधो बाबू जानते हैं कि, रतनी के मन में जमा क्रोध प्रतिहिंसा की भावना गालियों के रूप में निकल रही है और जब उसका कोष खाली हो जाएगा तो उसमें सिर्फ प्रेम ही प्रेम बचेगा अतः माधो बाबू को अब रतनी की गाली अश्लील नहीं लगती है।

संदर्भ ग्रन्थ -

1. प्रतिनिधि कहानियां, फणीश्वरनाथ रेणु, पंद्रहवां संस्करण 2018, पृष्ठ 35
2. निबंध, गालियां, मुंशी प्रेमचंद (poshampa.org)
3. वही, पृष्ठ 34
4. वही, पृष्ठ 37
5. वही, पृष्ठ 36
6. वही, पृष्ठ 38, 39
7. वही, पृष्ठ 40

इंटरनेट संदर्भ :

1. poshampa.org



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 7-8
पृष्ठ : 50-57

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

प्रशासनिक कार्यों पर “संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण” का एक अध्ययन

सुरेश चंद्र यादव

शोधार्थी (विधि), शास. टा. र. सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

डॉ० एस०पी० सिंह

सेवानिवृत्त प्राध्यापक, शासकीय विधि महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

सारांश :

प्रशासनिक कार्यों पर “संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण” (Constitutional Control) एक महत्वपूर्ण व्यवस्था है, जो प्रशासनिक अधिकारियों (कार्यपालिका) को स्वेच्छाचारी होने से रोकती है और उन्हें संविधान के दायरे में रखकर नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करती है। राजसत्ता के प्रयोग की सीमाएं एवं मर्यादाएं निश्चित की जानी चाहिए। राजसत्ता के प्रति आदिम समाजों की इस प्रतिक्रिया व विचार ने उस राजनीतिक चिन्तन की परम्परा को जन्म दिया जिसका विकास आधुनिक युग में ‘संवैधानिक नियंत्रण’ के रूप में हुआ। संवैधानिक नियंत्रण का इतिहास भी उतना ही पुराना है, जितना राजनीतिक संस्थाओं का इतिहास। राजनीतिक संस्थाओं और राजनीतिक शक्ति के प्रादुर्भाव ने मानव को इनकी निरंकुशता के बारे में सोचने को बाध्य किया। शक्ति मनुष्य को भ्रष्ट करती है और जब इसका सम्बन्ध राजनीतिक संस्थाओं या राजनीति से जुड़ जाता है तो इसके पथभ्रष्ट व दुरुपयोग की संभावना बहुत ज्यादा हो जाती है। इसलिए एक चिन्तनशील व सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य ने प्रारम्भ से ही इस राजनीतिक शक्ति के दुरुपयोग को रोकने के लिए सामाजिक रूप में कुछ नियन्त्रण व बाध्यताएं राजनीतिक शक्ति के ऊपर लगाई हैं। ये बाध्यताएं परम्पराओं, कानूनों, नियमों, नैतिक मूल्यों के रूप में भी हो सकते हैं और संगठित संवैधानिक शक्ति के रूप में भी।

संविधान ही एकमात्र ऐसा प्रभावशाली नियन्त्रक है जो राजनीतिक संस्थाओं, शक्ति, पदधरी को नियन्त्रित रखता है तथा निरंकुश नहीं होने देता। संविधान राजनीतिक शक्ति को नियन्त्रित रखता है तथा अराजकता की स्थिति से भी बचाता है। शासक को नियन्त्रित व विधि अनुसार कार्य करने की शक्ति को संविधान तथा सभी शासकों को नियन्त्रित अधिकार क्षेत्र में रखने की संवैधानिक व्यवस्था को संवैधानिक नियंत्रण कहा जाता है।

मुख्य शब्द : संवैधानिक नियंत्रण, निरंकुशता, अराजकता, उदारवादी लोकतन्त्र, साम्यवाद, सामाजिक बहुलवाद।

प्रस्तावना :-

संवैधानिक नियंत्रण एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसका संचालन उन विधियों और नियमों द्वारा

होता है जो संविधान में वर्णित हैं। इसमें निरंकुशता के लिए कोई जगह नहीं होती और शासन संचालन लोकतांत्रिक तरीके से किया जाता है। प्लेटो का आदर्श राज्य दार्शनिक राजा का असीमित शासन है, लेकिन अरस्तु का आदर्श राज्य है : 'विधि की सर्वोच्चता वाला राज्य'। ऐसा राज्य या शासन जिसमें किसी व्यक्ति को नहीं, वरन् विधि को प्राप्त है। 'विधि की सर्वोच्चता' वाला राज्य ही संवैधानिक नियंत्रण के अनुसार चलने वाला राज्य कहलाता है। संविधान और संवैधानिक सरकार, संवैधानिक नियंत्रण के आधार स्तम्भ हैं। संवैधानिक नियंत्रण उसी राजनीतिक व्यवस्था में संभव है, जहां संविधान हो और शासन संविधान के नियमों के अनुसार संचालित होता हो। संवैधानिक नियंत्रण शासन और नागरिक के सम्बन्धों को ऐसे ढंग से निर्धारित करता है कि शासन सत्ता नागरिकों के लिए आतंक का पर्याय न बन जाए। संवैधानिक नियंत्रण केवल उसी राजनीतिक व्यवस्था में संभव है, जहां संविधान हो और इस संविधान द्वारा राजनीतिक शक्ति के प्रयोगकर्ताओं की न केवल भूमिका निर्धारित की जाय, अपितु इस भूमिका की व्यवहारिकता की व्यवस्था भी की जाए अर्थात् सरकार संविधान की व्यवस्था के अनुरूप ही संचालित हो और इसे व्यवहार में संभव बनाने के लिए संवैधानिक नियंत्रणों व प्रतिबन्धों की प्रभावशाली व्यवस्था हो। अर्थात् सरल शब्दों में संवैधानिक नियंत्रण का आशय है, 'सीमित शक्तियों वाला शासन'।

प्रशासनिक कार्यों पर "संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण" (Constitutional Control) सरकार के विभिन्न अंगों के बीच शक्तियों के संतुलन (Separation of Powers and Checks and Balances) पर आधारित है। यहाँ इसका एक संक्षिप्त और स्पष्ट अध्ययन प्रस्तुत है —

संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण के प्रमुख आधार :

संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण मुख्य रूप से तीन संस्थागत ढांचों द्वारा सुनिश्चित किया जाता है:—

1. **विधायी नियंत्रण (Legislative Control) :-** संसद या विधानमंडल प्रशासन पर निरंतर नजर रखते हैं ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि प्रशासनिक कार्य जनहित में और बनाए गए कानूनों के अनुरूप हैं।
 - **प्रश्नकाल और शून्यकाल (Question Hour) :-** इसमें सांसद और विधायक मंत्रियों से प्रशासनिक नीतियों और कार्यों पर सवाल पूछते हैं।
 - **बजटीय नियंत्रण (Budgetary Control) :-** विधायिका की मंजूरी के बिना प्रशासन एक भी रुपया खर्च नहीं कर सकता। अनुदान की मांगों में कटौती करके प्रशासनिक नीतियों पर नियंत्रण रखा जाता है।
 - **संसदीय समितियाँ (Parliamentary Committees) :-** लोक लेखा समिति (PAC) और अनुमान समिति जैसे निकाय प्रशासनिक खर्चों और कार्यों की गहन जांच करते हैं।
2. **न्यायिक नियंत्रण (Judicial Control) :-**

न्यायपालिका प्रशासन की स्वेच्छाचारिता और गैर-कानूनी कार्यों पर सबसे प्रभावी अंकुश लगाती है।

 - **न्यायिक समीक्षा (Judicial Review) :-** यदि प्रशासन द्वारा बनाया गया कोई नियम या कार्यकारी आदेश संविधान या मूल अधिकारों का उल्लंघन करता है, तो न्यायालय उसे असंवैधानिक घोषित कर सकता है।
 - **रिट अधिकार क्षेत्र (Writ Jurisdiction) :-** यदि प्रशासनिक अधिकारी नागरिकों के मौलिक अधिकारों

का हनन करते हैं, तो उच्च न्यायालय (अनुच्छेद 226) और सर्वोच्च न्यायालय (अनुच्छेद 32) में बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार-पृच्छा, और उत्प्रेषण जैसी रिट (Writs) जारी कर सकते हैं।

3. कार्यकारी और आंतरिक नियंत्रण (Executive & Internal Control)

- **राजनीतिक जवाबदेही (Political Accountability) :-** प्रशासनिक अधिकारी स्थायी होते हैं, लेकिन वे अपने कार्यों के लिए राजनीतिक कार्यपालिका (मंत्रियों) के प्रति उत्तरदायी होते हैं। मंत्री संसद को जवाबदेह होते हैं।

- **प्रशासनिक न्यायाधिकरण (Administrative Tribunals) :-** प्रशासनिक निर्णयों से असंतुष्ट व्यक्तियों की शिकायतों के समाधान के लिए विशेष न्यायाधिकरण (जैसे- CAT) गठित किए जाते हैं।

संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण के मुख्य सिद्धांत :-

संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण (Judicial Control) का मुख्य उद्देश्य शक्तियों के पृथक्करण को बनाए रखना, कार्यपालिका व विधायिका को संविधान के दायरे में रखना और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना है। यह मुख्य रूप से “न्यायिक समीक्षा” (Judicial Review) और रिट (Writs) प्रणाली के सिद्धांतों पर काम करता है। न्यायिक नियंत्रण के मुख्य संवैधानिक सिद्धांत निम्नलिखित हैं –

- **न्यायिक समीक्षा (Judicial Review) :-** यह सबसे प्रमुख सिद्धांत है, जिसके तहत न्यायपालिका संसद द्वारा पारित कानूनों और कार्यपालिका के निर्णयों की जांच करती है कि वे संविधान के अनुरूप हैं या नहीं। यदि कोई कानून संविधान के किसी प्रावधान का उल्लंघन करता है, तो न्यायालय उसे असंवैधानिक और शून्य घोषित कर सकता है।

- **विधि का शासन (Rule of Law) :-** यह सिद्धांत सुनिश्चित करता है कि कोई भी व्यक्ति या पदाधिकारी कानून से ऊपर नहीं है। प्रशासनिक अधिकारियों और सरकार के सभी कार्य कानून के अनुसार होने चाहिए, मनमाने या व्यक्तिगत विवेक के आधार पर नहीं।

- **अधिकारिता का सिद्धांत (Doctrine of Ultra Vires) :-** इस सिद्धांत के अनुसार, सरकार, प्रशासनिक एजेंसियों या किसी भी निकाय को केवल वही शक्तियां प्राप्त होती हैं जो संविधान या कानून द्वारा स्पष्ट रूप से दी गई हैं। यदि वे अपनी निर्धारित सीमा (अधिकार क्षेत्र) से बाहर जाकर कोई कार्य करते हैं, तो उसे ‘अल्ट्रा वायर्स’ (शक्तियों के बाहर) माना जाता है और शून्य घोषित कर दिया जाता है।

प्राकृतिक न्याय (Principles of Natural Justice) :- प्रशासनिक और न्यायिक निर्णयों में निष्पक्षता बनाए रखने के लिए यह एक अनिवार्य सिद्धांत है। इसके दो मुख्य स्तंभ हैं –

- **निष्पक्ष सुनवाई का नियम (Audi alteram partem) :-** किसी भी व्यक्ति को अपना पक्ष रखने का उचित अवसर दिए बिना दंडित या प्रभावित नहीं किया जा सकता।

- **पूर्वाग्रह-मुक्त निर्णय (Nemo iudex in Causa Sua) :-** कोई भी व्यक्ति अपने ही मामले में न्यायाधीश नहीं हो सकता।

मूल अधिकारों का संरक्षण (Protection of Fundamental Rights) :- न्यायपालिका, विशेषकर भारत के सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय, नागरिकों के मौलिक अधिकारों की संरक्षक होती है। यदि राज्य द्वारा अधिकारों का हनन होता है, तो न्यायपालिका अनुच्छेद 32 और 226 के तहत रिट (बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश,

अधिकार—पृच्छा आदि) जारी करके नियंत्रण स्थापित करती है।

- **शक्तियों का पृथक्करण (Separation of Powers) :-** सरकार के तीनों अंगों (विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका) के कार्यक्षेत्र संविधान द्वारा स्पष्ट रूप से विभाजित हैं। न्यायपालिका यह सुनिश्चित करती है कि कोई भी अंग दूसरे के कार्यक्षेत्र में अनुचित हस्तक्षेप न करे।

शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत :

शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत (Doctrine of Separation of Powers) एक ऐसी संवैधानिक अवधारणा है, जिसके तहत सरकार के तीनों प्रमुख अंगों विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के कार्यों, अधिकारों और जिम्मेदारियों को स्पष्ट रूप से विभाजित किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य सत्ता के केंद्रीकरण को रोकना और नागरिकों की स्वतंत्रता की रक्षा करना है। इस सिद्धांत की उत्पत्ति और मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं –

सिद्धांत के प्रमुख अंग :

- **विधायिका (Legislature) :-** इसका मुख्य कार्य देश के लिए कानून बनाना, पुराने कानूनों में संशोधन करना या उन्हें समाप्त करना है।
- **कार्यपालिका (Executive) :-** यह विधायिका द्वारा बनाए गए कानूनों को लागू करती है और प्रशासनिक कार्यों का संचालन करती है।
- **न्यायपालिका (Judiciary) :-** इसका कार्य कानूनों की व्याख्या करना, न्याय प्रदान करना और संविधान की रक्षा करना है।

उत्पत्ति और इतिहास :

यद्यपि अरस्तु जैसे प्राचीन विचारकों ने सरकार के कार्यों को अलग-अलग श्रेणियों में बांटा था लेकिन इस आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धांत का जनक फ्रांसीसी राजनीतिक दार्शनिक मोंटेस्क्यू (Montesquieu) को माना जाता है। उन्होंने 1748 में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक “द स्पिरिट ऑफ द लॉज” (The Spirit of the Laws) में यह तर्क दिया था कि यदि शासन के तीनों अंग एक ही व्यक्ति या संस्था के हाथों में केंद्रित हो जाएं, तो व्यक्ति की स्वतंत्रता समाप्त हो जाएगी और निरंकुशता (तानाशाही) को बढ़ावा मिलेगा।

नियंत्रण एवं संतुलन (Checks and Balances)

शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत में केवल कार्यों का विभाजन ही नहीं होता, बल्कि “नियंत्रण और संतुलन” (Checks and Balances) की व्यवस्था भी होती है। इसके तहत, सरकार का कोई भी अंग अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न कर सके और दूसरे अंग पर निगरानी रख सके, इसका प्रावधान होता है। उदाहरण के लिए, न्यायपालिका विधायिका द्वारा पारित असंवैधानिक कानूनों को रद्द (Judicial Review) कर सकती है, तो वहीं कार्यपालिका (या विधायिका) न्यायपालिका के न्यायाधीशों के खिलाफ महाभियोग जैसी प्रक्रिया चला सकती है।

भारतीय संविधान के संदर्भ में :

भारतीय संविधान में अमेरिका की तरह शक्ति पृथक्करण का कोई कठोर या पूर्ण प्रावधान नहीं है, बल्कि यहां एक लचीला दृष्टिकोण अपनाया गया है।

- भारत में सरकार की संसदीय प्रणाली (Parliamentary System) है, जहाँ कार्यपालिका, विधायिका का ही एक अभिन्न अंग होती है (जैसे मंत्रीगण संसद के सदस्य होते हैं)।

- इसके बावजूद, संविधान ने तीनों अंगों की शक्तियों को स्पष्ट रूप से सीमाबद्ध किया है ताकि कोई एक दूसरे के कार्यक्षेत्र का उल्लंघन न करे।
- उदाहरण के लिए, संविधान के अनुच्छेद 50 में कार्यपालिका को न्यायपालिका से अलग करने का स्पष्ट निर्देश दिया गया है।
- न्यायपालिका भारत में स्वतंत्र और एकीकृत है, जो विधायिका और कार्यपालिका के अनुचित निर्णयों की समीक्षा कर सकती है।
प्रशासन को नियंत्रित करने के लिए संविधान कुछ अंतर्निहित सिद्धांतों की रूपरेखा तैयार करता है :-
- **विधि का शासन (Rule of Law) :-** प्रशासन कानून के शासन से संचालित होता है, न कि व्यक्तियों की इच्छा से।
- **शक्तियों का पृथक्करण (Separation of Powers) :-** संविधान विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के कार्यों को स्पष्ट रूप से विभाजित करता है, ताकि कोई एक अंग निरंकुश न बन सके।
- **प्राकृतिक न्याय (Natural Justice) :-** किसी भी प्रशासनिक निर्णय से पहले संबंधित व्यक्ति को अपना पक्ष रखने का मौका मिलना चाहिए (Fair Hearing) और निर्णयकर्ता पूर्वाग्रह से मुक्त होना चाहिए।

संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण का महत्व :-

यह नियंत्रण सुनिश्चित करता है कि प्रशासन केवल सत्ता का प्रयोग करने वाला यंत्र न बनकर “लोक सेवक” की भूमिका निभाए। यह नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा करता है, प्रशासन में पारदर्शिता (Transparency) लाता है और लोकतंत्र की नींव (Democracy) को मजबूत बनाए रखता है।

यद्यपि संविधान का अस्तित्व संवैधानिक नियंत्रण की कोई गारण्टी नहीं है, लेकिन यह भी तथ्य है कि संविधान के बिना, संवैधानिक नियंत्रण संभव नहीं होता। प्रथम विश्व युद्ध के बाद जर्मनी, इटली, रूस आदि देशों में संविधान तो था पर वहां संवैधानिक सरकारों का अभाव था, क्योंकि वहां के तानाशाही शासकों के लिए संविधान एक रद्दी कागज की तरह था। इसलिए वहां पर संवैधानिक नियंत्रण नहीं था। संवैधानिक सरकार ही संविधान को व्यवहारिक बनाती है। संविधान के व्यवहारिक प्रयोग के बिना संवैधानिक नियंत्रण की कल्पना नहीं की जा सकती। इस प्रकार संवैधानिक नियंत्रण का अर्थ है – उत्तरदायी व सीमित सरकार और उत्तरदायी व सीमित सरकारें लोकतान्त्रिक राज्यों में पाई जाती हैं। प्रायः संवैधानिक नियंत्रण की धरणा को उदारवादी लोकतंत्र की अवधारणा भी कहा जाता है। यह अवधारणा मूल्य मुक्त तथा मूल्य अभिभूत व्याख्याओं पर आधारित हैं। मूल्य मुक्त अवधारणा के रूप में इसमें केवल संविधानिक संस्थाओं का वर्णन किया जाता है, संविधान के आदर्शों व मूल्यों का नहीं। जब राजनीतिक समाज के आदर्शों और मूल्यों के दृष्टिगत संवैधानिक नियंत्रण की व्याख्या की जाती है तो वह मूल्य – अभिभूत व्याख्या कहलाती है। मूल्य अभिभूत व्याख्या ही आधुनिक लोकतंत्र की मांग है। संवैधानिक नियंत्रण की पाश्चात्य अवधारणा उदारवाद का दर्शन है। संवैधानिक नियंत्रण साध्य और साधन दोनों हैं।

लोकतान्त्रिक व्यवस्था में राजनीतिक समाज के मूल्यों, आदर्शों (स्वतन्त्रता, समानता, न्याय) को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं के शासन में प्रतिबंध की व्यवस्था द्वारा सरकार की व्यवस्था की जाती है और कुछ संवैधानिक उपबन्धों द्वारा राजनीतिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत का भी प्रतिपादन किया जाता है। इससे व्यक्ति की स्वतन्त्रता व अधिकारों का संरक्षण होता है और विधि के शासन द्वारा समाज

में सुव्यवस्था बनी रहती है। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में संवैधानिक नियंत्रण के अन्तर्गत संविधान का महत्व सरकार से अधिक होता है क्योंकि सरकार का निर्माण संविधान के अन्तर्गत होता है व संविधान को सर्वोपरि माना जाता है। प्रायः लोकतन्त्र में संवैधानिक सरकार संविधान के प्रावधानों को मानने के लिए बाध्य प्रतीत होती हैं। संवैधानिक उपबन्ध तथा उत्तरदायित्व का सिद्धांत उसे संवैधानिक नियंत्रण को बनाए रखने में मदद करते हैं। इस प्रकार संवैधानिक नियंत्रण लोकतन्त्रीय भावना के अधिक निकट होता है।

वस्तुतः संवैधानिक नियंत्रण तो अन्य शासन प्रणालियों साम्यवादी देशों में भी स्थापित हो सकता है परन्तु साम्यवादी प्रणालियों में इसमें थोड़ी भिन्नता आ जाती है क्योंकि इस अवधारणा में संविधान का उद्देश्य सबके लिए स्वतन्त्रता, न्याय और अधिकार निश्चित करना न होकर समाजवाद की स्थापना पर अधिक बल दिया जाता है। ऐसे देशों के संविधान में समाजवादी तत्वों का समावेश अधिक होता है तथा इनमें सीमित सरकार की अवधारणा को कम महत्व दिया जाता है। इन देशों में संविधानों में ऐसे प्रावधान हैं जो साम्यवादी दल की तानाशाही को स्थापित करने में सहायक होते हैं। कुछ विद्वान साम्यवादी देशों में संवैधानिक नियंत्रण को एक धोखा मानते हैं क्योंकि यहाँ स्वयं संविधान भी साम्यवादी दलों के हाथों की कठपुतली हैं। यद्यपि सभी लोकतान्त्रिक देशों में भी संवैधानिक नियंत्रण का विकास उतना नहीं हुआ है, जितना पश्चिमी देशों में हुआ है। विशेषकर विकासशील देशों में संवैधानिक नियंत्रण का विकास अधूरा है क्योंकि विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाएं अभी संक्रमणकाल के दौर से गुजर रही हैं। भारत इस मामले में प्रमुख है जहाँ संवैधानिक नियंत्रण अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच चुका है। दूसरी तरफ पाकिस्तान, जिसने कि भारत के साथ ही आजाद होकर लोकतान्त्रिक व्यवस्था को अपनाया था में कई बार सैन्य अधिकारियों द्वारा तख्ता पलट किया जा चुका है। भारत ने पाश्चात्य संवैधानिक नियंत्रण के समस्त आदर्श प्राप्त कर लिए हैं और वह बराबर संवैधानिक नियंत्रण का विकास कर रहा है। विकासशील देशों को राजनीतिक स्थायित्व, आर्थिक विकास, सत्ता की वैधता, राजनीतिक विकल्पों का अभाव, आधुनिकीकरण व सुरक्षा की समस्याओं से दो चार होना पड़ रहा है। होवार्ड रीगिन्स का कथन सत्य है कि “राज्य नए हैं और राजनीतिक खेल नियम प्रवाह में हैं इसलिए संवैधानिक नियंत्रण यहाँ अभी सुस्थिर नहीं हो सका है।”

लोकतान्त्रिक देशों में संवैधानिक नियंत्रण के विकसित व पल्लवित होने के लिए सबसे उपयुक्त वातावरण तथा आवश्यक तत्व विद्यमान होते हैं। लोकतान्त्रिक देशों में पाए जाने वाले विधि का शासन, मौलिक अधिकारों व स्वतन्त्रताओं की व्यवस्था, राजनीतिक शक्ति का विभाजन, पृथक्करण, विकेन्द्रीकरण व नियन्त्रण, स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका, राजनीतिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत आदि ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो संवैधानिक नियंत्रण को पनपने के लिए उपयुक्त आधार व स्थायित्व प्रदान करने में अहम भूमिका निभाते हैं। निश्चित समय के बाद चुनाव, राजनीतिक दलों की व्यवस्था, समाचार पत्रों अथवा प्रेस की स्वतन्त्रता, लोकमत का महत्व, परम्पराएँ और सामाजिक बहुलवाद, सहिष्णुता, मिश्रित राजनीतिक संस्कृति आदि तत्वों के कारण तानाशाही व अराजकता के पनपने के अवसर कम हो जाते हैं। फलतः सरकार मर्यादित व उत्तरदायी बनी रहकर जन-कल्याण के कार्य करती है व संवैधानिक नियंत्रण का आधार मजबूत होता है। संवैधानिक नियंत्रण एक गत्यात्मक, मूल्यों पर आधारित, संस्कृति सम्बद्ध, समभागी व साध्यमूलक अवधारणा है।

संवैधानिक नियंत्रण की उत्पत्ति किसी आकस्मिक घटना का परिणाम नहीं है। इसकी उत्पत्ति और विकास एक ऐतिहासिक प्रक्रिया की उपज है। यूनानियों से लेकर वर्तमान समय तक संवैधानिक नियंत्रण एक लम्बी

ऐतिहासिक प्रक्रिया से गुजरा है। यूनानी चिन्तकों के बाद इसे परवर्ती विचारकों ने भी विकसित होने में अपना सहयोग दिया है। एक गतिशील अवधारणा के रूप में संवैधानिक नियंत्रण का अपना एक विशिष्ट इतिहास रहा है। संविधान की उत्पत्ति सबसे पहले यूनान के ऐथेंस नगर में हुई थी। सर्वप्रथम यूनानी दार्शनिकों ने ही राज्य के रूप, कार्य, उद्देश्यों पर विचार किया और विवेकपूर्ण ढंग से संवैधानिक शासन विचार किया। यूनानी नगर राज्यों के पतन के बाद रोम के महान साम्राज्य की स्थापना के बाद रोम में सरकार के उपकरण के रूप में संविधान का जन्म हुआ। कानून का संहिताकरण और उत्तरदायी सरकार का सिद्धांत रोमन काल की महत्वपूर्ण उपलब्धि थी, जो आधुनिक संवैधानिक नियंत्रण का आधार थी।

मध्यकाल में सामन्तवाद का प्रादुर्भाव हुआ तथा इस युग में धर्मिक सत्ता सर्वोच्च थी पफलतः संवैधानिक नियंत्रण का मार्ग अवरुद्ध हो गया। आधुनिक संवैधानिक नियंत्रण का जन्म पुनर्जागरण काल से ही माना जाता है। औद्योगिक क्रान्ति के जन्म ने संवैधानिक नियंत्रण को विकसित किया। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद संवैधानिक नियंत्रण यूरोपीय सीमाओं का लांघकर सार्वभौमिकता की तरफ बढ़ने लगा। इस दौरान इटली में फासीवाद तथा जर्मनी में नाजीवाद ने संवैधानिक नियंत्रण को गहरी क्षति पहुंचाई। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद संवैधानिक नियंत्रण के लोकतान्त्रिक प्रतिमान के साथ-साथ साम्यवादी प्रतिमान भी उभरने लगा। यद्यपि द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद ईराक, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, म्यांमार आदि राष्ट्रों में सैनिक शासन व निरंकुशतावादी ताकतों के प्रादुर्भाव से संवैधानिक नियंत्रण को गहरा आघात पहुंचा है। निरंकुशतावाद संवैधानिक नियंत्रण के मार्ग से प्रमुख बाध है। के.सी. व्हीयर ने लिखा है— “जैसे-जैसे निरंकुशतावाद बढ़ता है, वैसे-वैसे संवैधानिक नियंत्रण पीछे हटता है।”

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों ने निरंकुशतावादी ताकतों पर दबाव बनाया और संवैधानिक नियंत्रण के रक्षक के रूप में पहचान बनाई। स्ट्रांग ने लिखा है—“अन्तर्राष्ट्रीय संगठन राजनीतिक संवैधानिक नियंत्रण की सुरक्षा की आवश्यक शर्त है।” इसलिए तृतीय विश्वयुद्ध को टालने के लिए हमें अन्तर्राष्ट्रीयता को ही बढ़ावा देना चाहिए। संकीर्ण राष्ट्रीयता की भावना संवैधानिक नियंत्रण के लिए बहुत बड़ा खतरा बन सकती है जैसा जर्मनी और इटली में हुआ था। आज का युग लोकतन्त्रीय संवैधानिक नियंत्रण का युग है। इसकी रक्षा जनता द्वारा ही की जा सकती है। संवैधानिक नियंत्रण के लिए शिक्षित व राजनीतिक रूप में जागरूक जनता से बढ़कर दूसरा कोई अस्त्र नहीं है। संवैधानिक नियंत्रण के लिए जनता का राजनीतिक विश्वास शासक वर्ग के लिए प्रति होना अति आवश्यक है। जिस देश में राजनीतिक परम्पराएँ सुविकसित हो जाएं वहाँ संवैधानिक नियंत्रण की जड़े गहरी होती हैं। वाटरगेट काण्ड को लेकर अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा त्यागपत्र दिया जाना लोकतन्त्रीय संवैधानिक नियंत्रण की दृढ़ता का प्रतीक है। प्रायः लोकतान्त्रिक देशों में शासक वर्ग नैतिकता के नाम पर त्यागपत्र देकर संवैधानिक नियंत्रण की भावना अटूट बनाते हैं। संवैधानिक नियंत्रण की रक्षा के लिए ऐसी राजनीतिक परम्पराएँ लोकतान्त्रिक देशों में देखी जा सकती हैं। सीमित सरकार, उत्तरदायित्व की भावना, मानव अधिकारों को लागू कर व जनमत का सम्मान कर संवैधानिक नियंत्रण का विकास किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

- ट्यूबनर, जी. (2004). सामाजिक संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण : राज्य-केंद्रित संवैधानिक सिद्धांत के विकल्प? सी. जोर्जेस, आई.-जे. सैंड, और जी. ट्यूबनर (संपादक), ट्रांसनेशनल गवर्नेंस और संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण, हार्ट पब्लिशिंग।

- रेडकर, डी. (2018). “इंटरनेट के नारीवादी सिद्धांतों” के बॉटम-अप डिजिटल संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण का अन्वेषण, ग्लोबल इंटरनेट गवर्नेंस एकेडमिक नेटवर्क (गीगानेट) वार्षिक संगोष्ठी 2018।
- रेडकर, डी., गिल, एल., और गैसर, यू. (2018). डिजिटल संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण की ओर? इंटरनेट अधिकारों के विधेयक को तैयार करने के प्रयासों का मानचित्रण। इंटरनेशनल कम्युनिकेशन गजट, 80 (4), 302–319.
- ट्यूबनर, जी. (2012बी). संवैधानिक खंड : सामाजिक संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण और वैश्वीकरण, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
- सेलेस्टे, ई. (2019). डिजिटल संवैधानिक रूप से न्यायिक नियंत्रण : एक नया व्यवस्थित सिद्धांत, इंटरनेशनल रिव्यू ऑफ लॉ, कंप्यूटर्स एंड टेक्नोलॉजी, 33 (1), 76–99.
- थॉमस, पी. (2006). सूचना समाज में संचार अधिकार (सीआरआईएस) अभियान : वैश्विक मीडिया सुधार के विश्लेषण के लिए सामाजिक आंदोलन सिद्धांतों का अनुप्रयोग। इंटरनेशनल कम्युनिकेशन गजट, 68 (4), 291–312.
- त्सागोरियास, एन. (2021). साइबरस्पेस की कानूनी स्थिति : संप्रभुता का पुनरावलोकन? एन. त्सागोरियास और आर. बुचन (संपादक), अंतर्राष्ट्रीय कानून और साइबरस्पेस पर शोध पुस्तिका, एडवर्ड एल्गर पब्लिशिंग।
- सेलेस्टे, ई. (2023). इंटरनेट बिल ऑफ राइट्स : डिजिटल संविधान की ओर सामान्यीकरण और पुनः विनिर्देशन, इंडियाना जर्नल ऑफ ग्लोबल लीगल स्टडीज , 30 (2), 25–54.
- शोल्ते, जे.ए. (2004). नागरिक समाज और लोकतांत्रिक रूप से जवाबदेह वैश्विक शासन, सरकार और विपक्ष, 39 (2), 211–233.
- स्ट्रोबेल, वी. (2022). रणनीतिक मुकदमेबाजी और अंतर्राष्ट्रीय इंटरनेट कानून, ए. गोलिया जूनियर, एमसी केटेमैन, और आर. कुंज (सं.), सार्वजनिक अंतर्राष्ट्रीय कानून में डिजिटल परिवर्तन (पृष्ठ 261–284), नोमोस।
- मुलर, एमएल (2010)। नेटवर्क और राज्य : इंटरनेट शासन की वैश्विक राजनीति, एमआईटी प्रेस।
- हैबरमास, जे. (1991). सार्वजनिक क्षेत्र का संरचनात्मक परिवर्तन, पॉलिटी प्रेस।
- फ्रैंकलिन, एमआई (2010), “डिजिटल दुविधाएँ” इक्कीसवीं सदी में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, द ब्राउन जर्नल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स, 16 (2), 67–85।



भारतीय अर्थव्यवस्था पर स्टार्टअप्स योजना का प्रभाव

डॉ. कामिनी सिंह

अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र)

शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

सारांश :

भारत को सालाना 10 करोड़ से अधिक नौकरियों की जरूरत है और जो नौकरियां पैदा होती हैं वे ज्यादातर स्टार्टअप से होती हैं न कि बड़े उद्यमों से। स्टार्टअप उद्यमिता महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कारोबारी माहौल और उद्यमों में नए नवाचार, नई नौकरियां और प्रतिस्पर्धी गतिशीलता भी लाती है। आज की दुनिया में आर्थिक समृद्धि में स्टार्टअप्स की भूमिका बढ़ रही है। स्टार्टअप के मुख्य लाभों में से एक यह है कि यह नई नौकरियां पैदा करता है। वैश्विक डेटा से पता चलता है कि बड़ी कंपनियों या उद्यमों की तुलना में स्टार्टअप हमारे देश में अधिक रोजगार पैदा कर रहे हैं। अब तक, कई स्टार्टअप ने नवीनतम तकनीक आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, और रोबोटिक्स आदि पेश किए हैं। अधिकांश प्रौद्योगिकी दिग्गज कंपनियां अपने कार्यों को स्टार्टअप को आउटसोर्स करती हैं। इससे स्टार्टअप्स के कैश फ्लो को बढ़ाने में भी मदद मिलेगी। जिम्मेदारी के महत्व को ध्यान में रखते हुए कि भारतीय स्टार्टअप को भारतीय अर्थव्यवस्था के विस्तार में खेलने के लिए आवंटित किया जाता है। स्टार्टअप्स के माध्यम से प्राप्त टर्नओवर और बड़ी संख्या में नौकरियां जो स्टार्टअप्स की सुविधा के द्वारा बनाई जा सकती हैं, यहां तक कि मार्केट कंट्रोलर सिक्वोरिटीज एंड एक्सचेंज बोर्ड ऑफ इंडिया (सेबी), स्टार्टअप रेगुलेशन के उपयोग में आसानी ने स्टार्टअप के लिए बाजार फंड के प्रवाह को सुविधाजनक बनाया। यह शोध पत्र स्टार्टअप्स के प्रभाव, स्टार्टअप की वृद्धि, स्टार्टअप्स के इकोसिस्टम का विश्लेषण और भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसके प्रभाव और अर्थव्यवस्था की वृद्धि का विश्लेषण करेगा।

स्टार्टअप्स इंडिया पहल की उपलब्धि :

स्टार्टअप इंडिया भारत सरकार की एक प्रमुख पहल है जिसका उद्देश्य देश में स्टार्टअप्स और नये विचारों के लिए एक मजबूत पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करना है जिससे देश का आर्थिक विकास हो एवं बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर उत्पन्न हों। स्टार्टअप एक इकाई है, जो भारत में पांच साल से अधिक से पंजीकृत नहीं है और जिसका सालाना कारोबार किसी भी वित्तीय वर्ष में 25 करोड़ रुपये से अधिक नहीं है। यह एक इकाई है जो प्रौद्योगिकी या बौद्धिक सम्पदा से प्रेरित नये उत्पादों या सेवाओं के नवाचार, विकास, प्रविस्तारण या व्यवसायीकरण की दिशा में काम करती है। सरकार द्वारा इस संबंध में घोषित कार्य योजना स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र के सभी पहलुओं को संबोधित करने और इस आंदोलन के प्रसार में तेजी लाने की उम्मीद

करती है। स्टार्ट-अप एक्शन प्लान मुख्य रूप से इन तीन बृहद भागों में विभाजित है :-

1. सरलीकरण और प्रारंभिक सहायता
2. समर्थन और प्रोत्साहन अनुदान
3. उद्योग-शैक्षिक जगत (एकेडेमिया) भागीदारी और उद्भवन

स्टार्टअप भारत के घटक सरलीकरण और प्रारंभिक सहायता :

- **स्व-प्रमाणन पर आधारित अनुपालन व्यवस्था** - इसका उद्देश्य स्टार्टअप्स पर नियामक का बोझ कम करना है ताकि वे अपने मुख्य कारोबार पर ध्यान केन्द्रित कर सकें और अनुपालन की लागत कम रख सकें। नियामक व्यवस्थाएँ इस प्रकार और सरल एवं लचीली होंगी तथा निरीक्षण और अधिक सार्थक एवं सरल होगा।
- **स्टार्टअप इंडिया हब** - पूरे स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र के लिए एक संपर्क स्थान का निर्माण जिससे ज्ञान का आदान-प्रदान एवं वित्त पोषण हो सकें। सरकार मुख्य हितधारक होगी एवं कें तथा राज्य सरकारों, भारतीय और विदेशी पूंजीपतियों, एंजेल नेटवर्क, बैंकों, इन्क्यूबेटरों, कानूनी भागीदारों, सलाहकारों, विश्वविद्यालयों और अनुसंधान एवं विकास संस्थानों के साथ मिलकर काम करेगी।
- **मोबाइल एप्लिकेशन और पोर्टल का रोल आउट** - सरकार और नियामक संस्थानों के साथ स्टार्टअप्स के लिए एक इंटरैक्टिव मंच के रूप में कार्य करेगा। 1 अप्रैल, 2016 से यह सभी प्रमुख मोबाइल/स्मार्ट डिवाइस प्लेटफार्मों पर उपलब्ध कराया जाएगा।
- **कानूनी सहायता और कम दर पर पर तेजी से पेटेंट परीक्षण** - बौद्धिक संपदा अधिकार को बढ़ावा देने और जागरूकता लाने एवं नये स्टार्टअप्स के सतत विकास और तरक्की को सुनिश्चित करने के लिए, यह योजना पेटेंट दाखिल करने के कार्य को आसान कर देगा।
- **स्टार्टअप्स के लिए सार्वजनिक खरीद के शिथिलीकृत मानदंड** - इसका उद्देश्य अनुभवी कंपनियों की तुलना में स्टार्टअप्स के लिए समान अवसर प्रदान करना है। सरकार या सार्वजनिक उपक्रमों के द्वारा जारी निविदाओं के मामले में गुणवत्ता मानकों में छूट के बिना स्टार्टअप्स को "पूर्वानुभव/टर्नओवर" के मानदंडों में छूट दी जाएगी।
- **स्टार्टअप्स के लिए त्वरित निकासी** - यह कार्य योजना स्टार्टअप्स के लिए असफलता की स्थिति में संचालन को बंद करने में आसानी प्रदान करेगा। स्टार्टअप्स के लिए एक इंसोल्वेंसी प्रोफेशनल प्रदान किया जाएगा जो छह महीने के समय में लेनदारों के भुगतान के लिए कंपनी की आस्तियों को बेचने का प्रभारी होगा। यह प्रक्रिया सीमित देयता की अवधारणा को स्वीकार करेगी।

समर्थन और प्रोत्साहन अनुदान :

- **स्टार्टअप्स के लिए धन की व्यवस्था** - सरकार प्रति वर्ष 2500 करोड़ रुपये की एक प्रारंभिक निधि और 4 साल की अवधि में कुल 10,000 करोड़ रुपये की निधि की स्थापना करेगी।
- **स्टार्टअप्स के लिए क्रेडिट गारंटी** - स्टार्टअप्स के लिए वेंचर ऋण उपलब्ध कराने के लिए बैंकों और अन्य उधारदाताओं को प्रोत्साहित करने के लिए, राष्ट्रीय क्रेडिट गारंटी ट्रस्ट कंपनी (NCGTC) के माध्यम से क्रेडिट गारंटी तंत्र/सिडबी द्वारा प्रति वर्ष 500 करोड़ के बजट का प्रावधान अगले चार साल के लिए करने का विचार किया जा रहा है।
- **कैपिटल गेन पर कर में छूट** - स्टार्टअप्स में निवेश को बढ़ावा देने के लिए सरकार उनको कैपिटल गेन

में छूट देगी जिनको वर्ष के दौरान पूंजीगत लाभ हुआ है और जिन्होंने सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त फंड ऑफ फंड्स में इस तरह के पूंजीगत लाभ का निवेश किया है।

- **स्टार्टअप्स को तीन वर्ष के लिए टैक्स छूट** - भारत में स्टार्टअप्स की कार्यशील पूंजी आवश्यकता को संबोधित करने, विकास को प्रोत्साहित करने और उन्हें एक प्रतियोगी मंच प्रदान करने के लिए स्टार्टअप्स के मुनाफे को 3 वर्ष की अवधि के लिए कर से मुक्त रखा जाएगा।
- **उचित बाजार मूल्य पर निवेश में टैक्स छूट** - स्टार्टअप्स में इन्क्यूबेटर्स द्वारा निवेश पर निवेश कर से मुक्त रखा जाएगा।

उद्योग-एकेडेमिया भागीदारी और उद्भवन :

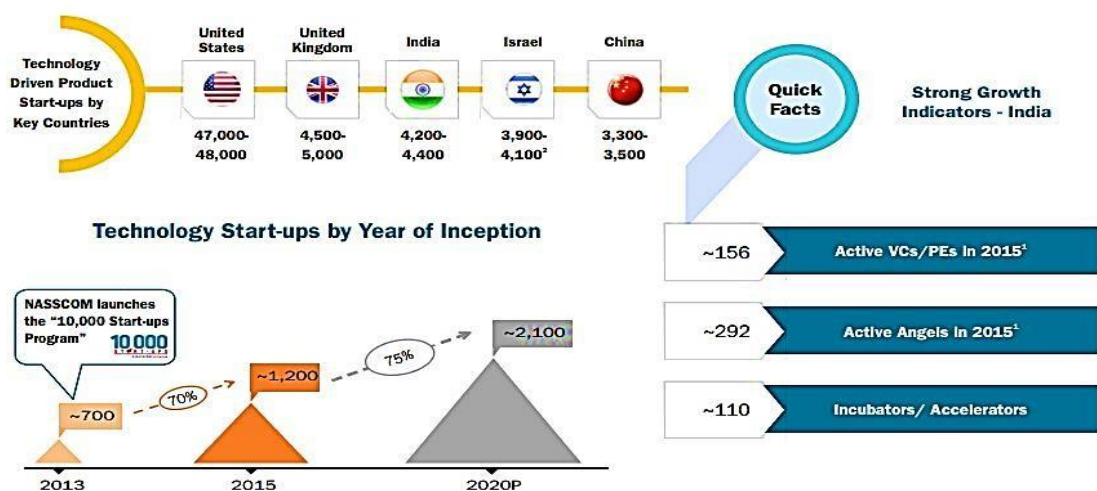
- **अभिनव नई खोज के प्रदर्शन एवं सहयोग मंच प्रदान करने के लिए स्टार्टअप उत्सवों का आयोजन** - भारत में स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र को मजबूत करने के लिए सरकार ने राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्टार्टअप उत्सव शुरू करने का प्रस्ताव किया है। यह संभावित निवेशकों, परामर्शदाताओं और साथी स्टार्टअप्स को सम्मिलित करते हुए एक व्यापक जन समुदाय के समक्ष उनके काम और विचारों का प्रदर्शन करने के लिए एक मंच होगा।
- **अटल अभिनव मिशन (एआईएम) का स्व रोजगार और प्रतिभा उपयोग (सेतु) प्रोग्राम के साथ लॉन्च** - यह विशेष रूप से प्रौद्योगिकी संचालित क्षेत्रों में विश्व स्तर के नवाचार हब, भव्य चुनौतियां, स्टार्टअप कारोबार और अन्य स्वरोजगार गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए एक मंच के रूप में काम करेगा।
- **इन्क्यूबेटर सेटअप के लिए निजी क्षेत्र की विशेषज्ञता का उपयोग** - सरकार सार्वजनिक निजी भागीदारी में देश भर में इन्क्यूबेटर्स की स्थापना के लिए एक नीति और ढांचे का निर्माण करेगा।
- **राष्ट्रीय संस्थानों में अभिनव की स्थापना** - देश में अनुसंधान एवं विकास के प्रयासों में वृद्धि के लिए सरकार राष्ट्रीय संस्थानों में नवाचार और उद्यमिता के 31 केंद्रों की स्थापना करेगी। छात्रों द्वारा स्टार्टअप्स को प्रोत्साहित करने के लिए 13 केंद्रों को 50 लाख रुपये की वार्षिक वित्त सहायता 3 साल के लिए प्रदान की जायेगी।
- **आई आई टी मद्रास में स्थापित अनुसंधान पार्क की तर्ज पर 7 नये अनुसंधान पार्कों की स्थापना** - शिक्षाविदों और उद्योग के संयुक्त अनुसंधान एवं विकास के प्रयासों के माध्यम से सफल नवाचारों का विकास करने के लिए सरकार 100 करोड़ रुपये प्रति संस्थान के आरंभिक निवेश के साथ संस्थानों में 7 नए अनुसंधान पार्क की स्थापना करेगी। ये अनुसंधान पार्क आई आई टी मद्रास में स्थापित अनुसंधान पार्क की तर्ज पर होंगे।
- **जैव प्रौद्योगिकी सेक्टर में स्टार्टअप्स को बढ़ावा देना** - भारत में जैव प्रौद्योगिकी क्षेत्र एक मजबूत विकास के पथ पर है। जैव प्रौद्योगिकी विभाग वर्ष 2020 तक 2000 स्टार्टअप्स की स्थापना करने के लिए प्रति वर्ष करीब 300-500 नये स्टार्टअप्स की स्थापना के लिए प्रयासरत है।
- **छात्रों के लिए अभिनव केन्द्रित कार्यक्रमों की शुरुआत** - सरकार युवा छात्रों के बीच अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देगी और इसके लिए कार्यक्रमों जैसे अभिनव कोर, निधि (एक भव्य चुनौती कार्यक्रम), उच्चतर आविष्कार योजना आदि की शुरुआत की है। शुरुआत में ये योजनायें केवल आईआईटी के लिए लागू होंगी और प्रत्येक परियोजना 5 करोड़ रुपये तक की हो सकती है।

• **वार्षिक इन्क्यूबेटर गैंड चैलेंज**- इन्क्यूबेटर एक प्रभावी स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करने के लिए प्रारंभिक चरण में स्टार्टअप्स की पहचान करने और उन्हें अपने जीवन चक्र के विभिन्न चरणों में समर्थन देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सरकार पहले चरण में विश्व स्तर के इन्क्यूबेटरों के निर्माण की दिशा में निवेश करने का प्रस्ताव कर रही है। शुरुआती लक्ष्य ऐसे 10 इन्क्यूबेटरों की स्थापना करना है। इसके लिए सरकार विश्व स्तरीय बनने के लायक 10 संभावित इन्क्यूबेटरों की पहचान करेगी। इनमें से प्रत्येक को वित्तीय सहायता के रूप में 10 करोड़ रुपये दिये जायेंगे और ये इस तरह के अन्य इन्क्यूबेटरों के लिए संदर्भ मॉडल बनेंगे। इसके बाद इनको स्टार्टअप इंडिया पोर्टल पर प्रदर्शित किया जाएगा। ऐसे इन्क्यूबेटरों की पहचान के लिए ग्रैंड चौलेंज प्रतियोगिता आयोजित की जायेगी और इसे वार्षिक रूप से जारी रखा जाएगा।

श्री नरेंद्र मोदी ने 16 जनवरी, 2016 को स्टार्टअप इंडिया पहल की शुरुआत की। 19 कार्य बिंदुओं के साथ एक कार्य योजना, सरलीकरण और हैंड-होलिडिंग, वित्त पोषण सहायता और उद्योग अकादमिक साझेदारी और ऊष्मायन पर ध्यान केन्द्रित किया गया था। औद्योगिक नीति और संवर्धन विभाग उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करने और नवाचार को बढ़ावा देने के लिए सक्रिय रूप से आवश्यक उपाय कर रहा है। स्टार्टअप इंडिया के तहत 14,600 से अधिक स्टार्टअप मान्यता प्राप्त हैं जो 479 जिलों में फैले हुए हैं, जिसमें सभी 29 राज्यों और 6 कें शासित प्रदेशों को विकास चरण प्रदान करने के लिए शामिल किया गया है।

स्टार्टअप्स को फंडिंग के लिए 10,000 करोड़ रुपये के फंड ऑफ फंड्स (एफएफएस) की स्थापना की गई है। यह नए भारत के निर्माण की दिशा में नवप्रवर्तनकर्ताओं और जोखिम लेने वालों का समर्थन कर रहा है। सरकार पहले ही एफएफएस के माध्यम से 32 वेंचर कैपिटल फंड के लिए 1,611.7 करोड़ रुपये की प्रतिबद्धता जता चुकी है। सरकार द्वारा योगदान किए गए फंड ने बीसी फंड को 7,000 करोड़ रुपये से अधिक की राशि जुटाने में सक्षम बनाया है जो स्टार्टअप्स के लिए उपलब्ध है। जब ये प्रतिबद्ध फंड अपनी फंड जुटाने की प्रक्रिया पूरी कर लेंगे, तो स्टार्टअप्स द्वारा उपयोग किए जाने के लिए कुल INR 13,888 करोड़ उपलब्ध होंगे। इस प्रकार, सरकार के योगदान ने स्टार्टअप्स के लिए 8 × फंडिंग को उत्प्रेरित किया है।

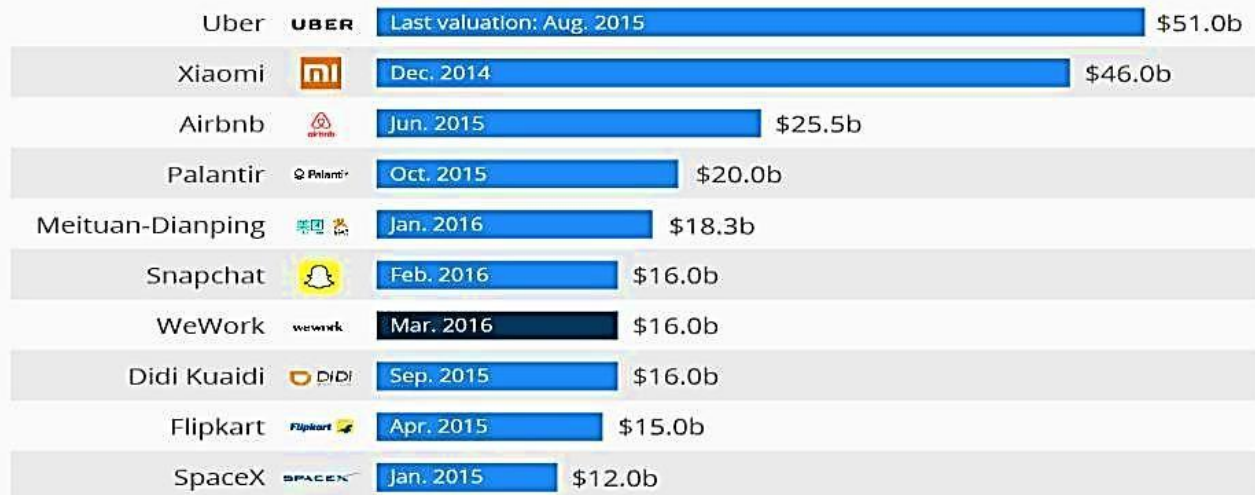
The country has moved up to 3rd position and has the fastest growing base of start-ups worldwide...



ग्राफ :1 - भारत वैश्विक स्तर पर तीसरा सबसे बड़ा टेक स्टार्ट-अप स्थान है

The 10 Most Valuable Start-Ups in the World

Latest valuation of the 10 most valuable venture-backed private companies



CC BY ND
@StatistaCharts

Source: Dow Jones VentureSource, The Wall Street Journal

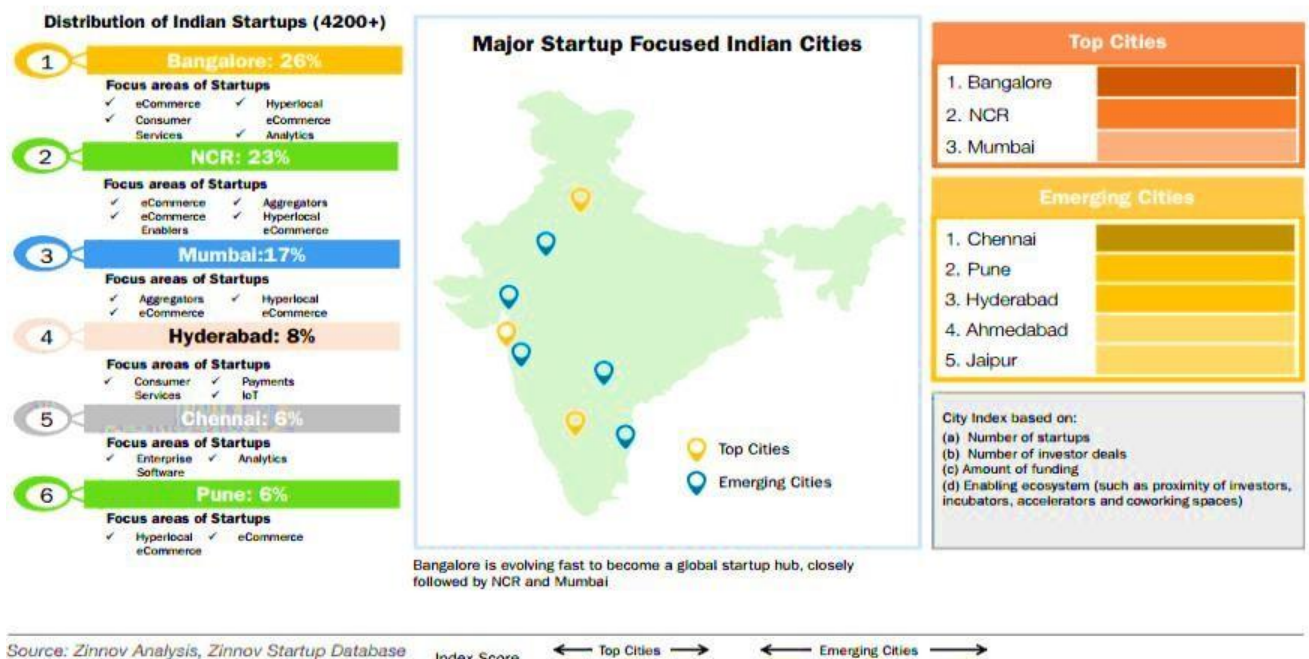
statista

ग्राफ : 2- भारतीय स्टार्ट-अप वैश्विक हो रहे हैं



ग्राफ : 3 - भारतीय अर्थव्यवस्था में स्टार्ट-अप कैसे योगदान दे रहे हैं

66% of start-ups are concentrated in the top 3 cities of Bangalore, NCR and Mumbai



ग्राफ : 4 – शहरों में स्थित प्रमुख स्टार्ट-अप

आर्थिक विकास को बढ़ाने के लिए स्टार्ट अप की भूमिका :

- **स्टार्टअप अधिक रोजगार सृजित करना** : अगर आप एंटरप्रेन्योर बनने जा रहे हैं तो आप ज्यादा रोजगार सृजित कर सकते हैं। इस प्रकार हमारे देश में बेरोजगारी की दर भी कम हो जाती है। इसलिए रोजगार सृजन स्टार्टअप्स के मुख्य लाभों में से एक है
- **धन का सृजन** : चूंकि उद्यमी अपने स्वयं के संसाधनों का निवेश करके निवेशकों को आकर्षित कर रहे हैं, इसलिए स्टार्टअप के बढ़ने पर देश के लोगों को लाभ मिलेगा। चूंकि पैसा समाज के साथ बांट रहा है, राष्ट्र के भीतर धन पैदा हो रहा है।
- **बेहतर जीवन स्तर** : स्टार्टअप लोगों के जीवन को बेहतर बनाने के लिए नवाचारों और प्रौद्योगिकियों को लागू कर सकते हैं। ऐसे कई स्टार्टअप हैं जो ग्रामीण क्षेत्रों में समुदाय के विकास के लिए काम कर रहे हैं।
- **सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि** : जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) किसी देश के आर्थिक विकास को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विश्व बैंक का कहना है कि भारत दुनिया में आर्थिक विकास के रूप में सबसे तेजी से बढ़ने वाला देश बन जाएगा। अधिक स्टार्टअप्स को समर्थन और प्रोत्साहन देकर, घरेलू स्तर पर अधिक राजस्व उत्पन्न करना संभव है और उपभोक्ता की पूंजी भी भारतीय अर्थव्यवस्था के चारों ओर प्रवाहित होगी।

पूर्व साहित्य की समीक्षा :

अरिहंत जैन “भारतीय अर्थव्यवस्था को बहाल करने वाले स्टार्टअप – भारतीय अर्थव्यवस्था पर स्टार्टअप के प्रभाव पर एक अध्ययन” श्री राम कॉलेज ऑफ कॉमर्स का एक छात्र पत्रिका, खंड –2, अंक –1, 2017–18

यह पेपर वर्तमान स्टार्टअप वातावरण को रखने के लिए रुचि के मूलभूत बिंदु देता है जिसमें भारतीय सेटिंग के अंदर अभिनव है और विभिन्न राष्ट्रों और राज्यों की नीतियों के विपरीत नीतियों के विपरीत आज भारत का सामना करने वाली संबंधित कठिनाइयों का हिस्सा है, यह पता लगाने के लिए कि कौन सा टी सबसे सकारात्मक है और दर्शाता है स्टार्टअप के नवाचार और पारिस्थितिकी तंत्र की दिशा में भारत की विधायिका द्वारा किए गए प्रयास। शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य जीडीपी और पंजीकृत स्टार्टअप के बीच संबंध स्थापित करना, राज्यों और देशों में तुलना करना, विभिन्न योजनाओं की प्रभावशीलता को मापना है। यह पाया गया है कि स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम विकास की दिशा में एक बड़ा कदम है क्योंकि यह प्रभावी पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण की अधिकांश प्रमुख कठिनाइयों की ओर जाता है। नीति बनाई जाती है लेकिन सफलता उसके क्रियान्वयन पर निर्भर करती है। नए नीतिगत सुधार मजबूत विकास की इच्छा को दर्शाते हैं और युवाओं के उत्साह और उत्साह के साथ प्रतिध्वनित होते हैं।

मीनाक्षी बिंदल, भुवन गुप्ता, स्वीटी दुबे “भारतीय अर्थव्यवस्था पर स्टार्टअप की भूमिका” इंजीनियरिंग और प्रबंधन अनुसंधान के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, आईएसएसएन 9 ऑनलाइन) : 2250— 0758, आईएसएसएन (प्रिंट) — 2394—6962, खंड —8, अंक —5, अक्टूबर —2018

मुख्य उद्देश्य :

स्टार्टअप इंडिया के लिए पहल का विश्लेषण करना, स्टार्टअप के सामने आने वाली समस्याओं को समझना, लोगों पर स्टार्टअप के प्रभाव का अध्ययन करना, स्टार्टअप के बारे में जागरूकता का अध्ययन करना है। यह द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। यह पाया गया है कि सरकार को न केवल भारत में बल्कि पूरे विश्व में स्टार्टअप्स को खुद को बढ़ावा देने में मदद करनी चाहिए, साथ ही ऐसी नीतियां भी बनानी चाहिए जो स्टार्टअप के अनुकूल हों ताकि भारतीय स्टार्टअप को एक बड़ा बढ़ावा मिले और वे और बेहतर रोजगार पैदा कर सकें। हैस वेस्टलंड “आर्थिक उद्यमिता, स्टार्टअप और स्थानीय विकास पर उनके प्रभाव : स्वीडन का मामला” ईआरएसए सम्मेलन पत्र मते 11 P-327, यूरोपीय क्षेत्रीय विज्ञान संघ, 2011

वर्तमान अनुभवजन्य उद्यमिता साहित्य मुख्य रूप से उद्यमिता (स्टार्टअप की संख्या के रूप में मापा जाता है) और आर्थिक विकास के बीच एक सकारात्मक संबंध दर्शाता है। हालांकि, जिन तंत्रों द्वारा उद्यमिता अपना सकारात्मक प्रभाव डालती है, वे स्पष्ट नहीं हैं। रोजगार या सकल घरेलू उत्पाद पर स्टार्टअप का शुद्ध परिणाम कम से कम अल्पावधि में नकारात्मक हो सकता है, क्योंकि कुशल, नई कंपनियां कम कुशल लोगों को बंद कर सकती हैं। इस धारणा के आधार पर कि स्टार्टअप के रूप में आर्थिक उद्यमिता फर्म स्तर (फ्रिट्च एंड म्यूएलर 2004) और सामुदायिक स्तर पर उद्यमशील सामाजिक पूंजी (वेस्टलंड और बोल्टन 2003) पर बिना देखे गए आपूर्ति दुष्प्रभाव पैदा करती है।

यह पेपर स्टार्टअप और स्थानीय विकास के बीच संबंधों का अध्ययन करता है। 2000 और 2008 के बीच स्वीडन में नगरपालिका स्तर पर। हम न केवल कुल स्टार्टअप सहित एक अद्वितीय डेटाबेस का उपयोग करते हैं, बल्कि जनसंख्या और रोजगार वृद्धि पर उद्यमिता के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए छह शाखाओं में विभाजित स्टार्टअप पर डेटा का उपयोग करते हैं। विश्लेषण सभी नगर पालिकाओं के साथ-साथ नगर पालिका प्रकार और विकास दर द्वारा किया जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य :

अध्ययन का उद्देश्य भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न चरों पर स्टार्टअप्स के प्रभाव का अध्ययन करना, स्टार्टअप्स की पहल का विश्लेषण करने के लिए जीडीपी, जीएनआई, भुगतान संतुलन, आयात, निर्यात, विदेशी रिजर्व पर स्टार्टअप के प्रभाव का विश्लेषण करना है।

अनुसंधान पद्धति स्वतंत्र चर : स्टार्टअप

आश्रित चर : जीडीपी, जीएनआई, आयात, निर्यात, भुगतान संतुलन, विदेशी रिजर्व, प्रति व्यक्ति जीडीपी।

अनुसंधान रेखा - चित्र

अनुसंधान डिजाइन तीन प्रकार के होते हैं -

- खोजपूर्ण अनुसंधान डिजाइन।
- वर्णनात्मक अनुसंधान डिजाइन।
- कारण अनुसंधान डिजाइन।

डेटा के स्रोत : डेटा दो प्रकार के होते हैं :-

प्राथमिक डेटा और द्वितीयक डेटा। इस शोध में मैंने अध्ययन के लिए द्वितीयक आँकड़े लिए हैं। डेटा संग्रह उपकरण : मैंने अध्ययन के लिए भारतीय रिजर्व बैंक की रिपोर्ट, शोध प्रकाशन, समाचार पत्र, डीआईपीपी की रिपोर्ट आदि का उपयोग किया है।

जनसंख्या :

पंजीकृत स्टार्टअप के सभी वर्ष के डेटा और भारतीय अर्थव्यवस्था डेटा।

समंक संकलन : मैंने 2016 से 2019 तक नमूना आकार के रूप में 4 साल लिए हैं, क्योंकि स्टार्टअप भारतीय पहल 2016 से लागू की गई है। मैंने कुल संख्या का उपयोग किया है। डीआईपीपी रिपोर्ट से पंजीकृत स्टार्टअप डेटा और आरबीआई रिपोर्ट से आर्थिक चर डेटा। मैंने विश्लेषण के लिए मान्यता प्राप्त स्टार्टअप का इस्तेमाल किया है।

5. डेटा विश्लेषण और व्याख्या :-

मौजूदा कीमत पर जीडीपी पर स्टार्टअप्स का प्रभाव

तालिका : 1- वर्तमान मूल्य पर स्टार्टअप और जीडीपी की संख्या

Year	No. of startups recognized by DIPP	GDP at current price (Rs in cr.)
2021	503	13771874
2022	5373	15362386
2023	8724	17095005
2024	17390	19010164

परिणाम - Correlation Between No. of Start-ups and GDP at Current Price =0.98608

व्याख्या :- पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और वर्तमान मूल्य पर जीएनआई के बीच सह-संबंध गुणांक की गणना से स्पष्ट है कि पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और वर्तमान मूल्य पर जीएनआई के बीच सकारात्मक सह-संबंध है। इसका मतलब है कि स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था के जीएनआई को बढ़ाने में मदद करते हैं।

मौजूदा कीमत पर जीएनआई पर स्टार्टअप्स का प्रभाव।

तालिका : 2 - वर्तमान मूल्य पर स्टार्टअप और जीएनआई की संख्या

Year	No. of startups recognized by DIPP	Gross national income at current price (in cr.)
2021	503	13612095
2022	5373	15185986
2023	8724	16910192
2024	17390	18816538

Result : correlation between no. of start-ups and GNI at current price =0.986173

व्याख्या :- पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और मौजूदा कीमत पर जीडीपी के बीच सह-संबंध गुणांक की गणना से स्पष्ट है कि पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और मौजूदा कीमत पर जीडीपी के बीच सकारात्मक सह-संबंध है। इसका मतलब है कि स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था की जीडीपी को बढ़ाने में मदद करते हैं।

प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद पर स्टार्टअप का प्रभाव (रूपये)

तालिका : 3- स्टार्टअप की संख्या और प्रति व्यक्ति जीडीपी (रु.)

Year	Number of startups recognized by DIPP	Per capita GDP (RS.)
2021	503	107341
2022	5373	118263
2023	8724	129901
2024	17390	142719

Result: correlation between number of start-ups And per capita GDP =0.985636

व्याख्या :- पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और प्रति व्यक्ति जीडीपी के बीच सह-संबंध गुणांक की गणना से स्पष्ट है कि पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और प्रति व्यक्ति जीडीपी के बीच सकारात्मक सह-संबंध है। इसका मतलब है कि स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था की प्रति व्यक्ति जीडीपी बढ़ाने में मदद करते हैं।

निर्यात पर स्टार्टअप का प्रभाव

तालिका : 4- स्टार्टअप और निर्यात की संख्या

Year	Number of startups recognized by DIPP	Exports in RS. crore
2021	503	1716384
2022	5373	1849434
2023	8724	1956515
2024	17390	2307663

Result: correlation between number of start-ups and exports =0.995208

व्याख्या :- मैंने पंजीकृत स्टार्टअप और निर्यात की संख्या के बीच सह-संबंध गुणांक की गणना से स्पष्ट है कि पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और निर्यात के बीच सकारात्मक सह-संबंध है। इसका मतलब है कि स्टार्टअप

भारतीय अर्थव्यवस्था के निर्यात को बढ़ाने में मदद करते हैं।

मौजूदा कीमत पर जीडीपी पर स्टार्टअप का प्रभाव

तालिका : 5- स्टार्टअप और आयात की संख्या

Year	Number of startups recognized by DIPP	Imports in RS. crore
2021	503	2490306
2022	5373	2577675
2023	8724	3001033
2024	17390	3594373

Result: correlation between number of start-ups and imports=0.976658

व्याख्या :- मैंने पंजीकृत स्टार्टअप और आयात की संख्या के बीच सह-संबंध गुणांक की गणना से स्पष्ट है कि पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और आयात के बीच सकारात्मक सह-संबंध है। इसका मतलब है कि स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था का आयात बढ़ा रहे हैं। यह संभव नहीं है कि स्टार्टअप आयात बढ़ाएँ। यहां स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था के आयात को कम करने में मदद नहीं कर रहा है। स्टार्टअप और आयात के बीच नकारात्मक सह-संबंध होना चाहिए।

भुगतान संतुलन पर स्टार्टअप का प्रभाव :

तालिका : 6-स्टार्टअप की संख्या और भुगतान संतुलन

Year	Number of startups recognized by DIPP	Balance of payment Rs. in crore
2021	503	115830
2022	5373	144234
2023	8724	280816
2024	17390	-20204

Result: correlation between number of start-ups and balance of payment = -0.46784388

व्याख्या : पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और भुगतान संतुलन के बीच सह-संबंध गुणांक की गणना से स्पष्ट है कि पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और के बीच नकारात्मक सह-संबंध है। भुगतान देय। स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था के भुगतान संतुलन को सुधारने में सहायक नहीं हैं।

विदेशी मुद्रा भंडार पर स्टार्टअप का प्रभाव

तालिका : 7- स्टार्टअप और विदेशी मुद्रा भंडार की संख्या

Year	Number of startups recognized by DIPP	Foreign exchange reserve in US million
2021	503	31891
2022	5373	43224
2023	8724	52401
2024	17390	30094

Result: correlation between number of start-ups and foreign exchange reserve= -0.14246

व्याख्या : पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और विदेशी मुद्रा भंडार के बीच सह-संबंध गुणांक की गणना की गई है। जिससे स्पष्ट है कि पंजीकृत स्टार्टअप की संख्या और विदेशी मुद्रा भंडार के बीच नकारात्मक सह-संबंध है। स्टार्टअप और विदेशी मुद्रा भंडार के बीच सकारात्मक सह-संबंध होना चाहिए। स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था के विदेशी मुद्रा भंडार को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रहे हैं।

परिणाम :-

तालिका : 8 - स्टार्टअप और भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न चर के बीच संबंध

VARIABLES OF INDIAN ECONOMY	CO-RELATION	RESULT	IMPACT
GDP AT CURRENT PRICE	0.986089	Positive co-relation	Positive
GNI AT CURRENT PRICE	0.986173	Positive co-relation	Positive
PER CAPITA GDP	0.985636	Positive co-relation	Positive
EXPORT	0.995208	Positive co-relation	Positive
IMPORT	0.976658	Positive co-relation	Negative
FOREIGN RESERVE	-0.14246	Negative co-relation	Negative
BALANCE OF PAYMENT	-0.46784388	Negative co-relation	Negative

यह पाया गया है कि वहां स्टार्टअप जीडीपी, जीएनआई, प्रति व्यक्ति जीडीपी, निर्यात पर सकारात्मक प्रभाव डाल रहे हैं। लेकिन स्टार्टअप आयात, विदेशी मुद्रा भंडार और भुगतान संतुलन को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रहे हैं। संक्षेप में स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास पर सकारात्मक प्रभाव डाल रहे हैं, लेकिन यह भुगतान संतुलन को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रहा है।

निष्कर्ष :

स्टार्टअप दुनिया को बदल सकते हैं और आने वाले वर्षों में अधिक से अधिक स्टार्टअप नवाचार और रचनात्मकता के साथ विकसित होंगे। उद्यमिता ही एक राष्ट्र के आर्थिक विकास को बढ़ाने का एकमात्र तरीका है। और एक छोटे से विचार को बड़ा अभिनव समाधान कहा जा सकता है जो आपका भविष्य बदल सकता है। इसलिए यदि आपके पास कोई विचार है, तो असफलता और जोखिम लेने के डर से अपने सपनों को अवरुद्ध न करें। अपने विचार को स्टार्टअप में विकसित करें और हमारे देश के विकास में योगदान दें। अब हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि किसी राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए स्टार्टअप महत्वपूर्ण हैं। हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि स्टार्टअप भारतीय अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव डाल रहे हैं। हालाँकि सरकार को भारत में अधिक स्टार्टअप को बढ़ावा देने और बनाने की आवश्यकता है ताकि यह भारत के सकल घरेलू उत्पाद को बढ़ाने में मदद करे। क्योंकि, वर्तमान में भारत की जीडीपी बहुत कम है और विदेशी रिजर्व भी। सरकार लोगों को व्यवसाय शुरू करने के लिए प्रोत्साहित कर रही है और इसके लिए क्या कदम उठाए जा रहे हैं जो वास्तव में भारत के स्टार्टअप उद्योग के उज्ज्वल भविष्य के लिए अच्छा है और यह निश्चित रूप से आगामी दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था के साथ-साथ जीडीपी को भी बढ़ावा देगा।

सुझाव :

- प्रत्येक राज्य के लिए स्टार्टअप नीति, स्टार्टअप पोर्टल स्थापित करके राज्य पारिस्थितिकी तंत्र का

निर्माण।

- सरकार को स्टार्टअप्स के लिए और अधिक प्रोत्साहन प्रदान करना चाहिए।
- उद्यमशीलता की गतिविधि को बढ़ावा देने और अधिक नवीनता पैदा करने के लिए कार्यक्रम आयोजित करना।
- स्टार्टअप पहल के बारे में अधिक जागरूकता को बढ़ावा देना।
- सरकार द्वारा घोषित नीतियों और प्रोत्साहनों का वास्तविक समय पर कार्यान्वयन।
- उन स्टार्टअप्स को बढ़ावा दें जो अपने उत्पाद को दूसरे देश में निर्यात कर रहे हैं।
- स्टार्टअप को बढ़ावा देना और अधिक प्रोत्साहन देना जो रोजगार के अधिक अवसर प्रदान कर रहे हैं।

सन्दर्भ :-

1. जैन अरिहंत (2017-18), भारतीय अर्थव्यवस्था को बहाल करने वाले स्टार्टअप? – भारतीय अर्थव्यवस्था पर स्टार्टअप के प्रभाव पर एक अध्ययन, श्री राम कॉलेज ऑफ कॉमर्स का एक छात्र पत्रिका, खंड-2, अंक-1।
2. बिंदल मीनाक्षी, गुप्ता भुवन, दुबे स्वीटी (2018)। भारतीय अर्थव्यवस्था पर स्टार्टअप की भूमिका इंजीनियरिंग और प्रबंधन अनुसंधान के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, आईएसएसएन (ऑनलाइन) : 2250-0758, आईएसएसएन (प्रिंट) – 2394-6962, खंड-8, अंक-5।
3. वेस टुंड हंस (2011), आर्थिक उद्यमिता, स्टार्टअप और स्थानीय विकास पर उनके प्रभाव- स्वीडन का मामला। ईआरएसए सम्मेलन पत्र मते 11 P-327, यूरोपीय क्षेत्रीय विज्ञान संघ।
4. डॉ सुनीति चंडोक (2016), भारत दुनिया का सबसे तेजी से बढ़ता स्टार्टअप इकोसिस्टम : एक अध्ययन। एमिटी रिसर्च जर्नल ऑफ टूरिज्म, एविएशन एंड हॉस्पिटैलिटी वॉल्यूम 01, अंक 02।
5. डी. घोष और डी. अंशुल (2016), स्टार्ट-अप इंडिया का काम प्रगति पर है।
6. नैसकॉम (2015), NASSCOM स्टार्ट-अप इकोसिस्टम रिपोर्ट 2015 : भारत 4,200 से अधिक स्टार्टअप के साथ विश्व स्तर पर तीसरे स्थान पर है।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 7-8
पृष्ठ : 70-79

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

भारतीय ऑनलाइन बाजार का स्वरूप – एक विरलेषणात्मक अध्ययन

डॉ. हर्षिता श्रीवास्तव

अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र)

शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

सारांश :-

वैश्वीकरण के इस युग में सम्पूर्ण विश्व एक गाँव में तबदील हो गया है। टेक्नोलॉजी में आये क्रांतिकारी परिणामों ने पुरे विश्व की अर्थव्यवस्था को बदलकर रख दिया है। उत्पादन, आय, रोजगार, क्रय-विक्रय सभी में इन्टरनेट के ऑनलाईन प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं। भारत में 1991 के पूर्व उपभोक्ता फुटकर व्यापारियों, दुकानदारों, हाट बाजार, प्रदर्शनियों व मेलों में से वस्तुओं का क्रय किया करते थे। वैश्वीकरण ने बड़े-बड़े मॉल खड़े कर उपभोक्ताओं को एक ही स्थान पर सभी वस्तुएँ उपलब्ध करवा दी किन्तु सूचना तकनीकि में आए क्रांतिकारी बदलाव ने इन्टरनेट के माध्यम से ऑनलाईन शॉपिंग का मार्ग उपलब्ध करवा कर मार्केटिंग व शॉपिंग के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव लाकर उपभोक्ता के लिए 24 घन्टे घर बैठे ऑनलाईन वेबसाइट के माध्यम से खरीदी करने के द्वार खोल दिये। इन्टरनेट के विकास से देश के अन्दर और विभिन्न देशों के बीच व्यापारिक लेन-देन करने के तरीकों में एक बड़ा परिवर्तन किया है। आज ई-कॉमर्स वेबसाइटें विभिन्न उत्पादों और ब्रांडों के असीमित चयन हेतु उपभोक्ता के सौदेबाजी को अधिक शक्तिशाली बना दिया है। उपभोक्ता एक ही विलक में ब्रांड अथवा विभिन्न ऑनलाइन ई-कॉमर्स रिटेल स्टोर पर उपलब्ध विभिन्न उत्पादों का चयन करते हैं। इस प्रकार आज के प्रतिस्पर्धी इलेक्ट्रॉनिक वातावरण में ग्राहक केन्द्रित ई-कॉमर्स खुदरा व्यापारी अपने व्यवसाय में सफल हो रहे हैं।

मुख्य शब्द :- आनलाईन बाजार, वैश्वीकरण, ई-कामर्स, आर्थिक विकास।

प्रस्तावना :-

इंटरनेट के आगमन के साथ एक दशक में इसके उपयोक्ताओं की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है और अभी भी उपयोक्ताओं की संख्या में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। इन्टरनेट के विकास ने आज जनसंचार को इतना आसान और कम समय लेने वाला बना दिया है। इसके आविष्कार तथा उपयोग से समाज को लाभान्वित करने के लिए लोग नित नये तरीके खोज रहे हैं। इंटरनेट के उल्लेखनीय प्रगति और उपयोग के कारण ही ई-कॉमर्स का विकास हुआ है। ऑनलाइन शॉपिंग के लिए ई-कॉमर्स एक प्रमुख स्वरूप है। यह ऑनलाइन

वेबसाइटों के ई-स्टोर के माध्यम से उत्पादों और सेवाओं की खरीद तथा विक्री से संबंधित है। मूलतः ई-कॉमर्स की क्रान्ति का सबसे बड़ा प्रभाव उस तरह से देखा जा सकता है जिस तरह से भारतीय उपभोक्ता उत्पाद की खरीददारी में करते हैं। ई-कॉमर्स के व्यवसाय को बढ़ाने में भौगोलिक सीमाएँ रुकावट नहीं बनती है बल्कि यह व्यवसाय देश के दूर-दराज के क्षेत्रों में भी पूरा करने में सक्षम है। ऑनलाइन शापिंग की क्रियाओं ने उत्पादों और सेवाओं की खरीद और विक्री को आसान और तीव्र बना दिया है। भारत में एक दशक के अन्दर अत्यधिक संख्या में तकनीकी स्टार्ट-अप ई-कॉमर्स कंपनियाँ व्यवसाय में संलग्न हो चुकी हैं। ई-कॉमर्स के विभिन्न भागों/खण्डों की वृद्धि को देखते हुए कई बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भारत में अपने ऑनलाइन स्टोर लॉन्च किये हैं। जिसके कारण ही ई-कॉमर्स व्यवसायियों के बीच प्रतिस्पर्धा में अत्यधिक वृद्धि हुई है।

ऑनलाइन शापिंग का इतिहास मूलरूप से आधुनिक कम्प्यूटर के विकास से प्रारम्भ हुआ है। आरम्भिक समय में केवल बिजनेस-टू-बिजनेस (बी-2-बी) लेन-देन की क्रियाएँ ही होती थी। लेकिन वर्तमान समय में यह बहु-क्षेत्रीय होने के साथ-साथ अरबों डालर के उद्योग में सम्मिलित हो गया है। इस व्यवसाय में लेन-देन की विविध-क्रियाएँ ऑनलाइन प्रक्रिया द्वारा संचालित होती हैं। इसीलिए ऑनलाइन शापिंग अब प्रत्येक ग्राहक की दिनचर्या का हिस्सा बन गया है। आज उपभोक्ता जहाँ ऑनलाइन सेवाएँ प्राप्त कर समय बचाते हैं वहीं दूसरी इस व्यवसाय की सेवाएँ लेने से जीवन स्तर में उत्तरोत्तर वृद्धि दर्ज कर रहे हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के माइकल एल्ट्रिक साप्ताहिक खरीददारी के लिए अपने दोस्तों व और परिवार के साथ प्रत्येक शुक्रवार की शाम को सुपर मार्केट जाया करते थे। यहीं से उनके मन में विचार आया कि क्यों न हम ऑनलाइन सामानों के विक्री प्रारम्भ करें। अपने इस विचार को एक कार्यरूप में परिवर्तित करने के लिए सन् 1979 में माइकल एल्ट्रिक ने रेडिफॉन/रेडिफ्यून कम्प्यूटर का सफल आयोजन किया। इसके लिए उन्होंने 26 घरेलू रंगीन टेलीविजन को एक घरेलू टेलीफोन लाइन के माध्यम से रियल-टाइम ट्रांजेक्शन प्रोसेस के लिए कम्प्यूटर से जोड़ा और खरीददारी हेतु लेन-देन कार्यक्रम को एक साथ स्थापित किया। माइकल एल्ट्रिक का यह शानदार विचार ई-कॉमर्स का सबसे बड़ा हिस्सा बना जो ऑनलाइन शापिंग के रूप में जाना जाता है। इसके बाद उन्होंने 1980 में बिजनेस-टू-बिजनेस (बी-2-बी) ई-कॉमर्स मॉडल की मार्केटिंग प्रारंभ की जो आर्थिक रूप से व्यवहार जनक सिद्ध हुई। इसके बाद 1990 के दशक में बिजनेस-टू-कस्टमर (बी-2-सी) ई-कॉमर्स मॉडल भी व्यक्तिगत कम्प्यूटर और इंटरनेट के व्यापक उपयोग के साथ आर्थिक रूप से व्यवहार में आया। वर्ल्ड वाइड वेब सर्वर और ब्राउजर की शुरुआत 1990 में टिम बर्नर्स ली द्वारा की गई। इसे 1991 में व्यावसायिक उपयोग के लिए खोला गया था। विश्व का प्रथम ऑनलाइन स्टोर चार्ल्स स्टैंक द्वारा 1992 में खोला गया। सन् 1994 में जेफ बेजोफ ने एमेजन ई-कॉमर्स कंपनी का कार्यालय वासिंगटन के सिएटल में खोला। इसी वर्ष एसएसएल एन्क्रिप्शन प्रणाली नेटस्केप द्वारा विकसित की गई, जिससे ऑनलाइन डेटा ट्रांसफर की सुरक्षा बढ़ी। पिज्जा हट ने 1994 में एक ऑनलाइन पिज्जा की दुकान खोली गई। ऑनलाइन कारोबार संचालित करने के लिए सन् 1996 में ईबे की स्थापना हुई और टेस्को ने भी इसी वर्ष ऑनलाइन शापिंग सेवाओं को प्रारंभ किया। वेबसाइट पर पहला सुरक्षित खुदरा लेन-देन 1994 में इन्टरनेट शापिंग नेटवर्क द्वारा प्रारंभ किया गया। अलीबाबा ने मई 2003 में टॉबो तथा अप्रैल 2008 में टीमॉल नाम से वेबसाइटों को प्रारंभ कर अपने समर्पित उपभोक्ताओं के लिए ई-कॉमर्स के प्लेटफार्म को स्थापित किया।

भारत में ई-कॉमर्स के क्षेत्र में ऑनलाइन शॉपिंग का विकास :

भारत में ई-कॉमर्स की अवधारणा का विकास 20वीं शताब्दी में हुआ था। लेकिन इसे 21वीं शताब्दी के वर्तमान दशक में अधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई। सम्पूर्ण भारत में हो रहे तकनीकी प्रगति ने देश में ई-कॉमर्स के प्रसार के लिए इंटरनेट की सुविधा एक बहुत बड़ा प्रभावी कारक रहा है। इंटरनेट उपयोक्ताओं की संख्या में तेजी से वृद्धि के कारण ही भारत में ई-कॉमर्स की संभावनाओं को प्रबल बनाया है। आज क्रेता और विक्रेता दोनों समय और धन में अत्यधिक बचत का अनुभव कर रहे हैं। भारत में ई-कॉमर्स करोबार को तीन प्रमुख कालखण्डों में बाटा जा सकता है। जिसमें एक दौर तो भारत में ऑनलाइन शॉपिंग की शुरुआत से 20वीं सदी की समाप्त तक यानी 1995-96 से लेकर 2000-01 तक का है। दूसरा कालखण्ड 2000-01 से 2005-06 तक का है जबकि तीसरा कालखण्ड 2005-06 से अब तक का है।

भारतीय बाजार में ऑनलाइन शॉपिंग की शुरुआत वर्ष 1995-96 से बी2बी यानी बिजनेस टू बिजनेस शॉपिंग प्लेटफॉर्म के तौर पर हुई थी। हालांकि उस दौर में भी चुनिंदा वेबसाइट ने ग्राहकों के लिए कुछ प्रोडक्ट्स की पेशकश की थी लेकिन यह ऑनलाइन शॉपिंग के लिए विशुद्ध रूप से ट्रायल एंड एरर यानी कोशिश करो और गलतियों से सीखो वाला दौर था। यह एक ऐसा दौर था जब इस नए मार्केटप्लेस को लेकर कोई भी जोखिम नहीं उठाना चाहता था। इंडियाप्लाजा डॉटकॉम तथा ईबे ऑक्शंस जैसी वेबसाइट्स के जरिए बिजनेस-टू-बिजनेस कारोबार ने गति पकडनी शुरू की थी। ऑनलाइन शॉपिंग का दूसरा दौर भारतीय बाजार के लिहाज से बेहद सुस्त और सुषुप्त सा रहा। इसकी वजह यह थी कि वर्ष 2000 के दौरान आईटी उद्योग में मंदी का जो दौर आया, उसने हजारों वेबसाइट्स के लिए रास्ते बंद कर दिए। इसलिए वर्ष 2000 से लेकर वर्ष 2005-06 तक भारतीय ऑनलाइन शॉपिंग बाजार की गतिविधियाँ बेहद सिमटी और सिकुड़ी हुई रही हैं। भारत में ई-कॉमर्स बाजार में बड़ी तब्दीली और गति आई वर्ष 2005-06 के बाद। आज की अग्रणी ऑनलाइन ट्रैवल वेबसाइट मेक माई ट्रिप डॉटकॉम समेत कई अन्य ट्रैवल वेबसाइट की शुरुआत इसी दौर में हुई थी। इसकी मुख्य वजह यह रही कि कम बजट वाली विमानन कंपनियों ने अपने-अपने वेबसाइट शुरू कर यात्रियों को सस्ते ऑफर देने की नई शुरुआत की। इसी दौर में भारतीय रेलवे की इंडियन रेलवेज केटरिंग एंड टूरिज्म कॉरपोरेशन (आईआरसीटीसी) ने रेलवे टिकट के लिए ऑनलाइन वेबसाइट लांच कर रेलवे टिकटिंग बाजार को पूरी तरह बदल कर रख दिया। वर्ष 2005-2010 के बीच भारत में मॉडर्न रिटेल ने जो रफ्तार पकड़ी, उसका फायदा भी ई-कॉमर्स कंपनियों को मिला। एक तरफ अधिकतर रिटेल कंपनियों ने अपनी-अपनी वेबसाइट के जरिए रिटेलिंग शुरू की, तो दूसरी तरफ दर्जनों नए शॉपिंग वेबसाइट्स ने ग्राहकों के लिए शॉपिंग के नए आयाम विकसित किये।

ई-कॉमर्स के क्षेत्र में सेवा प्रदाता और ग्राहक अथवा उपयोगकर्ता विभिन्न प्रकार के मॉडलों का उपयोग करते हैं। लेकिन ऑनलाइन शॉपिंग के अन्तर्गत ई-कॉमर्स का सबसे प्रसिद्ध मॉडल बिजनेस-टू-कस्टमर (बी-2-सी) ही उपयोग होता है। व्यवसाय के इस रूप में ग्राहकों द्वारा उत्पादों का जहाँ एक ओर ऑनलाइन आर्डर करते हैं वहीं दूसरी ओर उत्पाद की सुपुर्दगी (डिलवरी) कूरियर सर्विस द्वारा या फिर पोस्टल सेवाओं द्वारा की जाती है। वर्तमान युग में ई-कॉमर्स व्यवसायी अपने व्यवसाय को उपभोक्ताओं तक अभिनव तरीकों से पहुँचाने की कोशिश कर रहे हैं। जिसके लिए कंपनियाँ अपने व्यवसाय में इंटरनेट और संचार में तकनीकी नवाचारों पर अधिक विश्वास कर रही हैं।

भारत में ई-कॉमर्स को रफ्तार देने में इंटरनेट के विस्तार ने बड़ी भूमिका निभाई। कंप्यूटर शिक्षा पर जोर और कंप्यूटर व लैपटॉप की बढ़ती बिक्री ने ऑनलाइन रिटेलरों को ग्राहकों के बिलकुल करीब ला खड़ा किया। शहरों की बात तो दूर, गांवों और कस्बों में भी कंप्यूटर प्रशिक्षण के केंद्र खुलने लगे और इंटरनेट तक लोगों की पहुँच बढ़ती गई, जिसके कारण अधिक संख्या में पेशेवर कार्यकर्ता कंपनियों को मिलने लगे जिससे भारत में ई-कॉमर्स व्यवसाय गतिशील हुआ।

भारत में ई-कॉमर्स क्षेत्र में ऑनलाइन शॉपिंग के लिए वर्तमान परिदृश्य में निम्न कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं-

- **सोशल मीडिया :** आज ऑनलाइन कारोबार को बढ़ावा देने में सोशल मीडिया की भूमिका को गति मिली है। यह व्यवसायी के लिए उनकी खरीद के आधार पर ग्राहकों की पसंद का विश्लेषण करने का केंद्र बन गया है। सोशल नेटवर्किंग वेबसाइट जैसे लिंकडइन, गुगल प्लसएटिवटर, फेसबुक, इंस्टाग्राम और अन्य कंपनियों और विक्रेताओं के लिए ई-रिटेलिंग उद्योग में प्रवेश करने का एक आसान माध्यम बन गया है। ई-रिटेलर्स अधिक से अधिक ग्राहकों को आकर्षित करने का प्रयास कर रहे हैं और सोशल मीडिया पर अपनी सामग्री की इमेज बनाकर और साझा करके बड़े ई-मार्केट शेयर पर कब्जा करने की कोशिश कर रहे हैं। अब ग्राहकों के लिए इस मीडिया पर प्रकाशित पोस्ट के माध्यम से अपडेट रहना बहुत आसान हो गया है।
- **एम-कॉमर्स (मोबाइल वाणिज्य) :** ई-कॉमर्स में नवीनतम प्रवृत्ति के अन्तर्गत वेबसाइटों और एप्लिकेशन के माध्यम से मोबाइल आधारित खरीदारी है। एम-कॉमर्स का मतलब मोबाइल फोन के माध्यम से वस्तुओं और सेवाओं की खरीद और बिक्री है। अमेरिका स्थित अनुसंधान और सलाहकार फर्म, फॉरेस्टर ने खुलासा किया कि भारत में 12 बिलियन डॉलर की वार्षिक बिक्री का लगभग 50 प्रतिशत भाग मोबाइल फोन के माध्यम से होता है। जबकि, अमेरिका और चीन में, एम-कॉमर्स का योगदान क्रमशः 34 प्रतिशत और 48 प्रतिशत है। सिंह 2016 की रिपोर्ट के अनुसार एम-कॉमर्स 2022 तक पांच गुना बढ़कर 51 बिलियन डॉलर हो जाएगा। इस वृद्धि में योगदान करने वाले कारकों में स्मार्टफोन की बढ़ती पहुँच और बढ़ती आकांक्षाएं और खरीदारों की मूल्य चेतना है। इस प्रकार, अधिकांश ई-कॉमर्स कंपनियाँ खरीदारों के लिए मोबाइल द्वारा खरीदारी के अनुभव को बढ़ाकर मोबाइल इंटरनेट उपयोगकर्ताओं को अपने नए ग्राहकों में बदलने पर ध्यान केंद्रित कर रही हैं। एम-कॉमर्स ई-कॉमर्स उद्योग के लिए एक स्थिर और सुरक्षित अनुपूरक के रूप में तेजी से बढ़ रहा है।

शोध कार्य का औचित्य :

वर्तमान परिदृश्य में ऑनलाइन शॉपिंग व्यवसाय के क्षेत्र में एक नया स्वरूप है। अधिकांश ई-कॉमर्स कंपनियाँ अपने उत्पादों व सेवाओं को ऑनलाइन विक्री करने के लिए अपने स्वयं के ऑनलाइन वेबसाइट व पोर्टल संचालित कर रही हैं। हालांकि, भारत के बाहर अन्य देशों में ऑनलाइन शॉपिंग बहुत आम बात हो चुकी है। फिर भी भारतीय बाजार में इसकी वृद्धि के लिए एक बड़ा और रणनीतिक उपभोक्ता बाजार है जो अभी भी वैश्विक बाजार के अनुरूप है। ई-कॉमर्स में इंटरनेट ने उन उपभोक्ताओं की एक नई पीढ़ी तैयार की है जो ऑनलाइन शॉपिंग करना पसंद करते हैं। आज ऑनलाइन शॉपिंग की लोकप्रियता बढ़ने से फैशन की वस्तुओं से लेकर आभूषण, परिधान, इलेक्ट्रॉनिक सामग्री, क्रॉकरी, घरेलू उपकरण, व्यक्तिगत देखभाल उत्पाद इत्यादि सभी कुछ उपभोक्ताओं में एक क्लिक द्वारा प्राप्त करने की होड़ मची है। वास्तव में, यह खरीददारी करने का

सबसे आसान और तीव्र विधि है। एक ऑनलाइन शॉपिंग कम्पनी में नये उत्पादों का आना, कई उत्पादों का सम्मिश्रित जोड़ों के साथ मिलना, पैकेज के रूप में कई उत्पाद एक साथ मिलना, डिस्काउन्ट ऑफर, निर्धारित राशि पर खरीदी करने पर उपहार, मौसमी उत्पाद आदि सभी सेवाएँ ई-कॉमर्स कम्पनियों के लिए सर्वश्रेष्ठ सौदेबाजी में सम्मिलित है। साथ ही सेवा व उत्पाद प्राप्त करने के लिए कम्पनियों के पास समय की बाध्यता नहीं है। इनकी सभी सेवाएँ व उत्पाद कोई भी व्यक्ति कहीं से भी खरीद सकता है। मूलतः ऑनलाइन ई-कॉमर्स कम्पनियाँ सभी सुविधाएँ अपने ग्राहकों को 24 घण्टे उपलब्ध कराती हैं। इसके विपरीत जब ग्राहक ऑफलाइन स्टोर पर जाता है तो उसका समय सबसे ज्यादा आने-जाने में व्यतीत होता है। इस परेशानी से बचने के लिए ग्राहक ऑनलाइन उत्पाद खरीदना अधिक पसंद करते हैं। इससे ग्राहक का समय और पैसे दोनों की बचत होती है।

शोध विषय का चयन :

इन्टरनेट के उद्गम के पूर्व वस्तुओं की खरीदारी करने का एक मात्र तरीका परम्परागत दुकानों से होता रहा है। पारम्परिक पद्धति के तहत खरीदारी करने में क्रेता और विक्रेता खरीदारी के बीच व्यक्तिगत सम्पर्क होता है। इस व्यवस्था में खरीदारों की मांग व आवश्यकताओं को समझना विक्रेताओं के लिए बहुत आसान रहता है। क्योंकि इन दोनों के बीच प्रत्यक्ष रूप से सम्पर्क होने से ग्राहकों में संतुष्टि का स्तर बढ़ने के साथ-साथ विक्रेताओं को निष्ठावान ग्राहकों को बनाये रखना आसान होता है। लेकिन इन्टरनेट के आगमन और ऑनलाइन मीडिया के व्यापक उपयोग से उपभोक्ता घर बैठे एक क्लिक से अपनी मनपसंद वस्तु मंगवा सकते हैं। ऑनलाइन स्टोर ग्राहकों की मांग पर अपने उत्पादों को दूर स्थानों पर विक्रय करने हेतु सक्षम हुये हैं। इस तरह के व्यापार में ऑनलाइन स्टोर और उपभोक्ताओं के बीच व्यक्तिगत सम्पर्क नगण्य हो गया है। पहले ऑनलाइन शॉपिंग के लिए ई-स्टोर से खरीदारी केवल ई-कॉमर्स कम्पनियों की वेबसाइटों के माध्यम से ही संभाव था। लेकिन अब स्मार्ट फोन के आ जाने से अधिकांश ऑनलाइन स्टोरों ने अपने बाजार में हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए अपनी कम्पनियों से संबंधित मोबाइल एप्लीकेशन लॉन्च किये हैं, जिससे उपभोक्ता को उत्पादों और सेवाओं की खरीदारी करना आसान व तीव्र हुई है।

शोध का उद्देश्य :

1. देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था इन्टरनेट व कम्प्यूटर पर आधारित होती जा रही है। अतः अध्ययन द्वारा कम्प्यूटर के क्षेत्र में ई-कॉमर्स की भूमिका का विश्लेषण करना।
2. ऑनलाइन व्यापार के क्षेत्र में ई-कॉमर्स की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना है।
3. ई-कॉमर्स के क्षेत्र में व्यापार व व्यवसाय की गतिशीलता में उपभोक्ता व्याहारों की प्रभावशीलता का विश्लेषण करना।
4. ऑनलाइन शॉपिंग के संदर्भ में खरीद-निर्णय को प्रभावित करने वाले कारकों का विश्लेषण करना।
5. ऑनलाइन शॉपिंग के माध्यम से उपभोक्ताओं की प्रवृत्तियाँ एवं बढ़ते व्यापार की संभावनाओं का विश्लेषण करना।
6. उपभोक्ताओं में डिजिटल इण्डिया व कैशलेस लेन-देन की प्रवृत्तियों का परीक्षण करना।

शोध परिकल्पना :

1. उपभोक्ता ऑनलाइन शॉपिंग के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।

2. ई-कॉमर्स के क्षेत्र में भुगतान प्रक्रिया के जोखिम से ऑनलाइन शॉपिंग के प्रति उपभोक्ता नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।
3. ऑनलाइन शॉपिंग व्यवहार ने ऑनलाइन व्यापार करने वाली कंपनियों में व्यावसायिक गतिशीलता बढ़ी है।
4. ऑनलाइन शॉपिंग में उत्पाद वापसी नीति के प्रति ई-कॉमर्स कंपनियों सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाती हैं।
5. इंटरनेट के बढ़ते प्रचलन ने ई-कॉमर्स व ऑनलाइन शॉपिंग की मांग बढ़ी है।

तथ्यों का सारणीय एवं विश्लेषण :-

सारणी क्र. 1

उत्तरदाताओं का लिंगवार विभाजन

क्र. सं.	लिंग	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	पुरुष	57	57
2.	महिला	43	43
कुल योग		100	100.00

सारणी क्र. 1 द्वारा प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ऑनलाइन शॉपिंग में 57.20 प्रतिशत पुरुष उत्तरदाता है। जबकि महिलाओं का प्रतिशत 42.80 प्रतिशत है। प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि क्षेत्र में महिला उत्तरदाता की तुलना में पुरुष उत्तरदाता ऑनलाइन शॉपिंग अधिक करते हैं।

सारणी क्र. 2

उत्तरदाताओं की उम्र

ऑनलाइन शॉपिंग भी परम्परागत शॉपिंग की तरह ही है। इसमें भी उपभोक्ता की उम्र अत्यधिक मायने रखती है। उम्र से उत्पाद की पसंद और ऑनलाइन शॉपिंग की आवश्यकता का ज्ञान होता है। सारणी क्र. 2 में उत्तरदाताओं की उम्र को व्यक्त किया गया है।

सारणी क्र. 2

उत्तरदाताओं की उम्र

क्र. सं.	उम्र की श्रेणी	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	18 वर्ष की उम्र तक	18	18
2.	19 से 30 वर्ष की उम्र के बीच	32	32
3.	31 से 40 वर्ष की उम्र के बीच	27	27
4.	41 से 50 वर्ष की उम्र के बीच	15	15
5.	51 वर्ष की उम्र से ऊपर	8	8
कुल योग		100	100.00

सारणी तथा आरेख क्रमांक 2 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 18 वर्ष तक की आयु के युवा 18 प्रतिशत उत्तरदाता ऑनलाइन शापिंग करते हैं, इसी प्रकार 19 से 30 वर्ष के आयु समूह के 32 प्रतिशत उपभोक्ता ऑनलाइन शापिंग करते हैं, 31 से 40 वर्ष के आयु समूह के 27 प्रतिशत उपभोक्ता ऑनलाइन खरीदारी करते हैं। 41 से 50 वर्ष के आयु समूह के 15 प्रतिशत उपभोक्ता ऑनलाइन खरीदारी करते हैं। जबकि 51 वर्ष से अधिक उम्र के उपभोक्ता मात्र 8 प्रतिशत ही हैं जो ऑनलाइन शापिंग करते हैं। उक्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि बढ़ती सूचना क्रान्ति के कारण युवा आबादी के बीच ऑनलाइन शापिंग का प्रचलन अन्य आयु समूह की तुलना में अधिक है।

सारणी क्र. 3
उत्तरदाताओं की योग्यता

क्र. सं.	योग्यता का स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हाई स्कूल	15	15
2.	हायर सेकण्ड्री	18	18
3.	स्नातक	30	30
4.	परास्नातक	23	23
5.	अन्य योग्यता	14	14
कुल योग		100	100.00

सारणी क्र. 3 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ऑनलाइन शापिंग करने वाले सभी उपभोक्ताओं में से 15 प्रतिशत उत्तरदाता हाई स्कूल तक की शिक्षा प्राप्त किये हैं, 18 प्रतिशत उत्तरदाता हायर सेकण्ड्री योग्यता धारी हैं। 30 प्रतिशत उत्तरदाता स्नातक योग्यताधारी हैं, 23 प्रतिशत उत्तरदाता परास्नातक अर्थात् पोस्ट ग्रेजुएट योग्यताधारी हैं। जबकि 14 प्रतिशत उत्तरदाता अन्य योग्यता जैसे डिप्लोमा, अभियान्त्रिकी, चिकित्सा इत्यादि से संबंधित हैं। अतः उक्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि ऑनलाइन शापिंग के क्षेत्र में स्नातक योग्यताधारी अधिक हैं। जबकि ऑनलाइन शापिंग के प्रति सभी योग्यधारी उपभोक्ता परिचित हैं।

सारणी क्र. 4
उत्तरदाताओं का व्यवसाय

क्र. सं.	व्यवसायिक वर्ग की श्रेणी	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	छात्र वर्ग	22	22
2.	नौकरी	26	26
3.	व्यवसायी	20	20
4.	पेशेवर	17	17
5.	गृहणी	15	15
कुल योग		100	100.00

सारणी क्र. 4 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि ऑनलाइन खरीदारी करने वाले 22 प्रतिशत उत्तरदाता छात्र वर्ग से हैं, 26 प्रतिशत उत्तरदाता नौकरी पेशा से जुड़े हुये हैं, 20 प्रतिशत उत्तरदाता व्यापारी वर्ग से हैं, 17 प्रतिशत पेशेवर अर्थात डॉक्टर एवं इंजीनियर आदि हैं। जबकि 15 प्रतिशत गृहणी अर्थात महिलाएँ हैं जो ऑनलाइन शॉपिंग करती हैं। उक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ऑनलाइन शॉपिंग करने वाले अधिकांश उत्तरदाता नौकरी करने वाले हैं जो अपना समय बचाने के लिए ऑनलाइन खरीदारी करते हैं। इसी प्रकार छात्र वर्ग में ऑनलाइन शॉपिंग का क्रेज अत्यधिक है।

सारणी क्र. 5

उत्तरदाताओं की मासिक आय (रूपये में)

क्र. सं.	मासिक आय की श्रेणी	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	10 हजार रु. से कम	20	20
2.	10 से 20 हजार रु. के बीच	25	25
3.	20 से 30 हजार रु. के बीच	16	16
4.	30 से 40 हजार रु. के बीच	14	14
5.	40 से 50 हजार रु. के बीच	13	13
6.	50 हजार रु. से ऊपर	12	12
कुल योग		100	100.00

सारणी 5 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ऑनलाइन शॉपिंग करने वाले उपभोक्ताओं में 20 प्रतिशत व्यक्तियों की मासिक आय 10 हजार रुपये से कम है। 25 प्रतिशत व्यक्तियों की मासिक आय 10 से 20 हजार रुपये के बीच है, 16 प्रतिशत व्यक्तियों की कुल मासिक आय 20 से 30 हजार रुपये के बीच है। 14 प्रतिशत व्यक्तियों की मासिक आय 30 से 40 हजार रुपये की बीच है। 13 प्रतिशत लोगों की मासिक आमदनी 40 से 50 हजार रुपये के बीच है। जबकि 12 प्रतिशत व्यक्तियों की मासिक आय 50 हजार रुपये से अधिक की है। प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि ऑनलाइन शॉपिंग करने वाले सर्वाधिक उत्तरदाताओं (24.80 प्रतिशत) की मासिक 10 से 20 हजार रुपये हैं।

सारणी क्र. 6

ऑनलाइन शॉपिंग में डिवाइस का उपयोग

क्र. सं.	डिवाइस का नाम	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	लैपटॉप	28	28.00
2.	डेस्कटॉप	13	13.00
3.	स्मार्ट फोन	55	55.00
4.	टैबलेट / गैजेट्स	4	04.00
कुल योग		100	100.00

सारणी क्र. 6 के आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 28 प्रतिशत उत्तरदाता ऑनलाइन सेवाओं की प्राप्ति हेतु लैपटॉप का उपयोग करते हैं। 13 प्रतिशत उत्तरदाता डेस्कटॉप का उपयोग ऑनलाइन शापिंग के लिए करते हैं। इसी प्रकार 55 प्रतिशत उत्तरदाता स्मार्ट फोन का उपयोग ऑनलाइन शापिंग के लिए करते हैं। जबकि मात्र 5 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो ऑनलाइन शापिंग/सेवाओं की प्राप्ति हेतु टैबलेट/गैजेट्स का उपयोग करते हैं। उक्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में सबसे अधिक उपभोक्ता ऑनलाइन शापिंग हेतु स्मार्ट फोन डिवाइस का उपयोग करते हैं।

सारणी क्र. 7
ऑनलाइन शापिंग हेतु भुगतान विकल्प

क्र. सं.	भुगतान विकल्प	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	क्रेडिट/डेबिट कार्ड द्वारा	24	24.00
2.	इंटरनेट बैंकिंग द्वारा	21	21.00
3.	उत्पाद सुपुर्दगी पर नगद भुगतान	37	37.00
4.	अन्य माध्यम द्वारा (ई-वैलेट)	18	18.00
कुल योग		100	100.00

सारणी क्र. 7 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ऑनलाइन शापिंग हेतु 37 प्रतिशत उत्तरदाता उत्पाद सुपुर्दगी पर नगद भुगतान करते हैं। इसी प्रकार 24 प्रतिशत उत्तरदाता ऑनलाइन शापिंग हेतु क्रेडिट/डेबिट कार्ड द्वारा उत्पाद का भुगतान करते हैं। 21 प्रतिशत उत्तरदाता उत्पाद प्राप्ति हेतु इंटरनेट बैंकिंग द्वारा भुगतान करते हैं। जबकि सबसे कम 18 प्रतिशत उत्तरदाता उत्पाद प्राप्ति हेतु अन्य माध्यम जैसे ई-वैलेट (पेटियम, पेपाल, गुगलपे, फोन पे इत्यादि) का उपयोग करते हैं अतः उक्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र के अधिकांश उपभोक्ता उत्पाद सुपुर्दगी पर नगद भुगतान (कैश ऑन डिलवरी) पद्धति का उपयोग कर ऑनलाइन उत्पाद की खरीदारी करते हैं। जबकि क्षेत्र में उपभोक्ता डेबिट/क्रेडिट कार्ड द्वारा भुगतान करना उन्हें अधिक सुविधाजनक रहता है।

निष्कर्ष :-

ऑनलाइन शापिंग ने बाजार का आकार व उपभोक्ताओं के क्रय व्यवहार को पूरी तरह से बदल कर रख दिया है। अपनी विश्वसनीयता और उपभोक्ता संतुष्टि के दम पर आज चुनिंदा ऑनलाइन शापिंग कम्पनियों से ज्यादातर उपभोक्ता परिचित हो चुके हैं। इन तथ्यों की सत्यता व प्रमाणिकता प्राप्त आंकड़ों व तथ्यों से साबित होता है कि ऑनलाइन शापिंग बाजार रीवा जिले के ज्यादातर घरों में पहुँच चुका है। समय की कमी, फुर्सत में शापिंग करने की छूट, उपभोक्ता उन्मुख खरीदारी प्रतिरूप, बजट के मनमाफिक उत्पाद का चुनाव होने के चलते ऑनलाइन शापिंग बाजार पारम्परिक बाजार को चुनौती दे रहा है। आज उपभोक्ता केवल वहीं उत्पाद/वस्तु नहीं क्रय करता जो उसकी जरूरत का है बल्कि बाजार के दबाव में वह तमाम ऐसी वस्तुएँ भी क्रय करता जो उसकी तात्कालिक जरूरत का नहीं है। कम से कम दो दशकों में ई-कॉमर्स आधारित बाजार का प्रचलन इतना तेजी से जुआ है कि ऑनलाइन बाजार की उपेक्षा करना उपभोक्ता में संभव नहीं है। यह बाजार की ही ताकत

का परिणाम है कि उसने शॉपिंग को उपभोक्ताओं के जीवन-शैली का एक जरूरी हिस्सा बना दिया है।

संदर्भ स्रोत :

- अर्चना, राय 'फ्लिपकार्ट : देश का सबसे बड़ा ऑनलाइन बुकस्टोर', इकॉनॉमिक टाइम्स, अभिगमन दिनांक 30 जून 2010
- गीतिका, रुस्तोगी, अब फ्लिपकार्ट पर अपना अगला मोबाइल ऑर्डर करें, लाइवमिन्ट, अभिगमन दिनांक 4 अगस्त 2010
- विकास, एस. एन. 'फ्लिपकार्ट ड्रैगोनर इन्वेस्टमेंट, मॉर्गन स्टेनली इन्वेस्टमेंट एवं अन्य द्वारा 160 मिलियन डालर से अधिक का व्यापार', मिडियानामा, अभिगमन दिनांक 9 अक्टूबर 2013
- रजत, अग्रवाल, 'डीएसटी ग्लोबल के नेतृत्व में वित्तपोषण के दौरान फ्लिपकार्ट को 210 मिलियन डॉलर का मुनाफा', इकॉनॉमिक टाइम्स, अभिगमन दिनांक 18 फरवरी 2015
- Adrita, Goswami et al. (2013), Customer satisfaction towards online shopping with special reference to teenage group of Jorhat town, Assam, 'Indian Journal of Research Paripex, 3 (4) : 239-241.
- Agarwal, S. (2013), A Study of factors affecting online shopping. Tactful Management Research Journal, 1632, 98-104.
- Aggarwal, M., (2014), A study on growth of Online Shopping in India, International Journal of in Multidisciplinary and Academic Research, 3 (4) : 39-49.
- Arijit, Banerjee (2013), Consumer Behaviour on online Shopping, International Journal of Management, IT and Engineering', 3 (3) : 426- 441.



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 80-86

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

दक्षिण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय चेतना

डॉ. फत्ताराम नायक

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर।

भारत एक विशाल देश है। यहाँ उत्तर में नगाधिराज हिमालय है जो विश्व में सबसे ऊँचा पर्वत है तो दक्षिण में प्रशान्त महोदधि—जिसकी गहराई कोई नाप नहीं सका। हिममंडित हिमवान के शिखर भारत माता के शीश पर मुकुट जैसे शोभित हैं और कन्याकुमारी के रम्य तट पर लहराने वाला अम्बूधि मानो शीश पटक पटक कर इस भारत माता के चरण पखारता है। इसकी उताल तरंगे माँ के पदनख का स्पर्श करके शान्ति पाती है। यहीं फूलों से लदी और केशर से सजी कश्मीर की कुंकुम क्यारियां हैं और नारिकेल पुंगीफल की रम्यता और हरीतिमा से युक्त केरल की तटभूमि है जो सागर से गले मिलकर अठखेलियां करती रहती है। यहाँ उत्तर भारत की हरी-भरी उर्वरा भूमि है तो राजस्थान के मरुस्थल और दक्खन की पठारी और पथरीली भूमि भी है। यह तीन मौसमों और छः ऋतुओं का सुवाहना देश हैं।

ऐसी ही रम्य वसुंधरा पर देवता क्या स्वयं मनुष्य रूप धारण कर नर लीला करने को लालायित रहते हैं। जब ऐसी भारत भूमि पर अंग्रेजों ने छलपूर्वक व बलपूर्वक अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया तो पूरे भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत के स्वर उठना स्वाभाविक है। जिसका परिणाम 1857 का भारतीय महाविद्रोह था। देश की आजादी में भारतीय साहित्य ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 'इतिहास जिनकी उपेक्षा करता है, साहित्य उनकी चिंता करता है और उनकी आवाज बनकर उन्हें नया जीवन देता है।' 'राष्ट्रीयता का अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का अंश है और इस राष्ट्र की सेवा के लिए इसको धन-धान्य से समृद्ध बनाने के लिए, प्रत्येक व्यक्ति करे इस प्रकार के न्याय और कष्टों को स्वीकार करना चाहिए।' बकिमचन्द्र कृत आनन्दमठ उपन्यास का तारक मंत्र वंदेमातरम वास्तव में अध्यात्म और राष्ट्र का पूरक मंत्र है जो हर भारतीय के सांसों में बसा है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में इस मंत्र ने संजीवनी बूटी का कार्य किया है। बंगाल की नाभि से उभरा यह नारा हिमालय की चोटी से टकराकर प्रतिध्वनित हुआ जो गंगा की धारा बनकर पास के पंजाब क्षेत्र, खेत खलिहानों को सींचने के साथ वीर मराठों में स्वदेश की प्यास जगाते हुए उसने अंत में दक्षिण में कन्याकुमारी पहुंच कर जनजागरण का बीज बोया। इस जनजागरण के बीज हमें तमिल साहित्य में मिलते हैं। तमिल-कविता के कुलभूषण कवि भारती ने भारत को माँ मानकर उसका यशोगान किया है।

वर्तमान के धरातल पर अतीत का सहारा लेकर भविष्य की ओर संकेत करनेवाले युगद्रष्टा कवि का साहित्य उनकी अमितीय कल्पना और प्रबंधात्मकता का परिचायक है। वे केवल राष्ट्रकवि ही नहीं थे बल्कि

तमिलनाडु की सांस्कृतिक विरासत के साथ साथ भारत के सांस्कृतिक गरिमा के झंडे को जिस उंचाई पर पहुंचाया वह महत्वपूर्ण हैं। तमिल कवि सुब्रह्मण्य भारती राष्ट्रीय चेतना के अमर गायक हैं। वंदेमातरम् शीर्षक कविता में उनकी राष्ट्रीय चेतना को देखा जा सकता है :

जय भारत जय वन्दे मातरम्।
जय—जय भारत, जय—जय भारत, जय—जय भारत, वन्दे मातरम्।
जय भारत जय वन्दे मातरम्॥
एक वाक्य है केवल, जिसको दुहराना है,
आर्य भूमि की आर्य नारियो नर सूर्यो को वन्दे मातरम्।
जय भारत जय वन्दे मातरम्॥
एक वाक्य है केवल, जिसको दुहराना है,
घुट—घुटकर मरते भी अति पीडित जन—जन को वन्दे मातरम्॥
जय भारत जय वन्दे मातरम्॥³

भारती ऐसे भारत की कल्पना करते हैं, जहाँ जाति—पॉति, धर्म, भाषा इत्यादि का बंधन न हो, अपितु विविधता में एकता का आनंद हो। वे यथार्थवादी भावनाओं से ओतप्रोत थे। उन्होंने उन स्थितियों का अनुमान लगा लिया था जिनका निर्माण स्वतंत्रता की प्राप्ति और उसे स्थाई बनाने के लिए अनिवार्य था। उन्होंने जाति प्रथा की निंदा करते हुए लिखा है कि —

हम सभी की एक ही जाति है,
एक ही वंश है,
हम सभी संतान हैं भारत की,
चाहे कानून हो, चाहे हो हैसियत,
हम सब समान हैं,
हम सब हैं भारत के राजा॥⁴

कवि भारती मानव जाति की गरिमा और आत्मा की स्वतंत्रता में प्रबल आस्था का दीप जलाने वाले कवि सामंतवादी एवं साम्राज्यवाद के युग में भी समता और स्वतन्त्रता में प्रबल विश्वास रखते थे। 'स्वतंत्रता—देवी की स्तुति', 'स्वतंत्रता का पल्लू', 'स्वतंत्रता' इत्यादि कविताओं में कवि का यही विश्वास फलित हुआ है। जनता की लोकतांत्रिक भावनाओं को जागृत करनेवाली यह समर्थ कविता राष्ट्रीय स्वाधीनता—आंदोलन के दिनों में बहुत लोकप्रिय हुई —

‘स्वतंत्रता! स्वतंत्रता स्वतंत्रता!
हैं स्वतंत्रता भगी और चर्मकारो को।
है स्वतंत्रता आदिवासियो, बजारो को॥
क्षमता के अनुकूल सभी उद्योग चलायें।
उच्च ज्ञान, शिक्षा पा जीवन सुखद बनाएँ।
सबको मिली देश में आज स्वतंत्रता॥⁵

एकता का स्वर भारती में सर्वप्रमुख है। उत्तर-दक्षिण, पूरव-पश्चिम आदि की सकुचित धारणा से ऊपर उठकर इन्होंने उदार मन से अखंड भारत की कल्पना की है। सभी दिशाओं से, कोने-कोने से व्यापारिक, धार्मिक एवं आवागमन संबंधी, संबंध-सूत्रों के अतिरिक्त सांस्कृतिक विनिमय का भारती जी ने दिल खोलकर आह्वान किया है। इस सबध में कुछ उदाहरण देना समाचीन होगा —

खूब उपजता गेहूँ गगा के कछार में,
ताबूल अच्छे हैं कावेरी के तट के,
ताबूल से विनिमय कर लेंगे गेहूँ का,
सिंह समान मरहटो की ओजस कविता के,
पुरस्कार में उनको हम केरल-गज-दंत लुटाएँगे।
सब शत्रुभाव मिट जाएँगे।⁶

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राष्ट्रीयता की जो तीव्र लहर सारे देश में व्याप्त हुई उसने तेलुगु साहित्य को भी प्रभावित किया। इस समय केवल कवि-मानस ही नहीं बल्कि जनसमुदाय में भी थोड़ी बहुत अभिव्यक्ति की क्षमता रखने वाले मातृभूमि की वंदना कर अपने को धन्य मानते थे। तेलुगु साहित्य में राष्ट्रीय कविता का आरंभ कवि श्री चिलकमूर्ति नरसिम्हा पुतुलु माने जाते हैं। उन्होंने भारत को एक दुधारु गाय माना है। वे लिखते हैं कि —

भारत महाद्वीप एक दुधारु गाय हैं,
जबकि हिंदू बछड़ों के रूप में रो रहे हैं।
गोरे चालाक चरवाहे अपने मुंह को कस कर दूह रहे हैं।

नवयुग के वैतालिक गुरुजाड़ा अप्पाराव का दृढ़ विश्वास था कि किसी भी प्रकार के सामाजिक परिवर्तन के लिए स्त्रियों में जागृति की भावना का होना नितांत आवश्यक है। उन्होंने हर प्रकार के भेदभाव का विरोध किया तथा प्राचीन काल से चली आ रही बाल विवाह प्रथा का विरोध किया तथा विधवा विवाह का समर्थन किया। वे एक महान समाज सुधारक थे तथा राजा राममोहन राय से प्रभावित थे। उनके द्वारा रचित 'कन्या शुल्कम्' नाटक बहुचर्चित हुआ जिसमें उन्होंने बेमेल विवाह का कड़ा विरोध किया। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को प्रोत्साहित कर इन्होंने भारतीय संस्कृति के आदर्शों की स्थापना की। अप्पाराव जी ने अत्यंत तीव्र शब्दों में यह उद्घोषणा की कि देश का अर्थ केवल पृथ्वी और पर्वत नहीं होता है। देश का अर्थ है देश की जनता। उनके द्वारा रचित श्रदेश भक्ति कविता को स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान आयोजित की जाने वाली जन सभाओं में बार-बार पढ़ा गया। देशभक्ति कविता में वे कहते हैं —

‘देसमुनु प्रेमिन्नु मन्ना
मंचि अन्नदि पेन्नुमन्ना
वोट्टि माटलु कट्टि पेट्टोयी
गट्टी मेल नल पेट्टोयी।।’

अर्थात्, हमें अपने देश से प्यार करना चाहिए और भलाई को बढ़ावा देना चाहिए। कोरी बातों को हमें बाँधकर रख देना चाहिए और दूसरों की भलाई का काम सिर पर उठा लेना चाहिए।

‘देसाभिमानम् नाकु कद्धनि
वोद्वि गोप्पलु चेप्पुकोकोय
पूनि येवैनानु वकामेल
कृषि जनलकु चूपवोयी।’

अर्थात् देश भक्ति के नाम पर हमें सिर्फ बड़ी-बड़ी बातें ही नहीं करनी चाहिए, बल्कि किसी एक भले काम में निमग्न होकर उसका लाभ प्रजा तक पहुँचाना चाहिए।

‘सोंता लाभम् कोन्त मानको
पोरुगु वाडिकि तोडु पडवोयी
देसमन्ते मट्टि कादोयी,
देशमन्ते मनुषुलोयी।।’⁷

अर्थात् दूसरों के लिए हमें अपने थोड़े से स्वार्थ को त्यागना चाहिए क्योंकि देश का अर्थ मिट्टी नहीं होता बल्कि देश का अर्थ देश के मनुष्य होते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरुजाडा अप्पाराव जी ने हमें देश का सच्चा अर्थ समझाया। उनका मानना था कि देश का भला तभी होगा जब हम मनुष्यों का मला करेंगे।

मलयालम भाषा केरल में बोली जाती है। केरल शब्द ‘केर’ (नारियल) से संबंधित है तो मलयालम का शब्दार्थ है। ‘पर्वत श्रृंखला के समीपवर्ती भाग’। ‘मला’ का अर्थ है पर्वत। यह प्रदेश वाची शब्द है बाद में भाषा के लिए प्रयुक्त होने लगा। मलयालम भाषा और साहित्य में पुराने जमाने से लेकर एकात्मकता, मातृभक्ति, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक मूल्य तथा वैश्विक संदर्भ को समेटने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। मलयालम भाषा और साहित्य के इतिहास में संघर्ष के बाद ‘समन्वय’ की स्थापना की प्रवृत्ति मिलती है।⁸

मलयालम कविता पर स्वाधीनता आंदोलन का स्पष्ट प्रभाव द्रष्टव्य है। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन से प्रभावित मलयालम कवियों में प्रथमतः वल्लत्तोल नारायण मेनन का नाम आता है। वल्लत्तोल परम देशभक्त थे। वे कहा करते थे ‘मैं पहले भारतीय हूँ, मलयाली बाद में।’ उन्होंने अपनी अग्निमयी वीणा की झंकार से परतंत्र भारत के सुदूर दक्षिणी अंचल में आबाल वृद्ध के हृदय में राष्ट्र की वेदी पर बलिदान होने की भावना का मंत्र फूँका, उनका पूरा नाम नारायण मेनून वल्लत्तोल था। इनकी साधनामयी मूर्ति का भारत के लोगों के अंतःकरण में प्रतिष्ठित होना परमावश्यक है। वारसा के शांति सम्मेलन में विश्व के प्रमुख देशों के प्रतिनिधियों के समक्ष ‘वसुधैव कुटुंबकम्’ की भावना से पूरित विश्व शांति संबंधी कविता पढ़कर उन्होंने विश्व रंगमंच पर अपना स्थान, अपना सम्मान प्राप्त किया। कवींद्र रवींद्र तथा मोहम्मद इकबाल की भांति आप भी भारत के एकमात्र कवि हैं जिन्होंने राष्ट्रीय सीमाओं से ऊपर उठकर अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज का स्पर्श किया था।

भारत और केरल के प्रति उनका दृष्टिकोण निम्नलिखित पंक्तियों में प्रकट है —

‘भारतम् एन्न पेर केटालभिमान/पूरितमाकणमंतरंगम,
केरलमेन्नु केटालो तिलक्कणं/चोरा नमुक्कु जरंकलिल्।’⁹

अर्थात्

‘भारत का नाम सुनते ही
अंतरंग गौरव से भर उठे

केरल का नाम सुनते ही

हमारी सिराओं में खून उबल उठे।

परतंत्रता के बारे में उन्होंने कहा है— 'पिंजड़ा चाहे सोने का ही क्यों न हो, बंधन तो बंधन ही है।'

कुमारन आशान की कविताएँ स्वाधीनता आंदोलन से कहीं सामाजिक उत्थान पर केंद्रित हैं। उनकी दृष्टि में देश की परतंत्रता से अधिक विकट समस्या देशवासियों की स्वयंकृत अस्पृश्यता, जातिभेद आदि से उद्भूत दुर्व्यवस्था थी आशान ऐसे कवि हैं जो स्वतंत्रता के महत्व को भली-भाँति जानते थे। उन्होंने कहा है —

‘स्वातंत्र्यम् तन्ने अमृतम्

स्वातंत्र्यम् तन्ने जीवितम्

पारतंत्र्यम् मानिकक्कु

मृतियेक्काल् भयानकम्।’

अर्थात्

‘स्वतंत्रता ही अमृत है/स्वतंत्रता ही जीवन है

पारतंत्र्य तो मानी जन को/मृति से अधिक भयानक है।¹⁰

‘भारत के कई चेहरे भले ही भिन्न हों किंतु इस देश की आत्मा एक है। अति प्राचीन द्रविड़ आर्य संस्कृतियाँ भीतर के फेफड़े के दो भाग मात्र हैं। इस देश को एक बनाने वाला मुख्य तत्व इसकी आंतरिक एकता है। उसको मजबूत बनाने के लिए साहित्य और साहित्यानुवाद को औजार बनाना होगा। हमारे देश में बहुत सी भाषाएँ बोली जाती हैं। भाषा भेद के कारण भारतीय सिर्फ चेहरे पहचान सकते हैं। इसके साथ हृदय की पहचान भी आवश्यक है। इस प्रवाह को बंद करके तालाब और पोखर बना रहे हैं। प्रवाह को प्रवाह ही रहने दो।’ इसी प्रवाह को आगे बढ़ाया है कन्नड कवि कुवेंपु ने। कुवेंपु का जन्मदिन विश्व मानवता दिवस के रूप में मनाया जा रहा है। कुवेंपु के विचार सीधे तौर पर वेद—उपनिषद, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, श्री अरबिंदों से प्रेरित हैं। कुवेंपु मानते हैं कि राजनीतिक रूप से भारतीय लोग एक—दूसरे के दुश्मन मानकर अलग—अलग राज्यों में विभाजित हो जाने पर भी देश में जो आध्यात्मिक शक्ति प्रवाहित होती है वह शक्ति जिसने उन्हें सदियों तक अक्षुण्ण बनाए रखी एक शक्ति है। उस शक्ति का नाम है ‘भारती’, वह भूमि पर जहाँ स्थित है, वह भाग ‘भारत’ है।

कुवेंपु के ‘हाळुरु’, ‘पांचजन्या’, ‘कोयल और रूस’ कविताओं में अंग्रेज शासकों के खिलाफ छिपी भावना और स्वतंत्रता संग्राम में उनका समर्थन देख सकते हैं। ‘हाळुरु’ कविता—

‘अरे ! राजनीतिज्ञों यह कभी मत भूलो कि वैभव ही सुख है।

गाँवों को सजा देने से गरीब का पेट भरेगा क्या?

सजावट खाकर जी सकेंगे क्या?

भरने के बाद ही आँखें भरती है।।

कुवेंपु भी अपने देश और काल से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते थे। उनकी समस्त रचनाओं पर अपने समय और समाज का गहरा प्रभाव है। कुवेंपु ने अपनी रचनाओं के माध्यम से लोगों को जागृत करने के साथ स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित करने का भी कार्य किया है। 1933 ई. में उनका काव्य संग्रह

‘पाँचजन्य प्रकाशित हुआ, जिसमें राष्ट्रीयता से ओत प्रोत रचनाओं का संग्रह मिलता है। तत्कालीन रचनाकारों ने अपनी लेखनी से कई मोर्चे पर स्वाधीनता के प्रश्नों को मुखरता से उठाया है। कुवेंपु अपनी कविता में भारत को माता के रूप में संबोधित कर लिखते हैं —

‘भारत भूमि मेरी माता, मुझे पालनेवाला हिंडोला है
जीवन को ही अर्पित कर मैं, बनने देता देवी का आलय।
जाति पंथ के भेदों को मिटाते, भाषा के भेदों को हटाते
मिटाने दासता के अड़चन, जीवन को ही अर्पित कर मैं
बनने देता देवी का आलय। भारत भूमि मेरी माता...।’¹²

इस कविता के माध्यम से कवि ने भारत को माता से संबोधित कर उसका महिमामंडन किया है, वहीं बाद में वे यहाँ व्याप्त भाषागत, जातिगत भेदभाव की समस्या को भी समाप्त करने पर बल देते हैं, क्योंकि स्वर्णिम अतीत से काम नहीं चल सकता, बल्कि वर्तमान की सक्रियता ही हमें बेहतर भविष्य देने वाली होगी।

19वीं सदी में भारत में चलने वाले विभिन्न समाज सुधार आंदोलनों ने नवजागरण की पूर्व पीठिका तैयार की, साथ-ही-साथ इन आंदोलनों ने हमें समाज में व्याप्त विभिन्न अंधविश्वासों और रूढ़ियों को त्यागने का आधार प्रदान किया। कुर्वेपु की रचनाओं में भी नवजागरण की चेतना से अनुप्राणित भावबोध दिखाई पड़ता है। वे उन तमाम रूढ़ियों और अंधविश्वासों को समाप्त करना चाहते हैं, जिसके कारण समाज में जड़ता व्याप्त है। अपनी रचना में वे लिखते हैं —

‘मंदिर, गिरजा, मस्जिदों को छोड़ बाहर आइए
गरीबी को जड़ सहित उखाड़ने आइए
मूढ़ता की महामारी को भगाने के लिए
विज्ञान दीपक को धरने आइए
ओ भाइयो, आइए, त्वरित आइए।’¹³

‘इतिहास जिनकी उपेक्षा करता है, साहित्य उनकी चिंता करता है और उनकी आवाज बनकर उन्हें नया जीवन देता है। साहित्य ने अंग्रेजों के दमन और शोषण को उजागर किया तथा देश में राष्ट्रप्रेम की ज्योति जलाई। इस देश प्रेम की भावना से दक्षिण भारत भी अछूता नहीं रहा तथा दक्षिण भारतीय साहित्य में भी राष्ट्रीयता के स्वर मिलते हैं।

संदर्भ सूची :

1. लोकगीतों और गीतों में 1857, मैनेजर पाण्डेय, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, पृ. 1
2. भारतीय साहित्य की भूमिका, रामविलास शर्मा, प्रकाशक राजकमल प्रकाशन —पृ. 120
3. महाकवि सुब्रह्मण्यं भारती की राष्ट्रीय कविताएँ (हिन्दी पद्यानुवाद) रुपान्तरकार डॉ. एन. सुन्दरम्
डॉ. विश्वनाथ ‘विश्वासी’ लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद—1, पृ.सं.—33
4. सुब्रह्मण्य भारती, प्रेमा नन्दकुमार, अनुवाद रमेश बक्षी, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, पृ.सं. 68
5. महाकवि सुब्रह्मण्यं भारती की राष्ट्रीय कविताएँ (हिन्दी पद्यानुवाद) रुपान्तरकार डॉ. एन. सुन्दरम्

डॉ. विश्वनाथ 'विश्वासी' लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, पृ. सं.— 70

6. वही पृ. सं. 33
7. समन्वय दक्षिण, त्रैमासिक पत्रिका, माघ 2073—चैत्र 2074 / जनवरी—मार्च, 2017 सं. डॉ. अनीता गांगुली, केंद्रीय हिंदी संस्थान हैदराबाद तथा मैसूर केंद्र, पृ. सं. 104
8. समन्वय दक्षिण, त्रैमासिक पत्रिका, पौष फाल्गुन, 2076 / जनवरी—मार्च, 2020 / सं. डॉ. गंगाधर वानोडे केंद्रीय हिंदी संस्थान हैदराबाद तथा मैसूर केंद्र, पृ. सं. 21
9. समन्वय दक्षिण, पौष फाल्गुन 2074 / जनवरी—मार्च 2018 2017 सं. डॉ. अनीता गांगुली, केंद्रीय हिंदी संस्थान हैदराबाद तथा मैसूर केंद्र पृ. सं. 60
10. वही, पृ. सं. 66
11. सं. डॉ. तिप्पेस्वामी, राष्ट्रकवि कुवेंपु की कविताएँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2006, पृ. 95
12. सं. डॉ. तिप्पेस्वामी, राष्ट्रकवि कुवेंपु की कविताएँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2006, पृ. 95

मो. 8764424301

ईमेल : fattaramnayak@gmail.com



न्याय प्रणाली और महिलाओं के अधिकार : एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण

Dr. Nisha Rani

Asst. Professor, Political Science.

सारांश :

भारत में महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा और संवर्धन हेतु न्याय प्रणाली की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। यद्यपि संविधान और विभिन्न विशेष कानून महिलाओं को व्यापक अधिकार प्रदान करते हैं, तथापि व्यवहारिक धरातल पर इन अधिकारों के प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक बाधाएँ सामने आती हैं। यह शोध पत्र न्याय प्रणाली के वर्तमान स्वरूप का विश्लेषण करता है, विशेष रूप से यह जांचने के लिए कि यह प्रणाली महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने में कितनी सक्षम रही है। शोध में संविधान में निहित महिला अधिकारों, विशिष्ट विधिक प्रावधानों, तथा महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णयों का आलोचनात्मक अवलोकन किया गया है। साथ ही, महिलाओं को न्याय प्राप्त करने में आने वाली सामाजिक, आर्थिक, और संस्थागत चुनौतियों का भी अध्ययन किया गया है।

शोध पत्र से यह स्पष्ट होता है कि न्याय प्रक्रिया में देरी, न्यायालयों और पुलिस प्रशासन में लैंगिक संवेदनशीलता की कमी, विधिक साक्षरता का अभाव, और पारंपरिक सामाजिक दृष्टिकोण जैसी समस्याएं महिलाओं के अधिकारों की प्रभावी सुरक्षा में बड़ी बाधाएं हैं। इसके अतिरिक्त, न्यायपालिका में महिलाओं की कम भागीदारी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में न्याय तक पहुंच की सीमाएं भी गंभीर चिंताएं उत्पन्न करती हैं।

इस शोध पत्र में न्याय प्रणाली में आवश्यक सुधारों का सुझाव भी दिया गया है जैसे कि लैंगिक न्यायिक प्रशिक्षण, त्वरित न्यायालयों की स्थापना, मुफ्त विधिक सहायता की सुलभता, और महिलाओं के लिए अधिक समावेशी एवं सशक्त न्याय प्रणाली का निर्माण।

मुख्य शब्द : महिला अधिकार, न्याय प्रणाली, लैंगिक समानता, विधिक साक्षरता, न्यायिक निर्णय, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक बाधाएं, न्यायिक सुधार।

प्रस्तावना :

भारत में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति एक जटिल तथा विरोधाभासी परिदृश्य प्रस्तुत करती है। एक ओर जहाँ महिलाएँ राष्ट्रपति, मुख्यमंत्री, वैज्ञानिक, न्यायाधीश, और प्रशासक जैसे ऊँचे पदों तक पहुँची हैं, वहीं दूसरी ओर आज भी ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में उन्हें लैंगिक भेदभाव, घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा, यौन उत्पीड़न, वेतन असमानता तथा कार्यस्थल पर असुरक्षा जैसी गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ता

है। ऐतिहासिक रूप से भारतीय समाज पितृसत्तात्मक ढाँचे पर आधारित रहा है, जहाँ महिलाओं को द्वितीयक स्थान प्राप्त था। सामाजिक सुधार आंदोलनों और स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिलाओं की स्थिति में सुधार की पहल अवश्य हुई, परंतु आज भी समावेशी और न्यायपूर्ण समाज की परिकल्पना अधूरी प्रतीत होती है।¹

न्याय प्रणाली किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र का आधार स्तंभ होती है। यह न केवल विधिक विवादों का समाधान करती है, बल्कि समाज में नैतिकता और समानता की स्थापना का माध्यम भी बनती है। महिलाओं के संदर्भ में, न्याय प्रणाली का कार्यक्षेत्र और भी अधिक संवेदनशील हो जाता है क्योंकि यह न केवल महिलाओं के विधिक अधिकारों की रक्षा करता है, बल्कि उनकी मानवीय गरिमा, स्वतंत्रता और सुरक्षा सुनिश्चित करने का माध्यम भी होता है। संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकार घोषणाओं (1948) के अनुसार, महिलाओं को समान अवसर, समान वेतन और भेदभाव रहित जीवन जीने का अधिकार है। भारतीय न्याय व्यवस्था, विशेषकर संविधान, इन मूल्यों को संरक्षित करने हेतु प्रतिबद्ध है।²

महिलाओं के अधिकारों की अवधारणा तीन प्रमुख दृष्टिकोणों संवैधानिक, विधिक और सामाजिक से समझी जा सकती है। संवैधानिक दृष्टिकोण से, भारतीय संविधान में महिलाओं को विशेष अधिकार दिए गए हैं, जैसे समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14), भेदभाव न करने का अधिकार (अनुच्छेद 15), कार्य के अवसर की समानता (अनुच्छेद 16), और जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 21)। इसके अतिरिक्त राज्य को महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति भी दी गई है। विधिक दृष्टिकोण से, अनेक अधिनियम महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं जैसे कि दहेज निशेध अधिनियम 1961, घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम 2005, कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, प्रतिषेध और प्रतितोष) अधिनियम 2013 आदि।³

सामाजिक दृष्टिकोण से, महिलाओं के अधिकार केवल विधिक दस्तावेजों में ही नहीं, बल्कि समाज की मानसिकता, सांस्कृतिक मूल्यों और परंपराओं में भी परिलक्षित होने चाहिए। यदि समाज में महिलाओं के प्रति सम्मान, समानता और सुरक्षा की भावना विकसित नहीं होती, तो कोई भी विधिक ढांचा प्रभावी सिद्ध नहीं हो सकता। यही कारण है कि न्याय प्रणाली की सफलता का मूल्यांकन केवल कानून के प्रवर्तन से नहीं, बल्कि महिलाओं के जीवन की व्यावहारिक वास्तविकताओं में परिवर्तन से किया जाना चाहिए।⁴

इस प्रकार, न्याय प्रणाली और महिलाओं के अधिकारों का संबंध केवल विधिक दृष्टि से नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और लैंगिक न्याय के व्यापक संदर्भ में देखा जाना चाहिए। यह शोध पत्र इसी संबंध की आलोचनात्मक पड़ताल करेगा। भारत का संविधान एक ऐसा सामाजिक दस्तावेज है जो नागरिकों को न केवल विधिक संरक्षण प्रदान करता है, बल्कि उनके मौलिक अधिकारों को सुनिश्चित करता है। महिलाओं के अधिकारों को विशेष रूप से संविधान में उल्लेखित किया गया है ताकि ऐतिहासिक रूप से चली आ रही लैंगिक असमानता को दूर किया जा सके। भारतीय संविधान के निर्माताओं ने महिलाओं की समानता, गरिमा और स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने हेतु अनेक अनुच्छेदों को समाहित किया, जो आधुनिक भारत में महिलाओं के अधिकारों की नींव बन रहे हैं।

भारतीय संविधान में महिलाओं के अधिकार :

- **समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14)** – अनुच्छेद 14 के अनुसार, “राज्य भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानूनों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।” इसका तात्पर्य यह

है कि महिला और पुरुष दोनों को कानून की दृष्टि में समान माना जाएगा। यह अधिकार महिलाओं को बराबरी का दर्जा देता है, चाहे वह संपत्ति का अधिकार हों या रोजगार, शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधाएं।⁵

- **भेदभाव न करने का अधिकार (अनुच्छेद 15)** – अनुच्छेद 15(1) राज्य को यह आदेश देता है कि वह केवल धर्म, जाति, लिंग, जन्म स्थान आदि के आधार पर किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं करेगा। अनुच्छेद 15(3) विशेष रूप से राज्य को यह अधिकार देता है कि वह महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान बना सकता है। यह सामाजिक न्याय की अवधारणा को मजबूत करता है और महिलाओं के सशक्तिकरण को संवैधानिक आधार प्रदान करता है।⁶

- **अवसर की समानता (अनुच्छेद 16)** – अनुच्छेद 16 सरकारी नौकरियों में सभी नागरिकों को समान अवसर सुनिश्चित करता है। इस अनुच्छेद का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि पारंपरिक रूप से महिलाओं को कार्यक्षेत्र में पीछे रखा गया है। यह अनुच्छेद उन्हें सरकारी सेवा, पदोन्नति और कार्यस्थल पर समान व्यवहार प्राप्त करने की गारंटी देता है।⁷

- **जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 21)** – अनुच्छेद 21, जो प्रत्येक व्यक्ति को जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार देता है, महिलाओं के संदर्भ में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। उच्चतम न्यायालय ने अपने अनेक निर्णयों में यह स्पष्ट किया है कि यह अधिकार केवल शारीरिक अस्तित्व तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें गरिमा, सुरक्षा, सम्मान और स्वतंत्रता की भावना भी निहित है।⁸

महिलाओं से संबंधित विशेष कानून :

- **दहेज निषेध अधिनियम, 1961** – यह कानून दहेज प्रथा को एक आपराधिक अपराध घोषित करता है। यह अधिनियम विवाह के समय, पूर्व या बाद में किसी भी प्रकार के दहेज की मांग, स्वीकार या भुगतान को गैरकानूनी बनाता है। यह महिलाओं के शोषण और हिंसा को रोकने का एक सशक्त माध्यम है।⁹

- **घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, 2005** – यह अधिनियम महिलाओं को शारीरिक, मानसिक, आर्थिक और यौन हिंसा से संरक्षण प्रदान करता है। यह न केवल विवाहित महिलाओं सुरक्षा प्रदान करता है बल्कि उन महिलाओं को भी सुरक्षा प्रदान करता है जो घरेलू संबंधों में हैं। इसके अंतर्गत संरक्षण अधिकारी, राहत आदेश, निवास अधिकार और भरण-पोषण की व्यवस्था भी है।¹⁰

- **कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न [POSH] अधिनियम, 2013** – यह अधिनियम कार्यस्थलों पर महिलाओं को लैंगिक उत्पीड़न से संरक्षण प्रदान करता है। इसमें आंतरिक शिकायत समिति (ICC) की स्थापना, समयबद्ध जांच और अनुशासनात्मक कार्रवाई की प्रक्रिया को स्पष्ट किया गया है। यह कानून “विशाखा बनाम राज्य सरकार राजस्थान” (AIR 1997 SC 3011) मामले के निर्णय पर आधारित है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने कार्यस्थल पर महिलाओं के लिए सुरक्षित वातावरण की आवश्यकता को रेखांकित किया था।¹¹

- **बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006** – यह अधिनियम बाल विवाह को अवैध घोषित करता है और विवाह की न्यूनतम आयु निर्धारित करता है, लड़कियों के लिए 18 वर्ष और लड़कों के लिए 21 वर्ष। यह कानून बालिकाओं के शिक्षा, स्वास्थ्य और विकास के अधिकार की रक्षा करता है और उनके भविष्य को सुनिश्चित करता है।¹²

भारतीय न्याय प्रणाली में महिलाओं की स्थिति :

भारतीय न्याय प्रणाली का मूल उद्देश्य हर नागरिक को निष्पक्ष, शीघ्र और समान न्याय प्रदान करना है, किंतु जब बात महिलाओं की आती है तो यह प्रणाली कई स्तरों पर कमजोर दिखाई देती है। यद्यपि संविधान और विधिक संरचना महिलाओं को विशेष सुरक्षा और अधिकार प्रदान करते हैं, तथापि व्यवहारिक धरातल पर न्याय प्राप्ति की राह उनके लिए कठिन, धीमी और अनेक सामाजिक व संस्थागत पूर्वग्रहों से भरी हुई है।

- **न्यायपालिका में महिलाओं की भागीदारी** – भारतीय न्यायपालिका में महिलाओं की भागीदारी ऐतिहासिक रूप से सीमित रही है। उच्चतम न्यायालय में 1950 से लेकर 2023 तक कुल 270 से अधिक न्यायाधीश नियुक्त हुए, जिनमें से केवल 11 महिलाएं थीं। 2024 तक सर्वोच्च न्यायालय में कार्यरत न्यायाधीशों में महिलाओं की संख्या केवल 13 प्रतिशत के आसपास है, जबकि उच्च न्यायालयों में यह संख्या और भी कम है।¹³ अधिवक्ताओं और वकीलों के समुदाय में भी महिलाओं की भागीदारी नगण्य रही है। बार काउंसिल ऑफ इंडिया के अनुसार, भारत में कुल अधिवक्ताओं का लगभग 15 प्रतिशत ही महिलाएं हैं।

यह प्रतिनिधित्व की कमी न्याय निर्णयों में लैंगिक दृष्टिकोण की अनुपस्थिति का कारण बनती है। जब न्यायिक संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी सीमित होती है, तो महिलाओं से जुड़े मामलों में संवेदनशीलता और अनुभवजन्य समझ की कमी रह जाती है।¹⁴

- **न्यायिक प्रक्रिया में देरी और इसका महिलाओं पर प्रभाव** – भारत में न्याय प्रक्रिया की धीमी गति एक प्रमुख समस्या है। विषेशकर महिलाओं से जुड़े मामलों जैसे दहेज प्रताड़ना, यौन उत्पीड़न, बलात्कार, घरेलू हिंसा के केस वर्षों तक चलते हैं, जिससे पीड़िता भावनात्मक, मानसिक और आर्थिक रूप से टूट जाती है। निर्भया केस (2012) में ही अंतिम फांसी का निर्णय आने में आठ वर्ष लग गए।

कई बार महिलाएं लंबे समय तक अदालतों के चक्कर काटती हैं, और न्याय मिलने की देरी स्वयं अन्याय में बदल जाती है।¹⁵ यह स्थिति उन महिलाओं के लिए और भी कठिन हो जाती है जो ग्रामीण क्षेत्रों से आती हैं या आर्थिक रूप से कमजोर हैं, क्योंकि वे लंबे समय तक वकील, यात्रा और सामाजिक दबाव का सामना नहीं कर पातीं।

- **पुलिस, जांच और अभियोजन प्रक्रिया में लैंगिक पूर्वग्रह** – न्याय प्रणाली की पहली कड़ी पुलिस और जांच एजेंसियां भी महिलाओं के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार दिखाती हैं। पीड़ित महिलाएं अक्सर पुलिस थानों में रिपोर्ट दर्ज कराने से डरती हैं, क्योंकि उन्हें अपमान, संदेह और संवेदनहीनता का सामना करना पड़ता है।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB, 2022) के अनुसार, महिलाओं से जुड़े अपराधों में कई मामलों की रिपोर्ट ही नहीं होती या फिर रिपोर्ट होने के बाद जांच प्रक्रिया में जानबूझकर देरी की जाती है। पुलिस अधिकारियों और अभियोजन अधिकारियों में भी लैंगिक जागरूकता और संवेदनशीलता का अभाव देखा गया है।¹⁶

यह पूर्वाग्रह जांच की निष्पक्षता को प्रभावित करता है और न्याय की गुणवत्ता को क्षीण करता है। बलात्कार जैसे गंभीर मामलों में भी अभियोजन पक्ष की लापरवाही और अपमानजनक जिरह महिलाओं के लिए पुनः आघात का कारण बनती है।

- **न्यायिक फैसलों में लैंगिक संवेदनशीलता का अभाव** – हालांकि न्यायपालिका ने कुछ मामलों में सराहनीय निर्णय दिए हैं (जैसे विशाखा बनाम राजस्थान राज्य, 1997; शायरा बानो बनाम भारत संघ, 2017), फिर

भी अनेक न्यायिक निर्णयों में यह देखा गया है कि न्यायाधीशों की टिप्पणियाँ महिलाओं की गरिमा को ठेस पहुँचाती हैं या फिर सामाजिक रूढ़ियों पर आधारित होती हैं।

कई बार बलात्कार के मामलों में 'पीड़िता की चरित्र जांच', 'पूर्व यौन संबंध', 'रात में बाहर जानें' जैसी बातें निर्णय का आधार बनती हैं, जो लैंगिक न्याय के विरुद्ध हैं। मधुर वर्मा बनाम दिल्ली सरकार जैसे मामलों में अदालत की टिप्पणियों ने यह दिखाया कि न्यायाधीशों को अभी भी महिलाओं के अधिकारों और गरिमा के प्रति संवेदनशील समझ की आवश्यकता है।¹⁷

इसके अलावा, संवेदनशील मामलों में पीड़िता की पहचान उजागर करना, उसे कठघरे में खड़ा करना और समाज द्वारा दोषारोपण करना न्याय प्रणाली की असफलता को दर्शाता है।

महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णयों का विश्लेषण :

भारतीय न्यायपालिका ने समय-समय पर ऐसे ऐतिहासिक निर्णय दिए हैं जिन्होंने महिलाओं के अधिकारों को संरक्षित करने और उन्हें संवैधानिक संरक्षण प्रदान करने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। इन निर्णयों ने न केवल विधिक दृष्टिकोण से दिशा निर्धारित की है, बल्कि सामाजिक चेतना और नीति निर्माण को भी प्रभावित किया है। नीचे कुछ प्रमुख मामलों का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है –

- **विशाखा बनाम राज्य सरकार राजस्थान (AIR 1997 SC 3011)**

प्रसंग – इस मामले की पृष्ठभूमि में एक सामाजिक कार्यकर्ता भंवरी देवी के साथ सामूहिक बलात्कार तब हुआ था, जब उसने बाल विवाह को रोकने की कोशिश की थी। उस समय तक कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के विरुद्ध कोई स्पष्ट कानून नहीं था, तब यह मामला सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँचा।

निर्णय – सर्वोच्च न्यायालय ने पहली बार 'सेक्सुअल हैरेसमेंट' को एक गंभीर मानवाधिकार उल्लंघन माना और कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा के लिए 'विशाखा दिशा-निर्देश' जारी किए। न्यायालय ने कहा कि जब तक संसद इस विषय पर कोई विधि नहीं बनाती, तब तक ये दिशा-निर्देश कानून की तरह मान्य होंगे।¹⁸

- **मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानो बेगम (AIR 1985 SC 945)**

प्रसंग – शाह बानो, नामक एक वृद्ध मुस्लिम महिला ने अपने पति से तलाक के बाद भरण-पोषण की मांग की। पति ने मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत ज़िम्मेदारी से इंकार किया।

निर्णय – सर्वोच्च न्यायालय ने धारा 125 CrPC के तहत निर्णय देते हुए कहा कि भरण-पोषण का अधिकार धर्म पर आधारित नहीं है, और मुस्लिम महिलाओं को भी यह अधिकार समान रूप से प्राप्त है।

- **निर्भया केस (Mukesh & Ors v. State for NCT of Delhi, 2017)**

प्रसंग – 16 दिसंबर 2012 को दिल्ली में एक 23 वर्षीय छात्रा के साथ चलती बस में सामूहिक बलात्कार और क्रूरतम हिंसा हुई, जिससे उसकी मृत्यु हो गई।

निर्णय – सभी दोषियों को मृत्युदंड की सज़ा दी गई। यह मामला भारत में बलात्कार कानूनों में व्यापक सुधार का कारण बना।

- **शायरा बानो बनाम भारत संघ (Shayara Bano v. Union of India, AIR 2017 SC 4609)**

प्रसंग – शायरा बानो को उनके पति ने एक बार में 'तीन तलाक' कहकर छोड़ दिया।

निर्णय – सर्वोच्च न्यायालय ने बहुमत से तीन तलाक को असंवैधानिक घोषित किया और कहा कि यह

महिलाओं के समानता और गरिमा के अधिकारों का उल्लंघन है।

- **हेमलता सुशीलचंद्र शुक्ला बनाम राज्य सरकार (2012)**

प्रसंग – हेमलता शुक्ला ने अपने पति और ससुराल पक्ष द्वारा की जा रही घरेलू हिंसा के खिलाफ शिकायत दर्ज की थी।

निर्णय – बंबई उच्च न्यायालय ने घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, 2005 की व्यापक व्याख्या करते हुए मानसिक, आर्थिक और मौखिक हिंसा को भी घरेलू हिंसा की श्रेणी में स्वीकार किया।

व्यावहारिक चुनौतियाँ और बाधाएँ :

भारतीय न्याय प्रणाली में महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा हेतु अनेक संवैधानिक प्रावधान और विशेष कानून मौजूद हैं, परंतु व्यवहारिक धरातल पर इन कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियाँ और बाधाएँ सामने आती हैं। ये बाधाएँ केवल विधिक ढांचे की कमियों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि सामाजिक मानसिकता, संस्थागत व्यवस्था और प्रशासनिक प्रक्रियाओं से भी गहराई से जुड़ी हुई हैं। नीचे इन व्यावहारिक चुनौतियों का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है :—

- **विधिक साक्षरता की कमी** – भारत में आज भी बड़ी संख्या में महिलाएं अपने अधिकारों से पूरी तरह अवगत नहीं हैं। विशेषकर ग्रामीण, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अशिक्षित वर्ग की महिलाएं यह नहीं जानती कि वे घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न, दहेज प्रथा या भरण-पोषण के मामलों में विधिक सहायता प्राप्त कर सकती हैं। कई बार महिलाएं यह समझती हैं कि कानूनी प्रक्रिया महंगी, लंबी और समाज विरोधी होती है।

राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW) की रिपोर्ट (2020) के अनुसार, भारत में केवल 25 प्रतिशत महिलाएं ही किसी भी कानूनी अधिकार के बारे में स्पष्ट जानकारी रखती हैं। यह विधिक जागरूकता की गंभीर कमी को दर्शाता है।¹⁹

- **सामाजिक और पारिवारिक दबाव** – महिलाओं को न्याय की मांग करने से पहले ही अपने परिवार और समाज के विरोध का सामना करना पड़ता है। विवाह, प्रतिष्ठा और रिश्तों को “बचाने” के नाम पर उन्हें चुप रहने की सलाह दी जाती है। विशेषकर जब दोषी व्यक्ति परिवार का सदस्य होता है जैसे पति, पिता या ससुराल पक्ष, तब महिलाओं को न्यायिक कदम उठाने से रोका जाता है।

सामाजिक कलंक, ‘इज्जत’ की चिंता, और अकेलेपन का डर उन्हें चुप रहने पर विवश करता है। इससे कई बार पीड़िता ही दोषी बना दी जाती है और समाज उसे बहिष्कृत कर देता है।²⁰

- **पुलिस और न्यायिक प्रक्रिया में भ्रष्टाचार और पक्षपात** – पुलिस और न्यायिक तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार और लैंगिक पक्षपात महिलाओं के लिए न्याय प्राप्ति को और कठिन बना देता है। अनेक मामलों में पुलिस FIR दर्ज करने से इंकार करती है, या फिर पीड़िता पर ही संदेह करती है। कई बार आरोपी को पैसे, प्रभाव या राजनैतिक संबंधों के कारण संरक्षण मिल जाता है।

अभियोजन प्रक्रिया में लापरवाही, कमजोर साक्ष्य प्रस्तुति, और बार-बार सुनवाई टालने जैसे कारणों से केस वर्षों तक लंबित रहते हैं। इससे पीड़िता का मनोबल टूटता है और न्याय प्रणाली से विश्वास उठता है।²¹

- **ग्रामीण बनाम शहरी महिलाओं के अनुभवों में अंतर** – भारत के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की न्याय तक पहुंच में बड़ा अंतर है। शहरी महिलाएं अपेक्षाकृत शिक्षित, जागरूक और विधिक संसाधनों तक

अधिक पहुंच रखने वाली होती हैं, जबकि ग्रामीण महिलाओं को न तो सही जानकारी होती है, न ही आस-पास पर्याप्त संस्थागत सहायता उपलब्ध होती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में न्यायालय, महिला हेल्पलाइन, परामर्श केंद्र, या NGO की पहुँच सीमित है। इसके अलावा ग्राम पंचायतों की संरचना और पारंपरिक पंचायतें कई बार महिलाओं के अधिकारों के विरुद्ध फैसले सुनाती हैं, जिससे उन्हें औपचारिक न्याय प्रणाली से भी वंचित रहना पड़ता है।²²

- **न्याय तक पहुंच में आर्थिक, सामाजिक और भौगोलिक बाधाएं** – विधिक प्रक्रिया में बार-बार न्यायालय जाना, वकील की फीस, यात्रा खर्च, दस्तावेजीकरण आदि में होने वाला खर्च महिलाओं, विशेषकर आर्थिक रूप से कमजोर एवं आश्रित वर्ग की महिलाओं के लिए बहुत बड़ा अवरोध है।

इसके अतिरिक्त, दूरदराज और आदिवासी क्षेत्रों में महिलाओं को न्यायालय तक पहुँचने के लिए लंबी दूरी तय करनी पड़ती है, जिसमें समय, धन और सामाजिक जोखिम तीनों शामिल हैं। सामाजिक स्तर पर जातिगत भेदभाव, विधवा या तलाकशुदा महिलाओं के प्रति उपेक्षा, और कार्यस्थल पर असुरक्षा भी न्याय तक पहुंच को कठिन बना देते हैं।

- **विधिक सहायता तंत्र की असफलता** – भारतीय संविधान में निःशुल्क विधिक सहायता का प्रावधान है (अनुच्छेद 39A), और इसके लिए राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) जैसे संस्थान भी स्थापित किए गए हैं। लेकिन व्यवहार में यह तंत्र उतना प्रभावी नहीं है जितना होना चाहिए।

NALSA की रिपोर्ट (2021) के अनुसार, 60 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण महिलाएं निःशुल्क विधिक सहायता योजनाओं के बारे में जानती तक नहीं हैं। जहां सहायता उपलब्ध होती भी है, वहाँ वकीलों की गुणवत्ता, गंभीरता और सेवाओं की पारदर्शिता पर प्रश्न उठते हैं।²³

न्याय प्रणाली में सुधार की आवश्यकता :

भारतीय न्याय प्रणाली में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा हेतु संवैधानिक और कानूनी प्रावधान तो पर्याप्त हैं, किंतु इनका प्रभावी क्रियान्वयन कई कारणों से सीमित रह गया है। न्याय प्रक्रिया की जटिलता, लैंगिक पूर्वाग्रह, और संस्थागत संवेदनशीलता की कमी जैसे कारकों के चलते महिलाओं को न्याय तक पहुंचने में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। इन चुनौतियों के समाधान हेतु न्याय प्रणाली में संरचनात्मक और नीतिगत सुधारों की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। निम्नलिखित बिंदुओं में इस आवश्यकता को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है :-

- **लैंगिक संवेदनशील न्यायिक प्रशिक्षण** – भारतीय न्याय व्यवस्था में कार्यरत पुलिस कर्मियों, न्यायिक अधिकारियों और अभियोजन अधिकारियों को महिलाओं के अधिकारों, लैंगिक न्याय, यौन हिंसा, घरेलू हिंसा और कार्यस्थल उत्पीड़न जैसे विषयों पर संवेदनशील प्रशिक्षण प्रदान करना अत्यंत आवश्यक है।

कई बार न्यायिक टिप्पणियाँ या निर्णय महिलाओं के प्रति रुढ़िवादी सामाजिक दृष्टिकोण को प्रकट करते हैं, जिससे पीड़िता को पुनः मानसिक आघात झेलना पड़ता है। न्यायिक संस्थानों में Gender Sensitization Modules को नियमित रूप से अनिवार्य बनाना चाहिए।²⁴

- **अधिक महिला न्यायाधीशों और पुलिस अधिकारियों की नियुक्ति** – न्यायपालिका और पुलिस तंत्र में महिलाओं की संख्या अत्यंत कम है। सुप्रीम कोर्ट में अब तक कुल न्यायाधीशों में महिलाओं की हिस्सेदारी 10

प्रतिशत से भी कम रही है। इसी तरह, पुलिस बल में महिलाएं कुल कर्मियों का केवल 11 प्रतिशत हैं।²⁵

महिला अधिकारी न केवल महिलाओं से जुड़े मामलों में अधिक संवेदनशीलता से काम करती हैं, बल्कि पीड़िताओं को सुरक्षा और विश्वास का भी अनुभव होता है। अतः महिलाओं की भर्ती, पदोन्नति और प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

- **त्वरित न्याय की व्यवस्था** – महिलाओं से संबंधित अपराधों जैसे बलात्कार, दहेज, हत्या, यौन उत्पीड़न, और घरेलू हिंसा के मामलों में शीघ्र न्याय मिलना अत्यंत आवश्यक है। न्याय में देरी, विशेषकर यौन अपराधों में, पीड़िता को दोबारा पीड़ा देती है और आरोपी को कानूनी प्रक्रियाओं का दुरुपयोग करने का अवसर देती है।

Fast-track Courts की स्थापना, समयबद्ध सुनवाई, और प्रक्रिया की निगरानी के लिए विशिष्ट निकायों का गठन आवश्यक है। निर्भया फंड के अंतर्गत बने न्यायालयों की संख्या और उनकी पहुँच बढ़ाई जानी चाहिए।²⁶

- **विधिक सहायता सेवाओं को सुलभ बनाना** – संविधान के अनुच्छेद 39A के तहत सभी नागरिकों को निःशुल्क विधिक सहायता प्राप्त करने का अधिकार है, विशेषकर उन वर्गों को जो आर्थिक रूप से कमजोर हैं। परंतु व्यवहार में यह सहायता प्रणाली कमजोर और अपर्याप्त है।

NALSA (National Legal Services Authority) और राज्य विधिक सेवा प्राधिकरणों को सशक्त बनाना, अधिक महिला पैरालीगल स्वयंसेवकों की नियुक्ति, और गाँव-स्तर पर विधिक जागरूकता शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिए। साथ ही, महिलाओं के लिए एकल खिड़की व्यवस्था (Single Window Legal Aid) विकसित करना उपयोगी रहेगा।²⁷

- **महिलाओं की शिकायतों की निष्पक्ष और संवेदनशील जांच** – अनेक बार महिलाओं की शिकायतों को पुलिस और जांच एजेंसियाँ गंभीरता से नहीं लेतीं या फिर मामले को दबाने की कोशिश करती हैं। विशेषकर जब आरोपी राजनीतिक या आर्थिक रूप से प्रभावशाली हो।

इस स्थिति से निपटने के लिए स्वतंत्र महिला शिकायत प्रकोष्ठ, शिकायतों की ऑडिटिंग प्रणाली और महिला पुलिस थानों की संख्या एवं उनकी प्रभावशीलता को बढ़ाने की आवश्यकता है। साथ ही, पीड़िता के अधिकारों की रक्षा के लिए Victim Protection Protocols को अनिवार्य बनाया जाना चाहिए।²⁸

- **न्याय प्रणाली में लैंगिक समानता के लिए नीति परिवर्तन** – नीति निर्माण में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना अत्यंत आवश्यक है। महिला सशक्तिकरण केवल कानून बनाने से नहीं होगा, जब तक कि महिलाएं खुद निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा न बनें। इसके लिए न्याय विभाग, विधि आयोग, बार काउंसिल्स, और विधायिकाओं में लैंगिक समानता पर आधारित प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना होगा।

इसके अलावा, Gender Budgeting, Gender Audits और Impact Assessments जैसे उपकरणों का न्याय प्रणाली में समावेश करना जरूरी है ताकि महिलाओं पर कानूनों और न्यायिक नीतियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से समझा जा सके।²⁹

संभावित समाधान और सुझाव :

भारत में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा हेतु संवैधानिक और विधिक ढाँचा तो स्थापित है, लेकिन इसके सफल क्रियान्वयन के लिए बहुस्तरीय प्रयासों की आवश्यकता है। केवल कानून बनाना पर्याप्त नहीं है; आवश्यक

है कि वे कानून समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए प्रभावशाली ढंग से लागू भी हों। इस दिशा में कुछ प्रमुख समाधान और सुझाव निम्नलिखित हैं :-

- **कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन पर जोर** - भारत में महिलाओं की सुरक्षा और सशक्तिकरण हेतु अनेक कानून बनाए गए हैं, जैसे घरेलू हिंसा अधिनियम 2005, दहेज निषेध अधिनियम 1961, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न रोकथाम अधिनियम 2013 आदि। किंतु इनका प्रभाव तभी होगा जब उनका गंभीरतापूर्वक पालन हो। सरकार को कानूनों के क्रियान्वयन की निगरानी प्रणाली को मजबूत करना चाहिए। राज्यों में नोडल एजेंसियाँ स्थापित कर हर जिले में महिला कानूनों की प्रगति की रिपोर्ट तैयार की जानी चाहिए। साथ ही न्यायपालिका, पुलिस और अभियोजन विभाग को भी उत्तरदायित्व के साथ कार्य करना होगा ताकि महिलाओं को वास्तविक न्याय मिल सके।

- **महिला अधिकारों पर व्यापक जनजागरण अभियान** - कानूनों की जानकारी का अभाव महिलाओं के न्याय से वंचित रहने का एक मुख्य कारण है। महिलाओं को उनके अधिकारों, उपलब्ध कानूनी उपायों, और शिकायत दर्ज कराने की प्रक्रियाओं के बारे में व्यापक रूप से जागरूक किया जाना आवश्यक है।

इसके लिए प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक और सोशल मीडिया के माध्यम से सतत अभियान चलाए जाने चाहिए। स्कूलों, कॉलेजों और पंचायत स्तर पर लीगल लिटरेसी कैंप्स आयोजित किए जाएं। खासकर ग्रामीण और अल्पसंख्यक समुदाय की महिलाओं तक जानकारी पहुंचाने के लिए क्षेत्रीय भाषाओं में सामग्री तैयार कर प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए।

- **महिला आयोगों और NGO की भूमिका को सशक्त बनाना** - राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW) और राज्य महिला आयोगों को और भी अधिक अधिकार, संसाधन और स्वतंत्रता प्रदान की जानी चाहिए ताकि वे महिला उत्पीड़न के मामलों में प्रभावी हस्तक्षेप कर सकें।

इसके साथ ही, गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) की भूमिका को संस्थागत रूप से मान्यता देते हुए उन्हें ग्रासरूट स्तर पर विधिक सहायता, परामर्श और पुनर्वास कार्यों में साझेदार बनाया जाना चाहिए। इन संगठनों को नीति निर्माण प्रक्रिया में भागीदारी दी जानी चाहिए, जिससे नीतियाँ ज़मीनी सच्चाइयों से जुड़ी रहें।

- **पीड़ित सहायता केंद्रों और महिला परामर्श केंद्रों की संख्या और पहुँच बढ़ाना** - महिलाओं को एक ऐसी सुरक्षित जगह की आवश्यकता होती है जहाँ वे बिना भय और सामाजिक दबाव के अपनी समस्या साझा कर सकें और सहायता प्राप्त कर सकें। इसके लिए हर जिले में वन-स्टॉप सेंटर (OSC), महिला परामर्श केंद्र और फैमिली कोर्ट काउंसलिंग यूनिट्स की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिए।

इन केंद्रों में महिला पुलिस अधिकारी, सामाजिक कार्यकर्ता, वकील, और मनोवैज्ञानिक तैनात किए जाएँ ताकि पीड़िता को संपूर्ण सहायता एक ही स्थान पर मिल सके। ये केंद्र 24x7 संचालित हों और इन्हें राष्ट्रीय हेल्पलाइन नेटवर्क से जोड़ा जाए।

निष्कर्ष :

भारत की न्याय प्रणाली में महिलाओं के अधिकारों की स्थिति का समग्र मूल्यांकन यह दर्शाता है कि यद्यपि संवैधानिक और कानूनी स्तर पर महिलाओं को अनेक अधिकार प्राप्त हैं, परंतु व्यवहारिक धरातल पर उनका प्रभाव अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाया है। भारतीय संविधान में समानता, स्वतंत्रता और सम्मान के जो सिद्धांत निहित

हैं, वे एक आदर्श स्थिति की कल्पना प्रस्तुत करते हैं, जहाँ महिलाएं भेदभाव से मुक्त होकर समान अवसरों और न्याय का लाभ उठा सकें, किंतु सामाजिक ढाँचे, पितृसत्तात्मक सोच, विधिक जागरूकता की कमी और न्याय प्रणाली में व्याप्त जटिलताओं के कारण ये अधिकार अक्सर केवल कागज़ों तक सीमित रह जाते हैं।

महिलाओं से संबंधित न्यायिक प्रक्रियाओं में देरी, पुलिस और अभियोजन प्रणाली में लैंगिक पूर्वग्रह, तथा न्यायिक निर्णयों में संवेदनशीलता के अभाव ने महिलाओं के न्याय प्राप्ति के मार्ग को कठिन बना दिया है। विशेषतः बलात्कार, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न और वैवाहिक अधिकारों से जुड़े मामलों में पीड़िता को न्याय पाने के लिए वर्षों संघर्ष करना पड़ता है। ऐसे मामलों में न्याय का विलंब अपने आप में एक अन्याय बन जाता है। इस परिप्रेक्ष्य में सुधार की आवश्यकता अत्यंत गंभीर हो जाती है। समाज और राज्य दोनों को मिलकर इस दिशा में जिम्मेदारी निभानी होगी। राज्य की भूमिका केवल विधिक ढाँचे तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि उसे प्रभावी क्रियान्वयन, संसाधनों की उपलब्धता, प्रशिक्षण और निगरानी के स्तर पर भी सक्रिय होना चाहिए और साथ ही समाज को भी अपनी सोच में परिवर्तन लाकर महिलाओं के अधिकारों को समान रूप से स्वीकार करना होगा।

इसके साथ-साथ यह भी ज़रूरी है कि महिलाएं केवल न्याय की उपभोक्ता ही न बनें, बल्कि न्यायिक प्रक्रिया की निर्माता और संचालक के रूप में भी भूमिका निभाएं। जब न्याय प्रणाली महिलाओं की आवाज़ों, अनुभवों और नेतृत्व को स्थान देगी, तभी महिला सशक्तिकरण एक सच्चे अर्थ में साकार हो सकेगा। इस दिशा में उठाया गया प्रत्येक कदम भारत को एक न्यायपूर्ण, समतामूलक और संवेदनशील राष्ट्र बनाने की ओर अग्रसर करेगा।

संदर्भ :-

- देसाई, नीरा, वुमन इन मॉडर्न इंडिया, विकास पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 1977, पृ०सं० 79
- बसु, डी०डी०, इंट्रोडक्शन टू द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, लेक्सिसनेक्सस, गुरुग्राम, 2016, पृ०सं० 95
- त्रिपाठी, एस०सी०, लॉ रिलेटिंग टू विमेन एंड चिल्ड्रेन, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, 2019, पृ०सं० 198
- एग्नेस, फ्लाविया, लॉ एंड जेंडर इनइक्वैलिटी : द पॉलिटिक्स ऑफ विमेन्स राइट्स इन इंडिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2001, पृ०सं० 150
- बसु, डी०डी०, इंट्रोडक्शन टू द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, लेक्सिसनेक्सस, गुरुग्राम, 2016, पृ०सं० 81
- शुक्ल, वी.एन., कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, ईस्टर्न बुक कंपनी, लखनऊ, 2017, पृ०सं० 47
- जैन, एम.पी., इंडियन कॉन्स्टिट्यूशनल लॉ, लेक्सिसनेक्सस, गुरुग्राम, 2018, पृ०सं० 123
- फ्रांसिस कोराली मलिन बनाम यूनियन टेरिटरी ऑफ दिल्ली, एआईआर 1981 एससी 746
- त्रिपाठी, एस.सी., लॉ रिलेटिंग टू विमेन एंड चिल्ड्रेन, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, 2019, पृ०सं० 210
- एग्नेस, फ्लाविया, लॉ एंड जेंडर इनइक्वैलिटी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2001, पृ०सं० 189
- मेनन, निवेदिता, सीइंग लाइक अ फेमिनिस्ट, जुबान, नई दिल्ली, 2012, पृ०सं० 132

- पुरोहित, बी.आर., चाइल्ड मैरिज इन इंडिया, रावत पब्लिकेशंस, जयपुर, 2010, पृ०सं० 73
- इंडिया जस्टिस रिपोर्ट, 2022
- एग्नेस, फ्लाविया, लॉ एंड जेंडर इनइक्वैलिटी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2001, पृ०सं० 176
- भूषण, प्रशांत, द केस दैट शुक्र इंडिया, पेंग्विन बुक्स, नई दिल्ली, 2018, पृ०सं० 221
- सुदर्शन, आर. और झा, श्वेता, लॉ एनफोर्समेंट एंड जेंडर, इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, खंड 48, अंक 32, 2013, पृ०सं० 48
- चक्रवर्ती, नंदिनी, जेंडर एंड जुडिशियल रीजनिंग, कैम्ब्रिज इंडिया, 2020, पृ०सं० 88
- बसु, डी०डी०, लॉ ऑफ द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, लेक्सिसनेक्सस, 2016, पृ०सं० 473
- अग्रवाल, बीना, अ फील्ड ऑफ वनशस ओन : जेंडर एंड लैंड राइट्स इन साउथ एशिया, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994, पृ०सं० 167
- मेनन, निवेदिता, रिकवरींग सबवर्जिन : फेमिनिस्ट पॉलिटिक्स बियॉन्ड द लॉ, पर्मानेंट ब्लैक, 2004, पृ०सं० 94
- ह्यूमन राइट्स वॉच रिपोर्ट, ब्रोकन सिस्टम : डिसफंक्शन, एब्यूज एंड इम्प्यूनिटी इन द इंडियन जस्टिस सिस्टम, 2009, पृ०सं० 110
- शर्मा, कल्पना, मिसिंग हाफ द स्टोरी : जर्नलिज्म ऐज़ इफ जेंडर मैटर्स, जुबान, नई दिल्ली, 2010, पृ०सं० 59
- जैसिंग, इंदिरा, लीगल एंड एंड द रूल ऑफ लॉ इन इंडिया, लॉयर्स कलेक्टिव, 2015, पृ०सं० 33
- एग्नेस, फ्लाविया, लॉ एंड जेंडर इनइक्वैलिटी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2001, पृ०सं० 142
- इंडिया जस्टिस रिपोर्ट, 2022
- जैसिंग, इंदिरा, सेक्सुअल वॉयलेंस एंड द लॉ इन इंडिया, लॉयर्स कलेक्टिव, 2014, पृ०सं० 74
- सिन्हा, बी.एस., लीगल एंड : ह्यूमन राइट टू इक्वालिटी, डीप एंड डीप पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2005, पृ०सं० 98
- चक्रवर्ती, नंदिनी, जेंडर एंड जुडिशियल रीजनिंग, कैम्ब्रिज इंडिया, 2020, पृ०सं० 113
- मजूमदार, वीणा, विमेन, पॉलिटिक्स एंड चेंज, काली फॉर विमेन, नई दिल्ली, 1995, पृ०सं० 156



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 98-103

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREE D RESEARCH JOURNAL

Negotiating Indian and Western Cultural Influences in the Writings of Amitav Ghosh : A Postcolonial Perspective

Rakesh Kumar Singh

Research Scholar, Department of English, Jai Prakash University, Chapra.

Abstract :

Amitav Ghosh occupies a distinctive position in contemporary Indian English literature for his profound engagement with the cultural, historical, and political intersections between India and the West. His fiction transcends conventional nationalist narratives by presenting culture as a dynamic process of negotiation rather than a fixed inheritance. Through narratives of migration, colonialism, trade, memory, and diaspora, Ghosh interrogates the continuing effects of imperialism while highlighting the possibilities of cultural coexistence. This paper critically examines the interaction of Indian and Western cultural influences in Ghosh's selected works from a postcolonial perspective. It argues that Ghosh rejects binary oppositions such as East versus West or tradition versus modernity, instead constructing a dialogic cultural space characterized by hybridity, translation, and transnational mobility. Drawing upon postcolonial theories of Homi K. Bhabha, Edward Said, and Stuart Hall, the study demonstrates that Ghosh represents culture as an evolving process shaped by historical encounters, collective memory, and global interconnectedness. Rather than portraying Western influence solely as domination or Indian culture as an immutable tradition, Ghosh presents both as mutually transformative forces. His fiction ultimately advocates cultural plurality, ethical coexistence, and historical responsibility, thereby redefining postcolonial identity in an increasingly globalized world.

Keywords : Amitav Ghosh, Postcolonialism, Culture, Hybridity, Globalization, Identity, Indian English Literature

Introduction :

Culture constitutes one of the most significant frameworks through which literature represents

identity, history, and power. In postcolonial societies, cultural identity is rarely static or homogeneous; rather, it evolves through continuous encounters among indigenous traditions, colonial legacies, migration, and globalization. Consequently, postcolonial literature becomes an important medium for examining how individuals and communities negotiate multiple cultural affiliations while resisting rigid definitions of national or ethnic identity.

Among contemporary Indian novelists, Amitav Ghosh has emerged as one of the foremost literary voices exploring these complex cultural negotiations. His novels traverse geographical, historical, and linguistic boundaries, depicting the Indian Ocean world, colonial trade networks, migration, environmental crises, and diasporic experiences. Unlike writers who interpret colonial history through a simplistic framework of domination and resistance, Ghosh presents cultural interaction as an intricate process of dialogue, adaptation, conflict, and transformation. His narratives reveal that neither Indian nor Western cultures exist as isolated entities; instead, both evolve through centuries of exchange, displacement, and mutual influence.

The central concern of Ghosh's fiction is not merely the representation of colonial oppression but the exploration of how cultures continually redefine themselves through historical contact. Colonialism undoubtedly altered political institutions, educational systems, and economic structures, yet it also generated new forms of cultural consciousness. English became both an instrument of imperial authority and a medium through which Indian writers articulated resistance and reconstructed indigenous histories. Similarly, traditional Indian practices were neither entirely preserved nor wholly displaced but were constantly renegotiated within changing historical circumstances.

Postcolonial criticism provides an appropriate theoretical framework for understanding this cultural complexity. Edward Said's concept of Orientalism demonstrates how colonial discourse constructed the East as the cultural "Other," while Homi K. Bhabha's theories of hybridity and the "Third Space" emphasize the creative possibilities emerging from intercultural encounters. Stuart Hall further argues that cultural identity should be understood as a process of continuous becoming rather than an essential or fixed category. These theoretical perspectives illuminate Ghosh's literary vision, which consistently rejects absolute cultural binaries in favour of multiplicity, negotiation, and historical interconnectedness.

This paper argues that Amitav Ghosh transforms the traditional understanding of Indian and Western cultural relations by presenting them as mutually constitutive rather than mutually exclusive. Through his narratives of migration, memory, trade, and transnational mobility, he demonstrates that cultures are produced through historical movement rather than geographical isolation. Consequently, Ghosh's fiction contributes significantly to postcolonial debates concerning identity, globalization,

and cultural coexistence.

Indian and Western Cultural Paradigms :

The distinction between Indian and Western cultural paradigms has occupied a central position in postcolonial literary criticism. Western cultural thought, particularly since the Enlightenment, has generally emphasized rationality, secularism, scientific progress, and individual autonomy. Modernity within this tradition is frequently associated with technological advancement, institutional development, and the liberation of the individual from inherited social constraints. These principles profoundly influenced colonial governance and educational policies throughout the British Empire. In contrast, Indian cultural traditions have historically emphasized community, collective memory, kinship, spirituality, and ethical continuity. Rather than privileging the isolated individual, Indian social philosophy often understands identity as emerging through relationships among family, caste, religion, and regional belonging. However, such traditions are neither static nor universally harmonious. Internal hierarchies based on caste, gender, and social privilege have continually shaped Indian society, making tradition both a source of cultural resilience and a mechanism of exclusion.

Amitav Ghosh refuses to privilege one cultural framework over the other. Instead, his fiction demonstrates that both Indian and Western cultures contain progressive as well as oppressive elements. Western modernity introduces scientific inquiry, democratic ideals, and global communication, yet it simultaneously legitimizes imperial expansion and economic exploitation. Likewise, Indian traditions preserve valuable ethical and communal relationships but may also perpetuate rigid social hierarchies and patriarchal structures. This balanced representation distinguishes Ghosh from nationalist writers who idealize indigenous culture or postcolonial critics who interpret Western influence solely through colonial domination.

The interaction between these paradigms is particularly evident in Ghosh's representation of language. English appears not merely as the language of colonial authority but also as an instrument of intercultural dialogue. Ghosh incorporates vernacular expressions, indigenous idioms, and multilingual conversations into English prose, thereby transforming the colonial language into a vehicle for representing diverse cultural experiences. Such linguistic hybridity reflects the historical reality of India's cultural pluralism while challenging assumptions regarding the purity of national languages.

Memory also occupies a central position within Ghosh's cultural vision. Rather than treating memory as individual recollection, his novels portray it as a collective cultural practice connecting personal experiences with broader historical processes. Family histories, oral traditions, folklore, and archival records intersect throughout his fiction, illustrating that cultural identity emerges through shared remembrance rather than political boundaries alone. Consequently, history itself becomes a

contested narrative in which official records coexist with suppressed voices and marginalized experiences.

Furthermore, Ghosh rejects the conventional opposition between tradition and modernity. His characters frequently inhabit multiple cultural worlds simultaneously, demonstrating that tradition and modernity are not mutually exclusive but interconnected realities. Traditional customs often adapt to contemporary circumstances, while modern institutions continue to be shaped by inherited cultural values. Such representations reveal that cultural transformation proceeds through negotiation rather than replacement.

This understanding becomes particularly significant within globalization. Contemporary global networks intensify cultural interaction without eliminating cultural difference. Instead of producing uniformity, globalization often generates new forms of hybridity, migration, and transnational identity. Ghosh therefore portrays culture not as a fixed inheritance but as a dynamic process continually reconstructed through historical encounters, linguistic exchange, and collective memory.

Postcolonial Cultural Encounter and the Negotiation of Identity :

The encounter between India and the West occupies a central position in Amitav Ghosh's fiction because it extends beyond the historical event of colonialism to become an enduring cultural condition. Colonial rule transformed political institutions, educational systems, economic structures, and linguistic practices, yet its most profound legacy lay in reshaping cultural consciousness. Ghosh demonstrates that the colonial encounter produced not only domination and resistance but also new forms of cultural exchange, intellectual mobility, and historical awareness. His novels therefore reject simplistic binaries between colonizer and colonized by revealing the complex relationships that emerged through trade, migration, travel, and translation.

Unlike nationalist narratives that portray colonial history exclusively as oppression, Ghosh presents empire as a contradictory space where exploitation coexisted with cultural interaction. The colonial world generated unequal contact zones in which merchants, sailors, translators, administrators, and migrants encountered one another under asymmetrical conditions of power. These encounters produced hybrid identities that could neither be classified as entirely Indian nor wholly Western. Consequently, Ghosh's fiction foregrounds the everyday negotiations through which individuals adapted to changing cultural environments without abandoning their historical roots.

Language provides one of the clearest illustrations of this negotiation. English entered India as the language of administration and imperial authority, but postcolonial writers transformed it into a medium capable of expressing indigenous histories and local sensibilities. Ghosh deliberately blends English with Bengali, Hindi, Arabic, Bhojpur, and other regional expressions, thereby resisting

linguistic uniformity. His multilingual narrative style demonstrates that English in India has become a language of cultural adaptation rather than mere colonial inheritance. Such linguistic plurality also challenges the assumption that modern literature must conform to standardized Western forms.

The colonial encounter similarly transformed perceptions of education, law, and social mobility. Western education introduced new intellectual possibilities while simultaneously reinforcing colonial hierarchies. Ghosh neither romanticizes traditional Indian education nor unquestioningly celebrates Western modernity. Instead, he illustrates how colonial institutions became spaces where Indian subjects appropriated Western knowledge to challenge imperial authority itself. Education thus becomes a site of negotiation rather than assimilation.

Another significant aspect of Ghosh's representation of cultural encounter is his emphasis on movement. Colonialism was sustained through networks of maritime trade, migration, indentured labour, and commercial exchange connecting Asia, Europe, and Africa. Consequently, geographical mobility becomes inseparable from cultural transformation. Characters continually cross oceans and political boundaries, carrying languages, memories, religious beliefs, and social practices with them. Migration therefore becomes not merely physical displacement but also the creation of new cultural identities shaped by multiple historical experiences.

Conclusion :

Amitav Ghosh occupies a unique position in contemporary Indian English literature because his fiction redefines the relationship between Indian and Western cultures beyond the conventional binaries of East and West, colonizer and colonized, or tradition and modernity. His novels consistently demonstrate that cultural identity is neither static nor exclusive but evolves through historical encounters, migration, translation, memory, and negotiation. Rather than presenting colonialism solely as a narrative of domination, Ghosh explores the complex processes through which cultures interact, influence one another, and generate new forms of historical consciousness.

Works Cited :

- Bhabha, Homi K. *The Location of Culture*. Routledge, 1994.
- Ghosh, Amitav. *The Circle of Reason*. Penguin Books, 1986.
- ---. *The Shadow Lines*. Oxford University Press, 2002.
- ---. *The Glass Palace*. Penguin Books, 2000.
- ---. *Sea of Poppies*. Penguin Books, 2008.
- ---. *River of Smoke*. Penguin Books, 2011.
- ---. *Flood of Fire*. Penguin Books, 2015.

- ---. The Hungry Tide. HarperCollins, 2004.
- Hall, Stuart. "Cultural Identity and Diaspora." Identity: Community, Culture, Difference, edited by Jonathan Rutherford, Lawrence & Wishart, 1990, pp. 222–237.
- Said, Edward W. Orientalism. Penguin Books, 1978.

E-Mail- rs5010655@gmail.com

Mob-9852304126



आलोचना की परंपरा और स्त्री लेखन

रश्मि, शोधार्थी

डॉ० अनिल कुमार, सहायक प्रोफेसर,

हिंदी विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा।

समाज और साहित्य में शुरुआती दौर से यहीं विचारधारा है कि 'स्त्रियों वैचारिक रूप से निर्जन (शून्य) होती है। इसलिए उनका साहित्य में आलोचना निबंध व गद्य विधाओं में कोई हस्तक्षेप नहीं मिलता है।

पूरातन काल से ही स्त्री की स्थिति परिवर्तनशील रही है प्रारंभ में स्त्री केवल परिवार का ही केन्द्र बिन्दु रही है। स्त्री को लेकर भारतीय साहित्य लेखन, दर्शन व धर्मशास्त्रों के चिन्तन-मनन की परंपरा अल्प रही है। जहाँ स्त्री को केवल भोग्या, अबला, रमणी आदि नामों के साथ केवल हेय दृष्टि से चित्रित किया गया है। इसका प्रमुख कारण यह था कि प्राचीन काल से ही सभी टीकाकार व रचनाकार केवल पुरुष थे, साहित्य में स्त्री को पुरुषवादी दृष्टि से देखा जाता था। उस युग में मैत्रेयी, गार्गी और अनुसूया जैसी कुछ स्त्रियाँ शास्त्रार्थ में निपुण थी जिनका साहित्य में स्थान नाममात्र था। मध्यकालीन युग में भी मीरा के काव्य छोड़कर अन्य कवियों ने स्त्री को पुरुषवादी दृष्टि से देखा है।

दरअसल हिन्दी साहित्य में स्त्री अस्मिता का प्रथम स्वर मीरा के काव्य में सुनाई पड़ता है। मीराबाई के युग में सर्ग को आत्माभिव्यक्ति करने की आजादी नहीं थी वह केवल पुरुष की वैचारिक दृष्टि से स्त्री मानस को पढ़ने की लालसा व आवश्यकता मध्ययुग में कहाँ दिखाई नहीं दी। स्वतन्त्रता से पहले विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में स्त्री लेखन देखा जा सकता है। 1882 'सीमंतनी उपदेश' में 'अज्ञात हिंदू महिला' जो स्त्रियों की स्थिति को लेकर विचार कर चुकी है जिन्होंने अपने स्त्री लेखन से स्त्रियों की स्थिति को समाज में सुधारने का प्रयास किया था। 1920 से 1947 के अनेक शोध लेख जिनमें जगदीश चतुर्वेदी व सुधा सिंह अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'स्वाधीनता संग्राम हिन्दी प्रेस' और 'स्त्री का वैकल्पिक क्षेत्र' में उन्होंने कहा है कि 20 वीं शताब्दी में जिन आलोचनात्मक लेखों को दर्शाया गया है साहित्य में महाकाव्यात्मक पुसंवादी विधा हावी थी लेकिन इस महाकाव्यात्मक विधा को स्त्री लेखन अस्वीकार करता है इसी कारण स्त्री लेखन लघु रूपों में जैसे लघु कहानी, लघु निबंध में रेखांकित हुआ है।

'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल' ने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में 'आधुनिक काल' को गद्यकाल कहा है क्योंकि इस काल में अनेक गद्य विधाओं का आगमन हुआ है 'शुक्ल' जैसे प्रमुख एक आलोचक जिन्होंने हिन्दी आलोचना को एक नवीन दिशा दी थी 'शुक्ल' जैसे प्रसिद्ध आलोचक ने अपने आलोचनात्मक अध्ययन में 'बंग महिला' की 'दुलाई वाली' कहानी को अवश्य शामिल किया है। लेकिन अपने आलोचनात्मक इतिहास में स्त्री लेखिकाओं

के योगदान को रेखांकित नहीं किया है। भले ही साहित्यिक क्षेत्र में स्त्री लेखन की वैचारिक दृष्टि न हो लेकिन पत्र पत्रिकाओं व अनेक लघु लेखों में स्त्री लेखन आरंभ से ही बना रहा है।

छठे दशक में हिन्दी साहित्य में पुरुष लेखन ही था स्त्री लेखन को केवल मिथ्या दृष्टि से देखा जाता था फिर कुछ अंतराल के पश्चात् आठवें दशक में 'सीमोन द बउवार' स्त्री लेखन में परिलक्षित होती हैं।

“स्त्री की स्थिति अधीनता की है स्त्री सदियों से ठगी है यदि उसने कुछ स्वतन्त्रता हासिल की है तो बस उतनी ही जितनी पुरुष ने अपनी सुविधा के लिए उसे देनी चाही हैं।”¹

प्रश्न यह उठता है कि आलोचना के क्षेत्र में स्त्री को अनुपस्थिति क्यों रही है? क्यों स्त्री लेखन को साहित्य की दृष्टि से नहीं देखा जाता है? वो इसलिए क्योंकि स्त्री लेखन को स्त्री दृष्टि से लिखा जाना योग्य नहीं समझा जाता है। जिसके कारण शुरुवाती दौर में स्त्री लेखन की कुछ कृतियाँ उपेक्षित होती रही है।

जहाँ तक देखा जाए स्त्री रचनाकारों ने आलोचना व निबंध को अलग-अलग करके नहीं लिखा है। 'प्रो० निर्मला जैन' जो हिन्दी की पहली आलोचक मानी जाती है। जिन्होंने अपनी पुस्तक 'हिन्दी आलोचना का दूसरा पाठ', 'कथा समय के तीन हमसफर' जिसमें तीन महिलाओं (मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती) के आधार स्त्री प्रश्नों को उठाया है। जो पुरुष रचनाकारों से मौलिक दृष्टिगत है। इसी दौर में अन्य स्त्री, आलोचक भी सक्रिय रहे हैं। जैसे 'पदमावती शबनम' जिन्होंने मीरा के जीवन को साहित्यिक आधार बनाकर लिखा है। आजादी के बाद आलोचना के क्षेत्र में महादेवी वर्मा के निबंध 'श्रृंखला की कड़िया' से स्त्री लेखन का आरंभ माना जाता है। जिन्होंने पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की दिशा व दशा का प्रश्न उठाया है। 'डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी' ने 'हिन्दी साहित्य और संवेदना के विकास' में 'महादेवी वर्मा' के निबंधों को आलोचनात्मक रूप में लिखा है।

दरअसल स्त्री लेखन को हर दशक में स्त्री लेखिकाओं ने नवीन दृष्टि के साथ देखने का प्रयास किया है। उन्होंने 'नारी चेतना' के नवीन बिन्दुओं को रेखांकित किया है। हिन्दी साहित्य में सातवें-आठवें दशक की स्त्री कथाकारों में 'कृष्णा सोबती' से लेकर 'शिवानी' जैसी वरिष्ठ लेखिकाओं ने स्त्री दृष्टि का गहनता से अध्ययन किया है, ताकि स्त्री लेखन की एक नवीन छवि का हिन्दी साहित्य में आगमन हो सके।

“साहित्य के क्षेत्र में स्त्रियों का आना अत्यन्त आवश्यक है स्त्रियों के सहयोग के बिना मानव साहित्य सम्पूर्ण नहीं हो सकता है।”²

1975 ई० “अंतराष्ट्रीय महिला दिवस के पश्चात् स्त्री लेखन में ‘स्त्री’ व ‘दलित’ विमर्श” की आलोचना पीढ़ी सक्रिय रूप से विकसित हुई जिन्होंने न केवल परंपरागत आलोचना के बिन्दुओं पर प्रश्न लगाया। बल्कि आलोचना के क्षेत्र में नये सिद्धांतों की स्थापना भी होने लगी।

‘डॉ० ज्योति किरण’ के शब्दों में इस समाज में जब स्त्रियाँ अपनी समझ और काबलियत जाहिर करती है तब वह कुल्छलनी मानी जाती है जब वह खुद विवेक से काम करती है तब भी मर्यादाहीन समझी जाती हैं।”³ स्त्री लेखन को मजबूत बनाने में ‘अनामिका’, ‘अर्चना वर्मा’, ‘मृदुला गर्ग’, ‘प्रभा खेतान’, ‘रोहिणी अग्रवाल’, ‘मृणाल पाँडे’ आदि अनेक लेखिकाओं को वैचारिक रूप से महत्वपूर्ण योगदान है। ‘अनामिका’ ने ‘स्त्रीत्व के मान चित्र’ में उन्होंने स्त्रीवादी पक्ष को उजागर किया है। उन्होंने अपना स्त्री लेखन भारतीय संदर्भों के आधार पर रेखांकित किया है। अनामिका ने स्त्री जीवन के छोटे-बड़े अन्तर्विरोधों को चित्रित किया है। उनका स्त्री आन्दोलन प्रतिशोध से पीड़ित नहीं है और न ही स्त्रियाँ पुरुषों का स्थान पाना चाहती है। इसी संदर्भ में वे कहती है “स्त्री और पुरुष

की लड़ाई का व्याकरण सांमतो और आसामियों, पुंजीपतियों और मजदूरों, शोषक व शोषितों के बीच की जंग से अलग व्याकरण है स्त्री और पुरुष के बीच की लड़ाई दो वर्गों, दो नस्लों, दो जातियों के बीच की लड़ाइयों से तुलनीय नहीं! सम्पन्न और विपन्न, ऊँच और नीच, शासक और शोषित, गोरे और काले के बीच तो जंग छिड़ी है उनमें प्रतिपक्षियों के हित निकाय अलग-अलग है। लेकिन स्त्री और पुरुष के बीच की लड़ाई के हित-निकाय अलग-अलग नहीं होती, दोनों का हित-निकाय एक ही होता है।⁴

‘अनामिका’ की आलोचनात्मक अध्ययन का प्रमुख विषय ‘स्त्री भाषा’ है स्त्री लेखन को आलोचनात्मक दृष्टि के आधार पर सक्रिय रूप से संगठित करने वाली प्रमुख कथा लोचक ‘रोहिणी अग्रवाल’ जी है, उन्होंने स्त्री लेखन के विषय में अनेक आलोचनात्मक पुस्तकों को लिखा है स्त्री लेखन पर प्रकाशित 2011 में ‘स्त्री लेखन: स्वप्न व संकल्प’ है जो 13 अध्यायों में विभक्त है जिसमें स्त्री दृष्टि से स्त्री लेखन को दर्शाया गया है रोहिणी अग्रवाल का मानना है कि वास्तव में स्त्री लेखन स्त्री को मानव रूप में शिनाख्त करने की वैचारिक लड़ाई है। जहाँ वह पुसंवादी को पछाड़ कर अपनी अस्मिता को स्थापित करना चाहती हैं और पितृसत्तात्मक व्यवस्था को पूर्णनिरिक्षण कर मानवीय समानता में विकल्प को खोजना है। रोहिणी जी का स्त्री लेखन स्त्री की आशाओं व इच्छाओं का दर्पण है उन्होंने 50 वर्षों के बीच में लिखी गई कहानियों का तुलनात्मक अध्ययन किया है। रोहिणी अग्रवाल के कथालोचक में बारे में ‘अरुण होता’ ने कहा है कि “रोहिणी अग्रवाल की कथा लोचन में सिद्धान्तों की शुष्कता नहीं है वे अपने सृजनात्मक विवेक और व्यवहारिक उदाहरणों से आलोचना को सवांदधर्मी बनाती है।”⁵

स्त्री लेखन पुसंवादी ताकत से अपनी हीन स्थिति को लेकर कुठित हिन्दी साहित्य में इतिहास में ‘रसीदा जहाँ’ (दिल्ली की सैर), ‘अज्ञात हिन्दू महिला’ (सीमंतनी उपदेश) ‘रुकैया सखावत हुसैन’ की कहानी (सुल्ताना का सपना) व इसके अतिरिक्त अन्य लेखिकाओं में स्त्री लेखन को रेखांकित किया है।

‘रोहिणी अग्रवाल’ के अनुसार – स्त्री लेखन का मूलाधार जो अपनी मूल प्रस्थापना और अंतिम लक्ष्य में पितृसत्तात्मक व्यवस्था का शिनाख्त कर साहित्य और समाज शास्त्र दोनों जगह का स्थान बनाता है।⁶

इसके अतिरिक्त विमर्शवादी आलोचना में ‘प्रभा खेतान’ की प्रमुख पुस्तक ‘उपनिवेश में स्त्री’ जो स्त्री मुक्ति कामना की दस वार्ता, है ये वार्ता, कारखानों में कामकाजी स्त्री, प्रेम की कलह में उलझी जिदंगी, मानवीय अस्मिता की खोज में जुटी स्त्री की यातनाओं व कुण्ठा से संबंधित है कि किस तरह से स्त्री की आजादी के आन्दोलन को अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाओं का सामना करना पड़ता है।

“हिंदू परंपरावादियों की नजर में नारीवाद, अनैतिक आचरण का पर्याय है। जमीन से जुड़े आन्दोलन कर्ताओं के अनुसार विशेषकर पूर्वी युरोप के वामपंथियों के अनुसार नारीवाद मात्र के बुर्जुआ का विचार है।

स्त्री अधिकारों की प्रबलता समर्थकों के एक हिस्से में भी नारीवाद को खारिज कर दिया है।”⁷

इस तरह हम देखे तो पुरुष का दृष्टिकोण स्त्री के प्रति शायद ही कभी सद्भावना व उदारता का भाव होगा क्योंकि तमाम सद्भावना के बाद साहित्य क्षेत्र के निर्णयों का अधिकार मूल रूप से पुरुषों के पास है और शोध कर्ता और आलोचक ने जितनी गंभीरता व लगन से पुरुष लेखन किया गया है उतना गंभीर अध्ययन स्त्री लेखन के लिए कदापि नहीं करते। क्योंकि उनकी नजर में महिला लेखन जड़ नीरस, भावुक व कुण्ठा भरा है।

इस संदर्भ में ‘नासिरा शर्मा’ कहती है कि हो सकता है साहित्य को महिला पुरुष लेखन में बाँटना बहुतों

को पसन्द भी आता हो परन्तु जब इन महिलाओं के लेखन की बात उठती है तो महिलाओं में सबसे आगे कहलाना भी उन्हें बुरा नहीं लगता और न ही महिलाओं के लेखन पर होने वाले सेमिनारों की बागडोर संभालने मुख्य अतिथि बनने में उन्हें झिझक महसूस होती है।⁸ 19वीं सदी में हुए जिनमें स्त्री लेखक के सुधार पर स्त्रियों की दशा में सुधार लाने का प्रयास किया गया था।

फिर आद्यंत काल में बीसवीं सदी में स्त्रियों के मुद्दों पर अनेक नवीन पत्र-पत्रिकाएँ मुखर होने लगी। अगर हम हिन्दी साहित्य के लेखन को वास्तविक वैचारिकता का पक्ष देखे तो पुरुष रचनाकारों का स्वरूप मौजूद है क्योंकि शिक्षा से लेकर हर सामाजिक राजनीतिक कार्यों में मर्दवादी मानसिकता शासन कर रही है।

क्या अब भी साहित्य में स्त्री लेखन केवल काल्पनिक रूप में निर्मित है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में षड्यंत्रों के प्रति महादेवी वर्माश का रोष 'हिंदू स्त्री का पत्नीत्व' में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पितृसत्ता आरंभ से ही समाज देश परिवार सभी जगह पुरुषों का ही आधिपत्य है। वर्ग, जाति, समाज तथा सम्प्रदाय हर क्षेत्र में पुरुषों के पास एक अनमोल चीज है। वह है स्वतन्त्रता। इसके अलावा यदि हम स्त्री की संरचना देखे तो उसकी देश से लेकर शिक्षा व इच्छा तक सभी की व्यवस्था पुरुष दृष्टि के आधार पर तय की जाती है। वर्तमान में भी स्त्री को स्त्री के रूप में तथा पुरुष को पुरुष के रूप में विकसित नहीं कर पाई है। इस संदर्भ में 'सीमोन द बउवार' ने 'स्त्री उपेक्षिता' में लिखा है कि 'मातृसत्तात्मक व्यवस्था पितृसत्तात्मक समाज में संक्रमण में हम फिर भी स्त्री को कुछ सुविधापूर्ण स्थिति में पाते हैं।'⁹

स्त्री लेखन की मूल समस्या यह है कि स्त्री को पुरुष की विचारधारा से मुक्त नहीं किया गया है। पुसंवादी दृष्टि से उसे हमेशा शून्यश के रूप में देखा गया है और इसलिए स्त्री लेखन जब स्त्री दृष्टि से लिखा जाता है तो उसे शंक की दृष्टि से देखा जाता है। चाहे वह कितना भी मौलिक क्यों न हो।

प्रसिद्ध लेखिका 'हेलिनी सिकसाउस' ने लिखा है कि स्त्री के विषय की कोई सीमा नहीं होती। जिस तरह स्त्री के शरीर की अनंत संभावनाएँ हैं। वैसे ही स्त्री विषय और विमर्श की कोई सीमा नहीं है वह अनंत रूपा है, उसके पास अनंत शक्ति है अनंत संभावनाएँ हैं।¹⁰ स्त्री लेखन चाहे किसी विषय पर हो या किसी समस्या को लेकर वह साहित्य का विशेष अंग है। स्त्री लेखिकाएँ जिन विषयों पर चर्चा करती रही हैं वे सब साहित्य की कोटी में ही आते हैं। कहा भी गया है कि "पुरुष को शिक्षित करो तो एक जन शिक्षित होता है। इसे हम इस तरह भी ले सकते हैं कि स्त्री का सही तरह से मुक्ति दो, तो पूरा वंश मुक्त होता है।"¹¹

इसलिए वर्तमान में यह आवश्यक हो गया है कि पुरुष आलोचना के स्थापित आदर्शों के संदर्भ में स्त्री प्रश्न उठाए। स्त्री आलोचना की एक अलग-अलग भूमिका तैयार करना आवश्यक है, ताकि स्त्री लेखन की एक स्वच्छ परंपरा का निर्माण हो। स्त्री लेखन उसकी भिन्नता व वैचारिकता का लेखन है स्त्री लेखन में कई तरह की संभावनाएँ व विकल्प होते हैं। स्त्री लेखन के आधार पर स्त्री समाज में अपना स्थान खोजने का प्रयास कर सकती है।

दरअसल वर्तमान में हमें स्त्री लेखन को एक मौलिक दृष्टि के साथ समझना होगा। क्योंकि स्त्री लेखन का उद्देश्य स्त्री को विभिन्न भूमिकाओं से मानव समाज को परिचित कराना है। जिससे आलोचनात्मक दृष्टि से स्त्री लेखन को गंभीर रूप से लिया जा सके। इन्हीं नये आयामों से समाज की परंपरा व रूढ़ियों को तोड़ कर स्त्री को मानवीय रूप में समझना ही स्त्री लेखन है।

संदर्भ ग्रन्थ :-

1. आजकल : मार्च 2013, पृष्ठ 24
2. डॉ० आशा गुप्ता, नवम् दशक की हिन्दी महिला कथाकारों की नारी चेतना, कान्त पब्लिकेशन्स 124 चन्द्रलोक एम्ब्वेलव दिल्ली, पृ० 25
3. पंचशील, शोध समीक्षा, पृ० 61
4. स्त्रीत्व का मानचित्र, अनामिका, पृ० 10
5. रोहिणी अग्रवाल, स्त्री लेखन स्वप्न व संकल्प, राजकमल प्रकाशन, पृ० 6
6. रोहिणी अग्रवाल, स्त्री लेखन स्वप्न व संकल्प, राजकमल प्रकाशन, पृ० 44
7. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, पृ० 10
8. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, पृ० 44
9. लिंगभेद, पितृसत्ता और स्त्रीवाद, जगदीश चतुर्वेदी, सुधा सिंह, एकैडमिक पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ० 64
10. लिंगभेद, पितृसत्ता और स्त्रीवाद, जगदीश चतुर्वेदी, सुधा सिंह एकैडमिक पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ० 85
11. मृणाल पांडे, देह की राजनीतिक से देश की राजनीतिक तक, राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ० 21

ई मेल – rashmirashmi9050@gmail.com



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 109-117

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

उत्तराखण्ड के समाज में जाति व्यवस्था का वर्तमान परिदृश्य : एक ऐतिहासिक अध्ययन

दीपक कुमार

शोध छात्र, इतिहास विभाग,

डी0 एस0 बी0 परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल।

शोध सारांश :-

भारतीय समाज की तर्ज पर ही हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड में भी वैदिक सभ्यता, संस्कृति से प्रचलित मनुवादी विचारधारा से जन्मी वर्ण-व्यवस्था एवं वर्ण-व्यवस्था से जन्मी जाति-व्यवस्था विद्यमान थी। भारतीय समाज वर्ण-व्यवस्था का आधार व्यवसाय था। जबकि जाति-व्यवस्था का आधार जन्म से माना जाने लगा तथा जाति व्यवस्था, के आधार पर ही समाज में शूद्र वर्ण के लोगों के साथ भेदभाव, छुआछूत, अस्पृश्यता, असमानता व शोषण जैसी घटनाओं को बढ़ावा मिलने लगा परिणामस्वरूप समाज में उनकी स्थिति इतनी दयनीय हो गयी कि सम्पूर्ण शूद्र वर्ण को दलित समाज के नाम से जाना जाने लगा। जबकि उत्तराखण्ड में शूद्र वर्ण जिसे विभिन्न इतिहासकारों द्वारा यहाँ का मूल निवासी माना गया हैं। इस मूल निवासी जाति को धीरे-धीरे समाज में एक ऐसे पायदान पर लाकर खड़ा कर दिया कि उन्हें विभिन्न भेदभावों के साथ-साथ अनेक अपमानजनक नामों से जाना जाता था। किंतु आधुनिक समय में इन्हें शिल्पकार दिया गया। प्राचीन काल से लगभग 18वीं सदी तक दलित समाज के साथ होने वाले शोषण व अत्याचार के विरुद्ध कोई ध्यान नहीं दिया गया। सर्वप्रथम 19वीं सदी में भारतीय पुनर्जागरण, ब्रिटिश शासन की सुधारवादी नीति, शिक्षा व्यवस्था के प्रचार-प्रसार व अनेक दलित समाज सुधारकों के अथक प्रयासों के फलस्वरूप दलितों में चेतना व जागृति के साथ-साथ उनके साथ होने वाले शोषण व अत्याचार के विरुद्ध भी अवाज उठने लगी।

इन्हीं समाज सुधारकों से प्रेरित होकर उत्तराखण्ड में भी शिल्पकारों की चेतना व जागृति को लेकर अनेक ऐसे समाज सुधारक हुए जिन्होंने शिल्पकारों के साथ होने वाले अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठानी प्रारम्भ की। अन्ततः प्रमुख दलित उद्धारक डॉ० भीम राव अम्बेडकर के संघर्षों के फलस्वरूप दलित समाज को अनेक संवैधानिक अधिकार प्राप्त हुए तथा उन्हें समाज की मुख्य धारा के साथ जोड़ने का प्रयास किया गया। निश्चित तौर पर इन संवैधानिक अधिकारों के परिणामस्वरूप ही दलित समाज के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व धार्मिक क्षेत्र में सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं। परन्तु इतने संवैधानिक अधिकार, नियम कानून व दण्डात्मक प्रक्रिया होने के बावजूद भी जहाँ सम्पूर्ण विश्व तक मानवाधिकारों के संरक्षण की बात करता है, ठीक

वही हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड में आज भी आये दिन दलित समाज के विरुद्ध कोई न कोई अमानवीय घटना देखने को मिलती रहती है। जिससे ज्ञात होता है कि भारतीय संविधान के लागू होने से अस्पृश्यता व छुआछूत का तो अंत हुआ। परन्तु जाति-प्रथा उत्तराखण्ड के समाज में आज भी आधुनिक परिवर्तनों के बाद भी निरंतरता बनाए हुए है।

शब्द कुंजी :- भारतीय समाज, उत्तराखण्ड का समाज, वर्ण-व्यवस्था, जाति-प्रथा, संवैधानिक सुधार, जाति प्रथा का वर्तमान स्वरूप।

प्रस्तावना :-

भारत अपनी सामाजिक व सांस्कृतिक दृष्टिकोण से विश्व की महान संस्कृतियों में से एक है। “वसुधैव कुटुम्बकम्”¹ और “सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः”² जैसे आदर्श इस संस्कृति की प्रमुख विशेषता रही है। परन्तु फिर भी भारतीय समाज जन्मजात असमानता पर आधारित अनेक जातियों व उपजातियों में बांटा हुआ है। जिसमें जाति-प्रथा एक रोग की तरह है। जो निरंतर हमारे समाज को बीमार कर रही है। जिसकी शुरुवात भारतीय इतिहास में प्राचीन काल से ही वर्ण-व्यवस्था के नाम हुई। वर्ण-व्यवस्था का उल्लेख वैदिक ग्रंथ ऋग्वेद के दसवें मण्डल में किया गया है। वहीं से भारतीय समाज का विभाजन चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र) देखने को मिलता है। इसी वर्ण-व्यवस्था का स्वरूप धीरे-धीरे बदलकर समाज में जाति प्रथा के रूप में परिवर्तित हो गया। जिसने हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड के समाज को भी प्रभावित किया। उत्तराखण्ड के प्राचीन इतिहास का अध्ययन करने के उपरांत ज्ञात होता है कि उत्तराखण्ड व हिमाचल क्षेत्र में प्राचीन काल में विभिन्न जातिय समूहों और प्रजातियों का कब्जा था। यह प्रक्रिया लम्बे समय तक निरंतर जारी रही कोल, किरात, तणंग, खस, शक, नाग, कुण्ड, यौद्धेय, आदि यहां के प्राचीन निवासी हैं। उस समय समाज में किसी भी प्रकार के भेदभाव या छुआछूत के बारे में स्पष्ट जानकारी का अभाव है। परन्तु कहा जाता है कि कोलों को किरातों ने हराया, किरातों को खशों ने और खशों को वैदिक आर्यों ने हराया। इस प्रकार इन जातियों के आपसी संघर्ष व बाह्य शक्तियों आगमन के फलस्वरूप यहाँ की मूल निवासी जाति कोलों को जिनके वंशजों को आधुनिक समय में शिल्पकार नाम से संबोधित किया जाता है। उन्हें पराजित कर अपना दास बना लिया। वहीं से उत्तराखण्ड के समाज में भेदभाव व छुआछूत जैसी विचारधारा को बढ़ावा मिलने लगा। फलस्वरूप उत्तराखण्ड के समाज में शूद्रों की स्थिति में निरंतर नकारात्मक प्रभाव देखने को मिलते हैं। इस वर्ग के लोगों को प्राचीन काल से ही पूरे भारत में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक व धार्मिक क्षेत्र में सभी अधिकारों से वंचित रखा गया। जिसके परिणामस्वरूप शूद्र वर्ग के लोग आज भी पिछड़ी व दयनीय स्थिति में जीवन-यापन करते आ रहे हैं। कालांतर में यही जाति व्यवस्था के मापदण्ड इतने कठोर हो गये कि दलित समाज के लोगों के साथ पशुतुल्य व्यवहार किया जाने लगा। लगभग 18वीं शताब्दी तक दलितों की सामाजिक स्थिति में सुधार के क्षेत्र में कोई गम्भीर प्रयास नहीं किये गये।

सर्वप्रथम 19वीं शताब्दी में कुछ महान समाज सुधारक व क्रांतिकारी विचारधारा रखने वाले महात्मा ज्योतिबा फूले, सावित्रीबाई फूले व डॉ० भीम राव अम्बेडकर आदि ने दलित समाज के अधिकारों व आत्मसम्मान के लिए संघर्ष करना प्रारम्भ किया। इसी समय पहाड़ी क्षेत्रों में भी मुंशी हरिप्रसाद टुम्टा और खुशी राम आर्य जैसे समाज सुधारकों ने उत्तराखण्ड में शिल्पकार सुधारवादी नायकों के रूप में कमान संभाली। परिणामस्वरूप भारत

के साथ-साथ उत्तराखण्ड में भी धीरे-धीरे दलित समाज के प्रति होने वाले भेदभाव-छुआछूत अस्पश्यता व अमानवीय व्यवहार का विरोध होने लगा। उनके अधिकारों के लिए आवाज उठने लगी तथा दलित समाज में चेतना व जागृति का संचार व विकास होने लगा। अतः भारतीय स्वतंत्रता के बाद डॉ० भीम राव अम्बेडकर ने दलित समाज को अनेक संवैधानिक अधिकार दिलाने में सफलता प्राप्त की। निश्चित तौर पर इन संवैधानिक अधिकारों के कारण ही दलित समाज की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व धार्मिक क्षेत्र में सुधार देखने को मिला। परन्तु वर्तमान में आज भी हमारे समाज में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष तौर पर जाति-व्यवस्था का एक ऐसा स्वरूप देखने को मिलता है, जिसने निश्चित तौर पर भारत की एकता व अखण्डता को प्रभावित किया है तथा जो आज के शैक्षणिक समाज के लिए मानवीय परिदृश्य के आधार पर एक कलंक है। यह सोचनीय विषय है।

वर्ण व्यवस्था एवं जाति व्यवस्था :-

प्राचीन भारतीय इतिहास में वैदिक सभ्यता संस्कृति के अंतर्गत एक मनुवादी प्रवृत्ति का जन्म हुआ। जिसका उल्लेख ऋग्वेद के दसवें मंडल पुरुष सूक्त में किया गया है। कि एक मनु नामक आदि पुरुष के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जंघा वैश्य एवं पैर से शूद्र का जन्म हुआ।³ यहीं से भारतीय समाज में विभाजन की एक परंपरा प्रारम्भ हुई। जिसका मूल आधार कार्य आधारित सामाजिक विभाजन था। जिसमें प्रत्येक वर्ण का अपना पृथक् कार्य निर्धारित था। इसी वर्ण विभाजन को समाज में वर्ण-व्यवस्था कहा गया। ऋग्वेद के मंत्र में लिखा है कि मैं कवि हूँ मेरे पिता वैध है, और माता पत्थर पर अनाज पिसने वाली है,⁴ अर्थात् इससे स्पष्ट होता है कि उस समय समाज का विभाजन कर्म के अनुसार था ना कि पैतृक। ऋग्वैदिक काल में एक ही परिवार के लोग ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र हो सकते थे। उत्तरवैदिक काल में वर्णों में क्रमशः कठोरता आने लगी और अब व्यवसाय परिवर्तन कठिन होने लगा। शतपथ ब्राह्मण में चारों वर्णों की अंत्येष्टि के लिए भी चार प्रकार के टीलों का उल्लेख मिलता है⁵ अर्थात् इतिहास के उत्तरवैदिक काल से ही वर्ण व्यवस्था कहीं ना कहीं जाति व्यवस्था में परिवर्तित होती दिखाई देती है। भारत में जाति प्रथा की उत्पत्ति रिजले के अनुसार प्रजातीय भिन्नताओं के कारण हुई। नेसफील्ड व इवेट्सन ने पेशे को इसका कारण बताया। अबे डुबॉयस ने ब्राह्मणों की भूमिका को इसका कारण बताया।⁶

समाज में जाति व्यवस्था का मूल कारण भले ही कुछ भी रहा हो परन्तु इसी जाति व्यवस्था के आधार पर उत्तराखण्ड का समाज भी चार भागों में विभाजित था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र। मान्यता है कि जाति व्यवस्था का यह स्वरूप उत्तराखण्ड के प्राचीन इतिहास में प्रचलन में नहीं था। क्योंकि प्रारम्भ में यहाँ विभिन्न पुरा प्रजातियों का निवास था। जिसके संदर्भ इतिहासकारों मानना है। कि प्रारम्भ में यहां यक्ष, गंधर्व, किन्नर, नाग, हूण, कोल, किरात कुणिंद, तंगण खंश, शक, आर्य, कत्यूरी तथा चंद आदि समय-समय पर विभिन्न रास्तों से आएँ और अपनी-अपनी शासन व्यवस्था स्थापित की। समयानुसार इनकी सत्ता में निरंतर परिवर्तन होता गया।⁷ उत्तराखण्ड में निवास करने वाली प्राचीन जातियों एवं वंशजों के संबंध में श्री बद्रीदत्त पांडे ने लिखा है। दस्यु, किरात, नाग, खस, शक, हूण, एवं यवन आदि जातियां यहां पूर्वकाल से रहती आई है। उत्तराखण्ड हिमालयी क्षेत्र में ऐतिहासिक रूप से कोल-किरात एवं खस जातियों का अस्तित्व रहा। जिनमें से सर्वप्रथम कोल जाति का उल्लेख मिलता है। कोलों के उपरांत यहां किरातों ने प्रवेश किया। किरातों के उपरांत खस जाति के लोगों का प्रभाव यहां दिखाई देता है। खस जाति के उपरांत उत्तराखण्ड की शासन व्यवस्था में जिस शक्तिशाली जाति का

आधिपत्य ज्ञात होता है। उसे आर्य जाति कहा गया।⁹ मान्यता है, कि आर्य जाति के लोगों ने ही उत्तराखण्ड को सामाजिक एवं साम्प्रदायिक दृष्टि से काफी प्रभावित किया। दसवीं शताब्दी के उपरांत मालवा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश के मैदानी भाग आदि क्षेत्रों के आप्रवासियों ने खसों को पराजित कर राजनीतिक सत्ता प्राप्त की। ये अप्रवासी जातियां कर्मकाण्डीय दृष्टि से सामाजिक व सांस्कृतिक ताने बाने में सर्वोच्च हो गईं। इन्हें दुलजात कहा गया। यहीं से उत्तराखण्ड के समाज में सामाजिक विभाजन का अस्तित्व प्रारम्भ हुआ। जो आर्य संस्कृति की एक देन थी। क्योंकि आर्य संस्कृति के समय “यहाँ के समाज को तीन स्तरों में बाटा गया। दुलजात, खस एवं डूम (वर्तमान में प्रतिबंधित शब्द)। कर्मकाण्डीय दृष्टि से दुलजात एवं खस, जिनमें कि ब्राह्मण एवं क्षत्रिय सम्मिलित थे, जिन्हें पवित्र माना गया। जबकि डूमों (वर्तमान में प्रतिबंधित शब्द) को कर्मकाण्डीय दृष्टि से अपवित्र माना गया”।⁹ इस प्रकार आर्यों के उत्तराखण्ड आगमन के साथ ही आर्य एवं अनार्यों के बीच सामाजिक व सांस्कृतिक अन्तः क्रिया होने लगी। फलस्वरूप समाज में प्रचलित वर्ण व्यवस्था के स्वरूप में जटिलताओं को बढ़ावा मिलने लगा। समाज के चतुर्थ एवं अंतिम वर्ग अस्वर्ण जिन्हे शूद्र नाम से भी जाना जाता है, के अंतर्गत उत्तराखण्ड के समाज में मुख्यतः शिल्पकार समुदाय को सम्मिलित किया जाता है। जिसके सम्बंध में मि० आकेले ई० एस० का कहना है “ये लोग यहां के मूल निवासियों के प्रतिनिधि हैं तथा यहां पर खशों तथा अप्रवासी आर्यों के आने से बहुत पहले से यहां पर रहते आ रहे हैं।”¹⁰ ए० सी० टर्नर ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि वर्तमान शिल्पकार उत्तराखण्ड के मूल वंशज हैं जो हिमालय क्षेत्र में बाद में बाहर से आने वाले विजेताओं से पहले वहां रहते थे।¹¹ कत्यूरी शासकों के अभिलेखों से भी हमें उत्तराखण्ड के समाज का चार वर्गों में विभाजित होने का उल्लेख मिलता है, वह है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, खस व चांडाल।¹² कुमाऊँ में शासन करने वाले चंद वंश के शासकों द्वारा सुव्यवस्थित सामाजिक संचालन के आधार पर काली कुमाऊँ की प्रजा को आठ वर्गों में विभाजित किया था। जिसमें से पौरी पंद्रह विश्वा वर्ग के अंतर्गत शूद्र (हरिजन) प्रजा को रखा गया था।¹³ इस समय शूद्रों को कोटल या प्रहरी कहा जाता था। इनका कार्य गाँव में प्रहरी का कार्य या चौकीदारी करना होता था।

पँवार शासकों के समय शूद्र वर्ण समाज का एक प्रमुख भाग था। उस समय शिल्प तथा उद्योगों से संबंधित जो भी कार्य होता था। वह शिल्पकार समुदाय द्वारा किया जाता था।¹⁴ उत्तराखण्ड के राजनैतिक इतिहास में भले ही समय-समय पर उथल पुथल होती रही थी। क्योंकि क्रमशः कुमाऊँ व गढ़वाल में चन्द्र व पँवार राजवंशों के बाद गोरखाओं का शासन रहा। परन्तु जाति व्यवस्था का स्वरूप गोरखा शासनकाल में भी यथावत ही रहा। गोरखाओं के बाद हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड में ब्रिटिश सत्ता की स्थापना हुई। अंग्रेजी शासन के समय कुमाऊँ में शिल्पकार वर्ग के लोग संसाधन विहीन होने के कारण उच्च वर्ग के लोगों के वहाँ खेतों में काम किया करते थे। जिसे हलिया, गुलाम या दास भी कहा जाता था। “उच्च जाति के लोग जैसे ब्राह्मण व अन्य भू-स्वामी जो अपनी जाति बंधन से या फिर अन्य कारणों से स्वयं हल नहीं चलाया करते थे। उनके द्वारा इन हलियों से खेतों में काम कराया जाता था। जो मुख्यतः शिल्पकार जाति के लोग हुआ करते थे। इस कार्य के लिए ये इनके भोजन और निवात का प्रबंध स्वयं किया करते थे।”¹⁵ हलियों या शिल्पकारों के लिए उस समय बड़े ही अपमानित शब्दों का प्रयोग किया जाता था। जो वर्तमान समय में प्रतिबंधित है। इस प्रकार जाति प्रथा के कड़े आयाम छुआछूत, भेदभाव, असमानता, अस्पृश्यता, शोषण, अत्याचार व अमानवीय व्यवहार के फलस्वरूप 18वीं शताब्दी तक दलितों की स्थिति समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अत्यधिक दयनीय थी। यह ऐसा जहर था, जिसने

उत्तराखण्ड समाज को कमजोर व खोखला कर दिया था।

जाति व्यवस्था सम्बंधी सुधार :-

परिवर्तन प्रकृति का नियम है इसिलिए प्रकृति हो या फिर समाज या संस्कृति, इनमें से कुछ भी कभी शाश्वत या स्थायी नहीं हो सकते। सभी परिवर्तनशील हैं जिनमें समय के साथ परिवर्तन होता रहता है। ठीक उसी प्रकार 19वीं सदी में पहली बार भारतीय समाज में सदियों से चली आ रही जाति प्रथा तथा इस कुप्रथा के शिकार हुए दलित समाज के शोषण व अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठनें लगी जिसमें भारतीय पुनर्जागरण आंदोलन, पाश्चात्य शिक्षा व्यवस्था के प्रभाव एवं ब्रिटिश सरकार द्वारा सामाजिक समानता संबंधी सिद्धांतों का बढ़ावा देना इन सभी कारणों से दलित समाज में भी एक नई चेतना व जागृति का जन्म हुआ। जिसमें अनेक समाज सुधारकों ज्योतिबा फूले, नारायण गुरु, शाहजी गायकवाड़ व मुख्यतः डॉ भीम राव अम्बेडकर आदि ने दलितों को समाज में समानता व समरस्ता का अधिकार दिलाने तथा विकास के क्रम में समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए भारतीय स्वतंत्रता के उपरांत अनेक संवैधानिक अधिकारों का प्रावधान किया गया। दलित समाज के इन्हीं सामाजिक उद्धारकों से प्रेरित होकर उत्तराखण्ड में भी मुख्यतः मुंशी हरिप्रसाद टम्टा व खुशी राम आर्य जैसे महानुभावों ने शिल्पकारों के साथ होने वाले अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाकर उनके अधिकारों के लिए संघर्ष करना प्रारम्भ किया। उत्तराखण्ड में निम्न जातिय वर्ग को जाग्रत करने व सामाजिक सुधारों में इनकी अग्रणी भूमिका रही।

मुंशी हरि प्रसाद टम्टा के नेतृत्व में सन् 1905 का वर्ष उत्तराखण्ड के इतिहास में आगामी आन्दोलनों के लिए एक मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इस वर्ष अल्मोड़ा में दलित समाज के एक छोटे से वर्ग टम्टाओं की “टम्टा सुधार सभा” का गठन हुआ। टम्टा सुधार सभा ने अपने प्रारंभिक अधिवेशन में अपनी जातिगत समस्याओं और शिक्षा पर बल दिया।¹⁶ 1905 में स्थापित की गई “टम्टा सुधार समिति” का नाम 1914 में “शिल्पकार सभा” कर दिया गया। सन् 1925 का साल औपनिवेशिक उत्तराखण्ड के इतिहास में शिल्पकार समाज की स्थिति में परिवर्तन का ऐतिहासिक वर्ष साबित हुआ। क्योंकि इसी वर्ष हरिप्रसाद टम्टा द्वारा शिल्पकार समाज की विभिन्न मांगों को लेकर 24 से 25 सितम्बर 1925 को डोलीडान्डा में एक विशाल शिल्पकार सम्मेलन का आयोजन किया गया। 1926 ई0 में ब्रिटिश सरकार द्वारा शोषित वर्गों के लिये प्रयोग किये जाने वाले अपमानित अर्थात् अमान्य शब्दों के स्थान पर “शिल्पकार” शब्द का प्रयोग किए जाने की मान्यता प्रदान करवाई। उस समय तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध यह बहुत बड़ा सुधार था।¹⁷ शिल्पकार समाज में जागरुकता बढ़ाने व अधिकारों के लिए संघर्ष की भावना को और प्रज्वलित करने के उद्देश्य से 1 जून सन् 1934 को “समता” नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इन्हीं के द्वारा शिल्पकारों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार को बढ़ाने के लिए कुमाऊँ शिल्पकार सभा के माध्यम से 150 प्राइमरी स्कूलों की स्थापना करवाई गयी तथा उनकी एक प्रमुख उपलब्धि यह भी थी कि उन्होंने शिल्पकार कारीगरों की सेना में भर्ती करवाई। इसके अतिरिक्त भी उनके द्वारा शिल्पकार समाज के सुधार के क्षेत्र में अनेक कार्य किये गये।¹⁸

उत्तराखण्ड राज्य में शिल्पकारों के उत्थान में खुशी राम आर्य का भी महत्वपूर्ण योगदान है। सर्वप्रथम उनका सम्पर्क आर्य समाज प्रचारक राम प्रसाद जी से हुआ। उन्हीं से प्रेरित होकर खुशीराम जी के मन में एक संगठन बनाने का विचार आया तथा सन् 1908 की एक रात्रि को 10 लोगों की एक समिति बनाई गई।¹⁹ जिसका

मुख्य उद्देश्य सम्पूर्ण कुमाऊँ का भ्रमण कर शिल्पकार जाति के लोगों को जाग्रत करना था। 1911 में कुमाऊँ के शिल्पकार जब हिन्दू धर्म, त्याग कर इसाई धर्म अपनाने के लिए मन बना चुके थे। इस स्थिति से क्षुब्ध दौलत राम व उनके पुत्र खुशी राम ने हिन्दू धर्म को उबारने के लिए पंजाब केसरी लाला लाजपत राय को आमंत्रित किया।²⁰ 17 अगस्त 1913 को श्रावणी पूर्णिमा के दिन ग्राम सुनकिया, जिला नैनीताल में सेठ दौलतराम जी के घर में पंजाब केसरी लाला लाजपत राय के नेतृत्व में “शुद्धि आन्दोलन के अन्तर्गत सामूहिक “शुद्धि संस्कार” समारोह का आयोजन किया। खुशी राम जी द्वारा 16 अगस्त सन् 1913 को एक स्वयं सेवी “शिल्पकार सुधारणी सभा” की स्थापना की गई। 24 फरवरी 1920 ई० को ग्राम सुन्दरखाल (मुक्तेश्वर) नैनीताल में शुद्धि आन्दोलन के अन्तर्गत सामूहिक जनेऊ संस्कार का आयोजन किया गया।²¹ 1932-33 में चम्पावत से टनकपुर तक का क्षेत्र काली कुमाऊँ में भी शुद्धि आंदोलन का विगुल फूँका।²² इस प्रकार इन दोनों समाज सुधारकों ने सामाजिक बुराइयों यथा असमानता, अस्पृश्यता, शोषण, जातिवाद, अत्याचार, सामाजिक एवं धार्मिक निर्योग्यताओं की आलोचना की एवं इन्हें मिटाने के यथासंभव प्रयास भी किये। परन्तु दलित समाज के उत्थान के लिए सम्पूर्ण भारत में डॉ भीम राव अम्बेडकर ही एक ऐसे व्यक्ति थे। जिन्होंने एक मसीहा की तरह कार्य किया। संविधान सभा में प्रारूप समिति के अध्ययन के रूप में कार्य करते हुए संविधान निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जिसके अनेक उपबंध दलितों की स्थिति सुधारने में महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। जैसे-अनुच्छेद 14 विधि के समझ समानता, अनुच्छेद 16 देश में व्याप्त असमानता, जाति, धर्म व स्थान इत्यादि के आधार पर भेदभाव समाप्त, अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता का अंत, अनुच्छेद 19 वाक् व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अनुच्छेद 21 प्राण व दैहिक स्वतंत्रता, अनुच्छेद 23 शोषण के विरुद्ध व्यवस्था, अनुच्छेद 25 में धार्मिक स्वतंत्रता, अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यकों के हितों को संरक्षण व अनुच्छेद 46 के तहत राज्य समाज में कमजोर वर्गों के शैक्षणिक और आर्थिक हितों का विशेष ध्यान रखेगा।²³ इस प्रकार भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति व जनजाति से सम्बंधित अनेक ऐसे संवैधानिक प्रावधान किये गये हैं। जिन्होंने निश्चित तौर पर दलित समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

उत्तराखण्ड के समाज में जाति व्यवस्था का वर्तमान स्वरूप :-

भारतीय स्वतंत्रता के बाद 1950 ई० में संविधान निर्माण के साथ ही दलितों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व धार्मिक क्षेत्र में सुधार संबंधी अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन हुए क्योंकि संविधान में अनुसूचित जाति के लिए अनेक संवैधानिक अधिकारों का प्रावधान किया गया। जिससे की भारत में एक उदारवादी लोकतांत्रिक व समतामूलक समाज के निर्माण का संकल्प पूर्ण हो सके। संविधान द्वारा सभी नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के सामाजिक आर्थिक राजनीतिक व धार्मिक अधिकार प्रदान किये गये तथा सभी प्रकार के भेदभाव छुआछूत व अस्पृश्यता का निषेध किया गया। यहाँ तक की जातिवाद जैसी समस्या के समाधान के लिए अनेक दण्डों का भी प्रावधान किया। उसके बावजूद भी अनुसूचित जाति के लोगों के साथ उत्तराखण्ड राज्य में छुआछूत का व्यवहार, शोषण व अत्याचार कमावेश आज भी जारी हैं। जिसके कुछ प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत शोध पत्र में प्रस्तुत किये गये हैं। जहाँ हमारे देश का संविधान कहता है कि भारत में किसी के साथ जाति, धर्म व जन्म स्थान के आधार पर किसी तरह का भेदभाव नहीं किया जाएगा। क्योंकि यहां सभी वर्ग समान हैं। वहीं वर्तमान समय में उत्तराखण्ड राज्य में ऐसी अनेक घटनाएँ देखने को मिलती हैं। जिन घटनाओं से उत्तराखण्ड में जाति व्यवस्था के वर्तमान परिदृश्य की स्पष्ट झलक दिखाई देती हैं। जैसे :-

1. उत्तराखण्ड राज्य के चम्पावत जिले में स्थित राजकीय इण्टर कॉलेज सुखीढांग में अनुसूचित जाति की भोजनमाता द्वारा बनाये गए भोजन को खाने से इंकार करना।²⁴
2. उत्तराखण्ड राज्य के उत्तरकाशी जिले में 12 जनवरी 2023 को सलरा गाँव में पूजा करने के लिए मंदिर में प्रवेश कर रहे अनुसूचित जाति के युवक को जलती लकड़ी से पीटा।²⁵
3. उत्तराखण्ड राज्य में नैनीताल जिले के बिंदुखत्ता नामक स्थान पर 16 अगस्त 2020 को विजय टम्टा जब अपनी जमीन पर भवन निर्माण करने गया तो पड़ोस की निवासी गुड्डी पांडे द्वारा जाति सूचक शब्दों का प्रयोग कर पत्थर से मारने का प्रयास किया गया।²⁶
4. उत्तराखण्ड राज्य में 3 सितंबर 2022 को अंतर्जातीय विवाह के कारण अनुसूचित जाति के युवक जगदीश चन्द्र की हत्या कर दी गयी।²⁷
5. उत्तराखण्ड राज्य के पिथौरागढ़ जिले में दलितों के साथ शमशान घाट में भी भेदभाव।²⁸
6. 6 अक्टूबर 2016 को बागेश्वर जिले के भेढाकरड़िया गाँव में दलित युवक सोहन लाल द्वारा चक्की को छुआ तो शिक्षक ललित कर्नाटक ने दराती से प्रहार कर युवक की गर्दन काटकर हत्या कर दी।²⁹
7. 2 मई 2022 को अल्मोड़ा के सल्ट तहसील के थला तलड़िया के दर्शन लाल को चलती बारात में घोड़े से उतारा गया।³⁰
8. उत्तराखण्ड के टिहरी गढ़वाल में केतन लाल (18 वर्ष) नाम के दलित युवक की एक अंतर्जातीय प्रेम प्रसंग के चलते पीट-पीटकर बेरहमी से हत्या कर दी गई।³¹

प्रस्तुत उदाहरणों के आधार पर कहा जा सकता है, कि ऐसी जातिवादी घटनाएँ आज के वैज्ञानिक युग में भी उत्तराखण्ड में ही नहीं सम्पूर्ण भारत में देखने को मिलती है, जो निश्चित तौर पर भारतीय समाज को कलंकित करने वाली घटना है। ये समस्त घटनाएँ हमारे समाज में रहने वाले कुछ ऐसे लोगों की एक ऐसी घृणित मानसिकता को प्रदर्शित करती हैं। जो मनुष्य-मनुष्य के बीच भेद उत्पन्न कर जातिवाद को बढ़ावा देना चाहते हैं। उत्तराखण्ड में आए दिन होने वाली ऐसी घटनाओं से यह ज्ञात होता है कि यहाँ आज भी जाति प्रथा किसी ना किसी रूप में समाज में विद्यमान है।

निष्कर्ष :-

सर्वविदित है कि भारत में संविधान के लागू होने के साथ ही अनुसूचित जाति को अनेक संवैधानिक अधिकार मिले। जिनका अनुसूचित जाति की स्थिति में सुधार तथा क्रमागत विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। परन्तु इस शोध पत्र में उत्तराखण्ड राज्य में जाति व्यवस्था के वर्तमान परिदृश्य के संबंध में जितने भी उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। उनसे यह ज्ञात होता है कि आज भी हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड के समाज में जातिगत भेदभाव की भावना इस कदर भारी पड़ी है। जो एक भयानक बीमारी की तरह हमारे समाज को जकड़े हुए है। तमाम परिवर्तनों के बावजूद समकालीन उत्तराखण्ड में जाति व्यवस्था अपने अनुकूल की अद्भूत क्षमता एवं लोक शाही में संख्या बल की महत्ता के कारण अपनी निरंतरता को बनाए हुए है। 21वीं सदी के आज के वैज्ञानिक युग जहाँ भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश होने के साथ-साथ 6वीं अर्थव्यवस्था के पायदान पर खड़ा है। उसी भारतवर्ष के हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड का मूल निवासी माना जाने वाला शिल्पकार समाज जिसके साथ आज भी आये दिन कोई ना कोई अमानवीय घटना होती रहती है। जिसमें से कुछ ऐसी घटनाएँ हैं जिन्हें देखकर

या सुनकर वो मानवता को भी झिंझोड़कर रख देती है तथा जिन घटनाओं की वैश्विक स्तर पर निंदा की जाती हैं। समाज के प्रत्येक पहलू पर ऐसी मनुवादी घृणित व कुंठित मानसिकता लेकर जीने वाले लोग केवल व्यक्ति-व्यक्ति के बीच रवाई पैदा कर राष्ट्रीय की एकता व अखण्डता के मार्ग में बाधा है। मानवता को कलंकित करने वाली ऐसी सोच भारत की वैश्विक स्तर पर छवि खराब कर उसे अनेक सवालों के कठघरे में खड़ा करती हैं। क्योंकि 10 दिसम्बर 1948 से संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा द्वारा वैश्विक स्तर पर प्रत्येक मनुष्य को मानवाधिकारों के रूप में वे मूलभूत अधिकार दिये गये हैं, जिनकी वजह से मनुष्य को नस्ल, रंग, जाति, धर्म, लिंग, भाषा, राष्ट्रीयता और अन्य विचारधारा आदि के आधार पर प्रताड़ित नहीं किया जा सकता। साथ ही इन्हें देने से वंचित भी नहीं किया जा सकता। अतः हम कह सकते हैं कि जाति प्रथा को आज भी किसी ना किसी रूप में जीवित रखने वाली यह विचारधारा संविधान सभा में सम्मिलित सभी विद्वानों के सपनों के भारत, समता, समानता व बन्धुत्व जैसे स्वर्णिम भारत के निर्माण में प्रश्न चिह्न खड़े करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महाउपनिषद अध्याय 6, श्लोक 71।
2. गरुड पुराण अध्याय 35, श्लोक 51।
3. ऋग्वेद (10,90,1)।
4. थापर, रोमिला, भारत का इतिहास, राज कमल प्रकाशन नई दिल्ली, 2003 पृ० सं० 32।
5. शतपथ ब्राह्मण (13,8,1,18)।
6. आहूजा राम, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स, पृ० सं० – 223, 224, 229।
7. बिष्ट, प्रो० शेर सिंह, कुमाऊँ हिमालय : समाज एवं संस्कृति, अंकित प्रकाशन हल्द्वानी, नैनीताल, पृ० सं० – 11।
8. पांडे, बद्रीदत्त, कुमाऊँ का इतिहास, अल्मोड़ा बुक डिपो अल्मोड़ा, 1937, पृ० सं० –159, 510।
9. नाटियाल, विकास, आधुनिक एवं समकालीन उत्तराखंड हिमालय, बिन्सर पब्लिशिंग कंपनी देहरादून उत्तराखंड, 2011 पृ०, सं० – 206।
10. शर्मा, प्रो० डी० डी०, शर्मा, प्रो० मनीषा, उत्तराखंड का सामाजिक एवं साम्प्रदायिक इतिहास अंकित प्रकाशन, 2015 पृ० सं० – 24।
11. Turner, A. C. Census of India, United Provinces of Agra and Oudh, page no, 553
12. शर्मा, प्रो० डी० डी०, शर्मा, प्रो० मनीषा, उत्तराखंड का सामाजिक एवं साम्प्रदायिक इतिहास अंकित प्रकाशन, 2015 पृ० सं० – 21।
13. पांडे, बद्रीदत्त, कुमाऊँ का इतिहास, श्याम प्रकाशन, 2019 पृ० सं० – 379।
14. कठोच, डॉ० यशवन्त सिंह, गढ़वाल का इतिहास, भागीरथी प्रकाशन गृह, 2007 पृ० सं० – 222।
15. पो० गढ़वाल सेब्लमेन्ट रिपोर्ट, पृ० सं० – 42।
16. जिज्ञासु, चंद्रिका प्रसाद, दलित समुनांजलि, समता प्रकाशन अल्मोड़ा, 1934, पृ० सं० – 03।
17. समता, सवर्ण जयंती विशेषांक अल्मोड़ा 1 अगस्त 1984, पृ० सं० – 9।

18. टम्टा, दया शंकर, क्रान्तिदूत, समता प्रकाशन अल्मोड़ा, पृ० सं० 9, 60।
19. रावत, डॉ० अजय सिंह, उत्तराखण्ड का राजनैतिक इतिहास (पाषाण युग से 1949 तक), अंकित प्रकाशन हल्द्वानी, 2018, पृ० सं० – 464।
20. दसोनी बी० एल०, गढ़वाल के शिल्पकारों का इतिहास, विनसर पब्लिशिंग कं० देहरादून, 2006, पृ० सं० – 139।
21. चन्द्र दीवान, पूर्व महामंत्री शिल्पकार सभा नैनीताल स्मारिका डॉ भीमराव अम्बेडकर जयंती समारोह शिल्पकार सभा नैनीताल, 2015, पृ० सं० – 17।
22. शिल्पकार सभा स्मारिका, नैनीताल 2015, पृ० सं० – 18।
23. लक्ष्मीकांत एम, भारत की राज्य व्यवस्था, TATA MEGRAW HILL EDUCATION PRIVATE LIMITED [NEW DELHI] पृ० सं० – 7.5, 7.9, 7.14 8.2।
24. अमर उजाला अखबार, 20 मई 2022, पृ० सं० 1।
25. अमर उजाला अखबार, 12 जनवरी 2023, पृ० सं० 1।
26. वंचित स्वर साप्ताहिक प्रकाशन, 23 अगस्त 2020, पृ० सं० 1।
27. अमर उजाला अखबार, 3 सितम्बर 2022।
28. वंचित स्वर साप्ताहिक प्रकाशन, 29 मार्च 2015, पृ० सं० 1।
29. वंचित स्वर साप्ताहिक प्रकाशन, 16 अक्टूबर 2016, पृ० सं० 1।
30. वंचित स्वर साप्ताहिक प्रकाशन, 8 मई 2022, पृ० सं० 1।
31. अमर उजाला अखबार, 9 जून 2026।

d.kumar0531@gmail.com



बौद्ध दर्शन में मध्यम मार्ग की अवधारणा एवं वर्तमान युग में प्रासंगिकता

सिद्धार्थ सिंह पटेल

शोधार्थी, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

सारांश-

तथागत के सिद्धांत एवं उनका जीवन मानवता के लिए वरदान है जिनका मूल उद्देश्य मानव जीवन में व्याप्त दुखों का निवारण करना एवं प्रतिपादित मध्यम मार्ग का अनुसरण करते हुए अतिवाद का निषेध करना है। गौतम बुद्ध ने अति भोग-विलास एवं अत्यंत कठोर तप का खंडन करते हुए सरल जीवन अपनाने को प्रेरित किया है जिसे अनुसरण करके व्यक्ति अपना जीवन सफल बना सकता है। बुद्ध के समय वैदिक कर्मकांडीय पद्धति एवं जटिल धार्मिक व्यवस्थाएं अपने चरम पर थी साथ ही साथ अन्य समकालीन दर्शन यथा जैन धर्म अत्यंत जटिल दार्शनिक व्याख्याओं के साथ अतिवाद की तरफ अग्रसर थे जो आम जनमानस के लिए कठिन थे तो वहीं दूसरी तरफ चार्वाकवादी अति भोग विलास को प्रेरित करते थे जो आध्यात्मिक एवं वैचारिक क्रांति में रुकावट पैदा करते थे परिणाम स्वरूप बुद्ध के विचारों ने जनमानस के समक्ष मध्यम मार्ग का पथ प्रदर्शित किया जो आम जनता के लिए आसान था।

वर्तमान युग में उपभोक्तावादी विचारों ने आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग में अवरोध बनकर मनुष्य को भोग विलास की तरफ उन्मुख किया है। परिणामस्वरूप मानसिक अवसाद, प्रतिस्पर्धा, असंतोष एवं वर्ग संघर्ष को बढ़ावा मिला है। व्यक्तियों में तृष्णा की भूख बढ़ती चली जा रही है एवं परमार्थ के स्थान पर स्वार्थपूर्ति को महत्व दिया जा रहा है। बुद्ध ने दुखों का सर्वप्रमुख कारण तृष्णा को ही माना है। बुद्ध ने मानव जीवन के मूल समस्या दुःख को केंद्र में रखकर अपने चिंतन को प्रतिपादित किया एवं इसके निवारण का उपाय मध्यम मार्ग को बताया जो व्यक्ति के जीवन को संतुलित बनता है यह ना तो भोगवाद का समर्थन करता है और न ही आत्मपीड़न का बल्कि व्यावहारिक मानवतावादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध बौद्ध धर्म दर्शन में प्रतिपादित मध्यम मार्ग की दार्शनिक अवधारणा, नैतिक महत्व एवं प्रासंगिकता का अध्ययन प्रस्तुत करता है जो एक संतुलित जीवन पद्धति के लिए आवश्यक है।

मुख्य शब्द - चार आर्यसत्य, अष्टांगिक मार्ग, सम्यक दृष्टि, प्रतीत्यसमुत्पाद, विपरसना, त्रिरत्न, पंचशील सिद्धांत, निर्वाण (निब्बान)

परिचय -

बौद्ध दर्शन का सार मध्यम मार्ग में निहित है जो दर्शन का मुख्य केंद्र बिंदु होने के साथ-साथ जीवन जीने की कला भी है। बौद्ध धर्म व्यक्ति की चेतना को नैतिकता का आधार मानता है और अंतिम लक्ष्य समस्त दुखों से मुक्त होकर अनंत सुख को प्राप्त करना निर्धारित करता है¹, मध्यम मार्ग दो अतियों के बीच के संतुलित मार्ग को परिभाषित करता है। प्रारंभ में बुद्ध ने भौतिक सुख सुविधाओं युक्त जीवन व्यतीत किया तत्पश्चात् कठोर तप का मार्ग भी अपनाया। इसी क्रम में सत्य का ज्ञान प्राप्त हुआ और उन्होंने अनुभव किया कि दोनों ही मार्ग अतिवादी हैं। अतः उन्होंने संतुलित मार्ग को अपनाया जो मध्यम मार्ग कहलाया। किंवदन्तियों के अनुसार बुद्ध के सामने से बंजारों का कबीला जा रहा था जो तार वाला वाद्य यंत्र बजा रहे थे उनमें से एक बुजुर्ग ने कहा की तार को इतना मत कसो कि तार टूट जाए व इतना ढीला भी मत करो कि आवाज ना निकले। बल्कि मध्यम में रखो, इस वाक्य को सुनकर बुद्ध को मध्य मार्ग का प्रबोधन हुआ।² गौतम बुद्ध के प्रथम उपदेश जिसे सारनाथ में दिया गया था उसमें मध्यम मार्ग का स्पष्ट वर्णन मिलता है जिसमें उन्होंने मध्यम मार्ग को अष्टांगिक मार्ग में संनिहित बताया है क्योंकि यह आठो मार्ग बौद्धिक एवं नैतिक विकास करते हैं एवं मन, वचन, कर्म को शुद्ध करते हुए निर्वाण का मार्ग प्रशस्त करते हैं।³ मध्यम मार्ग केवल धार्मिक सिद्धांत नहीं अपितु जीवन जीने की कला भी है। यह संयम, सहिष्णुता एवं विवेकशीलता के बीज आरोपित करता है जिससे व्यक्ति अतिरेक से बचते हुए संतुलित जीवन अपनाने हेतु प्रेरित हो सके।

शोध का लक्ष्य एवं केंद्रीय तर्क -

प्रस्तुत शोध का प्रमुख लक्ष्य मध्यम मार्ग की दार्शनिक अवधारणा को स्पष्ट करते हुए यह विश्लेषण करना कि आज के युग में यह आम जीवन को कैसे सुगम बना सकता है एवं आधुनिक समस्याओं के निराकरण में सहायक हो सकता है। मध्यम मार्ग केवल धार्मिक या आध्यात्मिक सिद्धांत नहीं अपितु सार्वभौमिक जीवन दर्शन है, यह भौतिकवादी समाज से उपजी समस्याओं का सार्वभौमिक हाल भी है।

शोध उद्देश्य -

1. बौद्ध दर्शन में अंतर्निहित मध्यम मार्ग की अवधारणा का अध्ययन करते हुए वर्तमान प्रासंगिकता को समझना।
2. मध्यम मार्ग का दार्शनिक विश्लेषण एवं अन्य बौद्ध दर्शन से जोड़कर मर्म को समझना।
3. मध्यम मार्ग का नैतिक एवं सामाजिक महत्व का मूल्यांकन करना एवं तर्कसंगत समाज की स्थापना करना।
4. उपभोक्तावाद एवं बढ़ रही हिंसा का पूर्ण निषेध करते हुए मध्यम मार्ग को जनकल्याण के मार्ग के रूप में प्रशस्त करना।
5. न्याय के क्षेत्र में पूर्ण न्याय करने में मध्यम मार्ग के उपयोगिता को समझना।

शोध पद्धति -

प्रस्तुत शोध वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें प्राथमिक स्रोत के रूप में प्रमुख बौद्ध ग्रंथों एवं द्वितीयक स्रोत के रूप में विभिन्न पुस्तकों एवं लेखों का अध्ययन किया गया है।

बौद्ध दर्शन के प्रमुख सिद्धांत -

तथागत का जीवन एवं उनके द्वारा दी गई शिक्षाएं मानवता के लिए वरदान हैं। बुद्ध मानवतावाद के प्रबल व्याख्याकार थे हैं एवं तर्क व आत्ममंथन पर विशेष बल दिया।⁴ बुद्ध के सभी दर्शनों का सार मध्यम मार्ग है जो मनुष्यों में सहयोग व सहअस्तित्व की भावना को बढ़ाता है, यह सत्य अहिंसा करुणा जैसे नैतिक मूल्यों को प्रोत्साहित करता है एवं स्व-नियंत्रण व उत्तरदायित्व की भावना को विकसित करता है। मध्यम मार्ग को बौद्ध दर्शन के कुछ प्रमुख सिद्धांतों के माध्यम से समझने का प्रयास किया गया है जो निम्नवत हैं।

बौद्ध दर्शन में चार आर्य सत्य (चतुष्टय) बुद्ध के शिक्षाओं का मूल आधार है यह दुःख, दुःख का कारण, दुःख का निवारण एवं दुःख निरोध दामिनी प्रतिपदा⁵ के माध्यम से मध्यम मार्ग को पुष्ट करता है जो सांसारिक कष्ट को दूर करने का पथ प्रदर्शित करने में सहायक है। बौद्ध धर्म में दुःखों के निवारण के लिए अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण आवश्यक माना गया है। जिसके अंतर्गत सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वचन, सम्यक काम, सम्यक आजीविका, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति एवं सम्यक समाधि है। यह अष्टांगिक मार्ग व्यक्ति को मध्यम मार्ग के पथ प्रदर्शन के रूप में सहायता प्रदान करते हैं⁶, अष्टांगिक मार्ग के प्रथम मार्ग सम्यक दृष्टि के द्वारा मनुष्य वास्तविक ज्ञान का साक्षात्कार कर सकता है, सम्यक दृष्टि अर्थात् यथार्थ ज्ञान मनुष्य को कुशल एवं अकुशल कर्मों के भेद को समझने में सहायता करता है जिसके माध्यम से मध्यम मार्ग की राह आसान हो जाती है। बौद्ध दर्शन की आत्मा अर्थात् प्रतित्यसमुत्पाद⁷ जो कारण-कार्य संबंध का बोध कराता है मध्यम मार्ग को समझने का महत्वपूर्ण दर्शन है इसके माध्यम से मनुष्य यह जान पाता है की आत्मा स्थायी है, संसार अनित्य है एवं दुःखों का अंत संभव है⁸, इसके अतिरिक्त बौद्ध दर्शन में विपस्सना, त्रिरत्न एवं पंचशील सिद्धांत का आध्यात्मिक उन्नति के लिए विशेष महत्व है जो मनुष्य के चित्त को शुद्ध करके मध्यम मार्ग की ओर प्रेरित करते हैं। त्रिरत्न के अंतर्गत बुद्धम् शरणम् गच्छामि, धम्मम् शरणम् गच्छामि, संघम् शरणम् गच्छामि के माध्यम से बुद्ध के द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए मनुष्य अपने अंदर की दृष्टि को जगा सकता है एवं पंचशील सिद्धांतों का अनुपालन करते हुए अंतिम लक्ष्य अर्थात् निर्वाण (निब्बान) की ओर अग्रसर होता है।⁹

निष्कर्ष -

प्रस्तुत शोध का मुख्य लक्ष्य मनुष्य के अंदर सम्यक दृष्टि की अलख जगाते हुए विचार, वाणी व कर्म की शुद्धि प्रदान करना ताकि वह अतिवाद से बचते हुए एक संतुलित जीवन पद्धति का अनुसरण करें एवं बुद्ध के बताए मार्ग के द्वारा उपभोक्तावादी जीवन शैली के बंधनों से मुक्त हो सके। मध्यम मार्ग दर्शन की वह कुंजी है जो मानसिक स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण व सामाजिक सौहार्द की स्थापना करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है जो वर्तमान समय की आवश्यक मांग हैं, हालांकि कुछ विद्वान इसे आदर्शवादी मानते हैं अपितु इसकी व्यावहारिकता व सार्वभौमिकता इसे प्रासंगिक बनाती है। यह मनुष्य में संतुलन, विवेक एवं तर्क जैसे गुणों को जन्म देती है जो विश्व कल्याण के लिए अपरिहार्य हैं।

“तुम्हेही किच्चमातप्पं, अक्खातारों तथागता” (धम्मपद 276)

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. नरसु, पी0 लक्ष्मी, अम्बेडकर बी0 आर0 बौद्ध धर्म का सार तीसरा संस्करण, पृ0-87

2. जातक संग्रह, अपणक जातक, क्रमांक-1
3. शास्त्री, द्वारिकादास : अंगुत्तर निकाय पालि (भाग-1), बौद्ध भारती ग्रंथ-माला, वाराणसी, 2009, पृ0-229-230
4. दीघनिकाय 3.4
5. धर्म चक्रप्रवर्तन सूत्र – संयुक्त निकाय 55.2.1 (बुद्ध चर्चा पृ0 23)
6. शास्त्री, द्वारिकादास – दीघ निकाय पालि (महावग्ग), बौद्ध भारती ग्रंथ-माला, वाराणसी, 2009, पृ0532
7. शास्त्री, द्वारिकादास – संयुक्त निकाय पालि (निदानवग्ग, खंदकवग्ग च), बौद्ध भारती ग्रंथ-माला (41), वाराणसी, 2009, पृ0-382
8. पाण्डेय, गोविन्दचंद – बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, उत्तर प्रदेश, हिंदी संस्थान, लखनऊ, 2010
9. वहीं।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 122-125

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

THE HINDU BIRTH RITUALS : THEIR RELEVANCE IN THE CURRENT SOCIETY

Dr. Kumari Soni Rekha

Assistant Professor,

Dept. of Sociology, J. D. Women's College, Patna.

There are many Birth-related rituals in Hinduism. They are termed as the Hindu Birth Rituals.

The rituals begin even before the baby is born. They are termed as prenatal rituals. These are Garbhadhanam ritual, Pumsavan ritual and Simantonayana ritual. The Garbhadhanam ritual is seldomly observed, generally only if there is problem in conceiving. The Simantonayan ritual continues as Godbharai rasm. The Pumsavan ritual is not at all observed in the current society. Then comes the Childhood rituals. Under this come the Jatkarma ritual, Namkarna ritual, Niskramana ritual, Annaprasana ritual, Chudakarana ritual and Karnavedha ritual. The Jatkarma ritual no longer continues. Namkarna ritual continues as Chhatthi and Sataisa. Niskramana ritual is no longer observed. Annaprasana continues to fulfill the dietary requirements of the baby. Chudakaran ritual also continues to be celebrated at times even with music and dance. The next Hindu Birth Ritual consists of Educational rituals. These are Upanayana ritual and Samavartana ritual. The Upanayana ritual continues as 'Khalli Chhuana' or 'Pilsut Pakrana' ritual. The Samavartana ritual continues these days as 'Dikshanta ceremony' or Convocation Ceremony.

Keywords : Prenatal Rituals, Childhood Rituals, Upanayana Ceremony, Samavartana, Savitri Ritual.

There are varied many rituals in Hinduism, in-fact it can be said that the rituals are peculiar/unique feature of Hinduism which are barely found in other religions such as Islam, Christianity, Sikhism, Buddhism or Jainism etc. What is meant is that there are very few rituals in non-Hindu religions.

The rituals begin even before a soul takes birth as a baby. The first prenatal (before birth) ritual

is Garbhadhanam. In this ritual of Garbhadhanam, worship is done to call a sacred and good soul to be born of the newly wedded couple. The worship can be done either by the married couple themselves or even by their parent and/or parent-in-law.

The next prenatal ritual according to Raj Bali Pandey is Pumsavan. This is to keep the evil spirits away from the pregnant women. In this water is worshipped and charged with mantras and then sprinkled all around her living room. On this day the pregnant woman fasts to observe the ritual.

After this comes the ritual of Simantonayana. This is observed anytime between 5th to the 7th month of pregnancy. During this period the mind of the fetus is growing, therefore the pregnant mother is advised to be careful about her dietary intake, that she should take nutritious diet, such as 'kheer', 'brahmi', 'almond', 'chestnut' etc.

Regarding the relevance of the pre-natal rituals in the current society the Pumsavan ritual is not observed. The Garbhadhanam ritual is seldomly observed, only if there is problem in conception. The Simantonayana rituals is observed for to be mother by the name 'Godhbarai rasm'. In this she is gifted with new dresses to suit the growing weight, and various nutritious dishes, to draw her attention towards her dietary intake.

Now what Raj Bali Pandey calls as Childhood Rituals.

The first Childhood ritual is Jatkarma ritual. In this the baby is fed with honey and butter and the baby's father utters benedictory mantras in his ear. The baby is blessed with 'ayush' (long life) and 'medha' (intelligence). The father of the baby writes the symbol of 'Om' on his/ her tongue, then is fed on mother's milk. This ritual is no longer observed.

The next Namakarna ritual was earlier observed as a separate ritual in which the Pandits or Kulguru coined the baby by a name suited to the 'kulas' or 'gotras'. The girls' names used to be coined as such that they ended in long vowel sound which sounded to be pleasing and auspicious and not dreadful. However nowadays the namakarna ritual is observed on the day of Chhatthi. On this auspicious occasion of Chhatthi the friends and relatives are called to bless the child and worship of Satnarayana Swami is also observed.

Chhatthi is observed in all cases unless the child falls under Sataisa. If planets are not in proper positions at the time of birth, the ill planets are to be reconciled/ their effects nullified by observing Sataisa. The father is not allowed to see his baby before the day of Sataisa. On the day of Sataisa, Puja is observed in which the father is for the first time shown the face of his baby in oil kept in a bowl. After this the father can see his baby normally. So in cases where Sataisa is observed the Namkaran ritual too is observed in the very same observance. So we can say that the Namkarana ritual continues to be observed as part of Chhatthi or Sataisa.

Next is Niskramana ritual which is not at all observed in the current society. Earlier it used to be observed as the baby being presented to the greatest natural force i.e. Sun as also his/ her first contact with the world outside his/ her home.

The Annaprasana ritual is celebrated in the 6th month of the baby's birth. At this stage the teeth start coming out and even the growing baby needs food besides mother's milk to meet the requirement of fast growth. As symbolic to it, on completing 6 months the baby is being fed with kheer and his/ her process of taking normal diet - cereals, pulses and fruits & vegetables starts. However Baba Ramdev suggests that the baby shouldn't be fed with salty dishes for the first 3 years for proper growth.

Chudakarana Ritual – This is first tonsure of hair which is ritually celebrated. In Tirupati Temple of South the hair is offered to the Tirupati Balaji. There even old, young, all offer their hair to the Balaji. In North India at all Pilgrimage places, the hair tonsure is ritually celebrated at times with music and dance as well. The only difference is that in Northern India the Chudakarana ritual is celebrated compulsorily before marriage and generally it is celebrated in 1st, 3rd, 5th year of growth of the child. The ritual is observed for both boys & girls. The ritual continues since long past.

Karnavedha ritual continues to be observed in the early child hood of the child, generally only for the girl child, however in Maharashtra even boys' ears are being pierced. Generally it is observed in 12th year of growth. The nose is also pierced, in North India in the left nasal side and in the South India in right nasal side and in Rajasthan in the middle of both the nostrils also besides in both nasal sides. So this is how this Karnavedha ritual continues to day in the different parts of the country.

Upanayana ritual was earlier celebrated as the entry or admission to the Gurukulas to study Vedas or Vedangas. In different Gurukulas, the teaching is for different duration. Even the age of admission / entry to the Gurukulas used to be different for different varnas, for Brahmans it is 13th year of age, for Kshatriyas it is at 19th year of age and Vaishyas enter at 21 years of age. These days the Upanayan ritual is known as 'Pilsut Pakrana' or 'Khali Chhuana in Hindi. At a very early stage maximum by the age of 5 years, the ritual is observed with chalk writing on a small blackboard - slate. The child is made to write Om (?) generally on the day of Saraswati puja or on any other day before the idol of Saraswati Maan and take her blessings. Usually the Pandit's help is taken, he assists the child in writing on the slate. After this observance the child is considered religiously entitled to read and write i.e. begin his education.

Samavartana : This used to be observed after the completion of their studies at gurukulas. The disciples gave gurudakshina to their Gurus, only then they were considered to have completed their education. The dakshina could either be any materialistic object or any promise made expected to be observed when asked. Guru Dakshina once paid off the disciples were free to come back to their

homes. The very similar ritual observed these days i.e. observed after the completion of disciples' studies is convocation ceremony. In this ceremony which is called dikshant ceremony in Hindi, is held at last by distributing certificates to the disciples and thereafter comes the end of their learning in the universities by their Gurus i.e. teachers.

By Savitri Ritual is meant the observance of duties of Brahmacharya. It continues even today in our country.

Acknowledgement :

I thank my Parents for their blessings which empowered me to write this article. Thankyou Mummy and Papa! I thank Prof. (Dr.) Vinita Singh Ma'am, Head, Professor-in-charge, Ranchi Women's College, Ranchi University, Ranchi, Jharkhand; by whose inspiration this article was written. The article is based on my PhD. Work entitled 'Continuity And Change Among Urban Educated Hindus: A Study Of Sociology Of Religion', which she supervised with lot of love and affection. Thank you very much Ma'am! Ultimately, I thank God who kept me peaceful enough to write the article. Thankyou God!

Notes :

The article is based on the paper presented at 'All India Sociological Conference 2014' on 'Development, Diversity and Democracy', organized by the 'Department of sociology, Mahatma Gandhi Kashi Vidyapith', Varanasi. It was presented in RC 06 on 'Religion and Religious Communities'.

References :

- Channel Aastha (5.00 am to 7.30 am – live telecast every day – 2007 to2012). *Param puja Swami Ramdevji Maharaj ke pawan saanidhya men Yog Shivar.*
- Prabhu, Pandharinath H. (1993). *Hindu Social Organization: A Study in Socio-Psychological and Ideological Foundations.* Bombay: Popular Prakashan.

Email: <kumarisonirekha@gmail.com>



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037
SANGAM

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 7-8
पृष्ठ : 126-133

महिलाओं में प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता एवं समस्याएं : पटना के अशोक नगर के मलिन बस्ती के संदर्भ में

शीतल सिन्हा, शोधार्थी

डॉ. मीरा रानी, शोध निर्देशक

असिस्टेंट प्रोफेसर, एम. एम. महिला कॉलेज

गृह विज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

सारांश :

महिलाओं का प्रजनन स्वास्थ्य उनके साथ, परिवार के कल्याण, समग्र स्वास्थ्य तथा समाज के सतत विकास का एक महत्वपूर्ण आधार है। प्रजनन स्वास्थ्य में सुरक्षित मातृत्व, परिवार नियोजन, मासिक धर्म स्वच्छता, प्रजनन संक्रमणों की नियोजन, महामारी सेवों तक पहुंच शामिल है। पटना शहर तथा गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य के अशोक नगर की रहने वाली मलिन बस्तियों की महिलाओं को गरीबी, अशिक्षा, कुपोषण अस्वच्छ वातावरण सामाजिक कारकों तथा स्वास्थ्य सामना करना पड़ता है, संबंधित समस्याओं का यह अध्ययन पटना के अशोक नगर मलिन बस्तियों में रहने वाली महिलाओं के प्रजनन सशक्त नगर की स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता एवं उनसे संबंधित प्रमुख समस्याओं का से किया गया है अध्ययन आकलन करने के उद्देश्य में महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक स्थिति, शिक्षा का स्तर, मासिक धर्म स्वच्छता, परिवार नियोजन के प्रति जागरूकता, के दौरान प्रसवपूर्व एवं प्रसवोत्तर देखभाल, पोषण की स्थिति तथा हमने मलिन बस्तियों के महिलाएं जिसमें अठारह वर्ष से पैंतीस वर्ष की महिलाओं का चयन किया गया है। इस अध्ययन में यह पाया कि मलिन बस्तियों भी महिलाओं में मासिक धर्म संबंधी दृष्टि में उसकी उपयोग की कमी जैसी समस्याएं परिवार नियोजन के साधनो पाई गई है। अर्थात् मलिन बस्तियों के स्वास्थ्य के प्रति अधिक से अधिक, समस्याएं तथा फैलाई साधना के बारे अधिक बस्तियों के प्रजनन जागरूकता है। निश्चित है जाए तो इसे समाधान है।

शब्द कुंजी - प्रजनन स्वास्थ्य, मलिन बस्तियां, महिला स्वास्थ्य

भूमिका :

कल्याण भारत जैसे विकाशसित देश में अभिती मलिन वस्तुओं में बहुत सारी समस्याएं है जिसमे से प्रजनन से जुड़ी समस्याएं बहुत अत्यधिक। प्रजनन स्वास्थ्य केवल बीमारियों की जागरूकता और समस्याओं पर केंद्रित है। अशोक नगर जैसे क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं की सामाजिक - आर्थिक स्थिति बेहद ही दयनीय है

स्वास्थ्य एवं पोषण है। अभाव, काफी पुरानी जिसका सीधा असर उनके इस क्षेत्र में जागरूकता के और दयनीय है और सामाजिक मान्यताओं और (स्वास्थ्य सेवाओं तक कारण महिलाओं को सीमित पहुँच के मासिक धर्म की खान तरीके से पैड लेना और असुरक्षित तरीके से उस समय में रहता जानकारी के अभाव के कारण कुपोषण, एनीमिया, अनचाहे गर्भ और जनन मार्ग के संक्रमण जैसी गम्भीर समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आर्थिक तंगी और अशिक्षा के अभाव के चलते इन महिलाओं में परिवार नियोजन की कार्यक्रम को समझा पाना भी मुश्किल होता है। आधुनिक गर्भ निरोधकों के प्रति भारी भ्रांतियाँ हैं। जिसकी वजह से शिशु मृत्युदर, मातृत्व मृत्युदर एवं शिशु कारण भी बढ़ जाता है। अतः हम अशोकनगर के मलिन बस्तियों के माध्यम से हम यह बताना चाहते हैं कि इस वंचित समुदायों में प्रजनन स्वास्थ्य की वास्तविक स्थिति क्या है। जननी सुरक्षा योजना का लाभ भी इस वर्ग में नहीं पहुँच पा रही है। इस शोष्य चलता है कि जो प्रजनन कार्यक्रम व सोच को बदलने हेतु किस तरीके से हम जागरूक व बदलन कर के स्वास्थ्य प्रजनन के प्रति जागरूक करके उनकी समस्याओं का सामाधान कर सकें। हमें यह पता चलता जागरूकता और समस्याओं पर केंद्रित है।

प्रजनन अधिकार मानवाधिकार का हिस्सा माना जाता है। लेकिन, इसपर कभी भी इतनी गंभीरता से बात नहीं होती है। इस विषय को लेकर लोगों के बीच आज भी एक तरह का टैबू बना हुआ है, जिस वजह से महिलाओं और हाशिये के समुदायों को अनेकों समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सदियों से यौन और प्रजनन अधिकार को बस बच्चा पैदा करने के अधिकार तक ही सीमित रखा गया है। हालांकि यह सिर्फ एक हिस्सा है यौन और प्रजनन अधिकार का। यौन और प्रजनन अधिकार से मतलब यह है कि हर इंसान को अपने शरीर के बारे में फैसला लेने का पूरा अधिकार हो, पसंद-नापसंद पर बात रखने, यौन संबंध को नियंत्रित करने, अपने मन मुताबिक शादी करने, बच्चा पैदा करने और अपने सेक्सुएलिटी और जेंडर पर बातचीत और फैसले करने का पूरा अधिकार हो। लेकिन हमारे पितृसत्तात्मक समाज महिलाओं को उनके अपने शरीर पर और उनके यौन और प्रजनन अधिकारों को कोई महत्व नहीं देता।

प्रजनन अधिकारों की शुरुआत तो महिलाओं के शरीर से होती है पर इसका अंत मानवाधिकार जैसे बड़े मुद्दे पर होता है। एक महिला बच्चे पैदा करेगी या नहीं, कितने बच्चे पैदा करेगी, अक्सर इसका फैसला वह खुद नहीं ले पाती। यह फैसला सामाजिक मानदंडों के तहत परिवार के लोग तय करते हैं, जिसमें सबसे अधिक भूमिका पुरुषों की होती है। जब एक लड़की शादी करके ससुराल जाती है, तब घर के बड़े-बुजुर्गों के मुँह से यह आशीर्वाद ये नहीं निकलता है कि 'आबाद रहो', 'आजाद रहो', 'आगे बढ़ो', बल्कि यह सुनने को मिलता है कि 'दूधो नहाओ पूतो फलो', 'अब जल्दी से एक बच्चा कर लो या जल्द ही दो से तीन हो जाओ।' प्रजनन अधिकार की लड़ाई हालांकि नई बात लगे, लेकिन समस्या पुरानी है। इसपर बातचीत नारीवादी आन्दोलन के दूसरी लहर से शुरू हो गई थी। इस समझ के साथ कि ये पहलुएं महिलाओं के स्वास्थ्य, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक कारकों को प्रभावित करते हैं, इसपर जागरूकता बढ़ी है।

साहित्य की समीक्षा :

- भान और शुक्ला (2023) ने पाया कि एमएमआर में गिरावट के साथ-साथ, संक्रामक रोगों से गैर-संक्रामक (एनसीडी) तक एक महामारी संक्रमण हुआ है, जिसके कारण भारत में महिलाओं की स्वास्थ्य देखभाल आवश्यकताओं में बदलाव आया है। वर्ष 2018 में महिलाओं में 53.5% मौतों के लिए हृदय

रोग, कैंसर, मधुमेह आदि जैसे एनसीडी जिम्मेदार थे, जो वर्ष 2000 के 33% की तुलना में वृद्धि दर्शाता है।

- एंडरसन और रे (2013) ने अधिक उम्र में महिला मृत्यु दर की अधिकता के लिए मुख्य रूप से एनसीडी को जिम्मेदार ठहराया था। इस कार्य ने शोध का एक व्यापक क्षेत्र खोल दिया है जो जन्म के समय विषम लिंग अनुपात, युवा लड़कियों के साथ दुर्व्यवहार और मातृ मृत्यु दर को "मिसिंग वुमन अर्थात- महिलाओं की संख्या में कमी" (सेन (1990) की व्याख्या के रूप में पेश करता है।
- डुपास और जैन (2021) ने बताया, विशेष रूप से महिलाओं के प्रति लक्षित कार्यों के बिना, स्वास्थ्य देखभाल पर किया जानेवाला सार्वजनिक खर्च प्रभावी रूप से पुरुष-समर्थक होगा। स्थापित लैंगिक पूर्वाग्रहों वाले माहौल में, लैंगिक-तटस्थ नीतियाँ पर्याप्त नहीं होंगी और सम्भावित रूप से मौजूदा असमानताएं बढ़ा सकती हैं।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन (2023) के अनुसार, यौन और प्रजनन स्वास्थ्य का मकसद केवल यौन संचारित रोगों या यौन संबंध तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह लोगों के शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक स्वास्थ्य से भी जुड़ा हुआ है। अच्छा यौन और प्रजनन स्वास्थ्य महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है।
- अभिक सिन्हा और अन्य (2012) ने कहा कि घरेलू हिंसा महिलाओं के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डालती है। अध्ययन किए गए ग्रामीण पिछड़े क्षेत्रों में महिलाओं के लिए सामाजिक समर्थन, जागरूकता और आय सृजन की सिफारिश की, जिससे महिलाओं का स्वास्थ्य में सुधार हो सके।
- पवार और माने (2013) के अध्ययन के अनुसार, गरीबी झुग्गी बस्तियों में रहने वालों का एक अनिवार्य हिस्सा है। उनकी गरीबी के कारण, वे कम पढ़े-लिखे, अकुशल होते हैं और उनकी आर्थिक स्थिति खराब होती है।
- अमीरुल हसन और वंदना शुक्ला (2013) ने गणना की कि कुपोषण और पोषण संबंधी एनीमिया झोपड़ी में रहने वाली महिलाओं की मुख्य स्वास्थ्य समस्याएं हैं, साथ ही दंत चिकित्सा की भी है।
- चंद्रशेखर एस (2005) ने भारत में स्लम्स की स्थिति में अंतर का एक स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया, जिसमे पाया कि गैर-स्लम क्षेत्रों की स्थिति से इसकी तुलना में स्लम्स क्षेत्रों में सामाजिक-सांस्कृतिक और व्यवहारिक बाधाएं जैसे महिला अशिक्षा आदि महिलाओं के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती है।

अध्ययन का उद्देश्य

- महिलाओं के पोषण एवं स्वास्थ्य के स्तर का अध्ययन करना।
- मलिन बस्ती की महिलाओं में प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता एवं समस्याएं का अध्ययन करना।

अध्ययन पद्धति :

शोध आलेख वर्णात्मक एवं अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप पर आधारित है। प्रस्तुत आलेख बिहार के पटना नगर में रहने वाले 200 उत्तरदात्रियों पर आधारित है। उत्तरदाताओं के रूप में चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के आधार पर किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में तथ्य संकलन दो स्तरों पर किया गया है। प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्य। प्राथमिक तथ्यों का संकलन शोधकर्ता द्वारा साक्षात्कार-अनुसूची की सहायता से अवलोकन एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार विधियों द्वारा किया गया है। द्वितीयक तथ्यों का संकलन अध्ययन से सम्बंधित विभिन्न पुस्तकों, शोध-पत्रों, सन्दर्भ ग्रन्थों, पत्र- पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, प्रकाशित व अप्रकाशित विविध सरकारों एवं गैर सरकारी प्रतिवेदनों, इंटरनेट आदि से किया गया है। प्राप्त दत्तों के विश्लेषण के लिए मैनुअल के द्वारा तथ्यों का विश्लेषण किया गया है। संकलित गुणात्मक तथ्यों को वर्गीकरण एवं सारणीयन द्वारा मात्रात्मक दत्तों में परिवर्तन करके विभिन्न अध्यायों से सम्बंधित सारणी का निर्माण करके सम्पूर्ण शोध प्रतिवेदन तैयार किया गया है।

आंकड़ों का विश्लेषण :

तालिका संख्या – 1

आयु के आधार पर

आयु	संख्या	प्रतिशत
18-25	21	10.5
26-35	131	65.5
36-45	48	24.00
कुल योग	200	100.00

तालिका संख्या- 1 के आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अधिकांश 26-35 आयु वर्ग की मलिन बस्तियों की महिलाएं 131 अर्थात 65.5 प्रतिशत है, जबकि सबसे कम 18-25 वर्ष की 21 अर्थात 10.5 प्रतिशत है। अध्ययन में 36-45 की महिलाओं का 24 प्रतिशत है।

तालिका संख्या- 2

प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने में सामाजिक-आर्थिक बाधा महसूस के आधार पर

आयु	संख्या	प्रतिशत
हाँ	146	73.00
नहीं	52	26.00
पता नहीं	02	01.00
कुल योग	200	100.00

तालिका संख्या-2 से स्पष्ट होता है कि महिलाओं में प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने में सामाजिक-आर्थिक बाधा महसूस करने वाली महिलाओं में हाँ की संख्या 146 अर्थात 73 प्रतिशत है, जबकि सांस्कृतिक बाधा महसूस नहीं करने वालियों में नहीं की संख्या 52 है अर्थात 26 प्रतिशत है। वही महिलाओं में सामाजिक-आर्थिक बाधा महसूस में पता नहीं वालियों की संख्या 02 है अर्थात यानी 01 प्रतिशत है।

अतः स्पष्ट होता है कि अधिकांश बाधा महसूस करने वाली यानी हाँ महिलाओं को शामिल किया गया है।

तालिका संख्या- 3

मासिक धर्म के दौरान सेनेटरी पैड या सुरक्षित साधन का उपयोग के आधार पर

विचार	संख्या	प्रतिशत
हाँ	62	31.00
नहीं	138	64.00
कभी- कभी	10	05.00
कुल योग	200	100.00

तालिका संख्या-3 से स्पष्ट होता है कि अधिकांश 138 अर्थात 64 प्रतिशत मलिन बस्तियों की महिलाओं ने मासिक धर्म के दौरान सेनेटरी पैड या सुरक्षित साधन का उपयोग के में नहीं जवाब है, जबकि 62 अर्थात 31 प्रतिशत का जवाब हाँ है। 10 अर्थात 05 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि वे कभी-कभी ध्यान रखती है।

अतः स्पष्ट होता है कि अधिकांश 138 अर्थात 64 प्रतिशत मलिन बस्तियों की महिलाओं ने मासिक धर्म के दौरान सेनेटरी पैड या सुरक्षित साधन का उपयोग नहीं करती है। जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि उनमें प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता कम है।

तालिका संख्या- 4

प्रजनन स्वास्थ्य के महत्व एवं जागरूकता की जानकारी के आधार पर

विचार	संख्या	प्रतिशत
हाँ	52	26.00
नहीं	148	74.00
कुल योग	200	100.00

तालिका संख्या-4 से स्पष्ट होता है कि अधिकांश 148 अर्थात 74 प्रतिशत मलिन बस्तियों की महिलाओं ने प्रजनन स्वास्थ्य के महत्व एवं जागरूकता की जानकारी के आधार पर नहीं जवाब है, जबकि 52 अर्थात 26 प्रतिशत का जवाब हाँ है।

अतः स्पष्ट होता है कि अधिकांश 74 प्रतिशत मलिन बस्तियों की महिलाओं ने महिलाओं ने प्रजनन स्वास्थ्य के महत्व एवं जागरूकता की जानकारी का स्तर कम है।

तालिका संख्या- 5

गर्भावस्था के दौरान ए.एन. सी. एवं गर्भनिरोधक साधनों के प्रति जागरूकता

विचार	संख्या	प्रतिशत
हाँ	76	38.00
नहीं	119	59.5
जानकारी नहीं है	05	2.5
कुल योग	200	100.00

तालिका संख्या-5 से स्पष्ट होता है कि अधिकांश 119 अर्थात 59.5 प्रतिशत मलिन बस्तियों की महिलाओं में गर्भावस्था के दौरान ए.एन. सी. एवं गर्भनिरोधक साधनों के प्रति जागरूकता नहीं है, जबकि 76 अर्थात 38 प्रतिशत महिलाओं का जवाब हाँ है। 05 अर्थात 2.5 प्रतिशत महिलाओं को इस विषय में कोई जानकारी नहीं है।

अतः स्पष्ट होता है कि अधिकांश 59.5 प्रतिशत मलिन बस्तियों की महिलाओं में गर्भावस्था के दौरान ए.एन. सी. सेवाओं के प्रति एवं गर्भनिरोधक साधनों के प्रति जागरूकता का स्तर कम है।

निष्कर्ष :

मलिन बस्तियों की महिलाओं को लेकर समाजिक तौर पर अभी भी बहुत ज्यादा परिवर्तन नहीं हुआ है। लोग प्रजनन स्वास्थ्य को लेकर न जागरूक हैं और न शिक्षित मालूम होते हैं। हालांकि ये जरूरी है कि हम इस विषय पर सिलसिलवार तरीके से बात करें। जहां नारीवाद की पहली लहर मूल रूप में वोट देने के और प्रापर्टी के अधिकार में समानता के रास्ते में आने वाली कानूनी बाधाओं से लड़ना था, वहीं नारीवाद की दूसरी लहर में बहस का दायरा बड़ा परिवार में महिलाओं के साथ हो रहे भेदभाव, कार्यस्थल पर शोषण और प्रजनन अधिकार जैसे मुद्दे भी थे। लेकिन आज भी समाज में बहुत बदलाव देखने को नहीं मिलता है जिसका मूल कारण है इस विषय पर बातचीत का न होना। इस विषय पर जागरूकता की कमी। ऐसे में जरूरी हो जाता है कि इस विषय पर बातचीत हो। शिक्षा जो कि बदलाव का माध्यम है, वहां इस विषय पर परिचर्चा हो ताकि बदलाव संभव हो और यौन और प्रजनन मौलिक अधिकार के रूप में भी देखा जाए। महिला प्रजनन प्रणाली महिलाओं के स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें प्रजनन क्षमता, हार्मोनल संतुलन और समग्र स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण अंग और कार्य शामिल हैं। स्वास्थ्य को बनाए रखने और सामान्य प्रजनन संबंधी समस्याओं को रोकने के लिए इस प्रणाली की उचित देखभाल और ध्यान देना आवश्यक है। गरीब और हाशिए पर रहने वाली महिलाएं, जैसे कि अनुसूचित जाति और जनजाति की महिलाएं, अक्सर प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंचने में बाधाओं का सामना करती हैं। भौगोलिक दूरी, वित्तीय बाधाएं, और सामाजिक भेदभाव इसके मुख्य कारण हैं। गर्भावस्था और स्तनपान के दौरान

महिलाओं में पोषण संबंधी कमियां, जैसे कि एनीमिया और आयरन की कमी, मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालती हैं। महिलाओं के प्रजनन स्वास्थ्य पर उभरते हुए सरोकार एक जटिल मुद्दा है, जिसके लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच में सुधार, लैंगिक समानता को बढ़ावा देना, सामाजिक मानदंडों को बदलना, और महिलाओं को सशक्त बनाना, प्रजनन स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए महत्वपूर्ण कदम हैं। सरकार को राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति को प्रभावी ढंग से लागू करने और प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं में निवेश बढ़ाने की आवश्यकता है। इसके साथ ही, समुदाय स्तर पर जागरूकता अभियान चलाकर महिलाओं को उनके अधिकारों और स्वास्थ्य के बारे में शिक्षित करना भी आवश्यक है।

संदर्भ सूची :-

1. Pawar, D.H. and Mane, V.D. "Socio-Economic Status of Slum Dwellers with Special Reference to Women: Geographical Investigation of Author Details Kolhapur Slums." Research Front, vol.1, no.1, 2013, pp. 61-64.
2. Thimmanna. "Elderly Women in Slum Area of Bellary District: Problems and Challenges." Reviews of Literature, vol. 1, no. 12, 2014, pp. 1-9
3. Amirul Hasan, Md and Vandana Shukla. "Nutritional Status of Women Living in Slums in Allahabad City, Uttar Pradesh, India." International Journal of Food and Nutritional Sciences, vol. 2, no.1, 2013, pp. 84-88.
4. Ministry of Women and Child Development, Government of India. Annual Report on Integrated Child Development Services (ICDS). New Delhi.
5. Ministry of Health and Family Welfare, Government of India. National Family Health Survey (NFHS-4 & NFHS-5). International Institute for Population Sciences (IIPS), Mumbai, 2015–16, 2019–21.
6. NITI Aayog. National Nutrition Strategy. Government of India, 2017
7. Khandehroo M, Tavakoly Sany SB, Oakley D, Peyman N. Health Literacy Intervention and quality of life in Menopausal Women: A Randomized Controlled Trial. International Journal of Health Promotion and Education. 2020;1-13.
8. Birch, Rebecca and Gordon Gallup. 2004. "Pregnancy as a Motivation for Domestic Violence", Journal of Family Violence, 19,

pp. 243-247.

9. Cabrera, P.M. 2010. Intersecting inequalities. A review of feminist theories and debates on violence against women and poverty in Latin America. London: Central American Women's Network.
10. Mathur, Deepa (1992), Women, Family and Work, Rawat Publications, Jaipur.
11. P.I.B. (2019) Health scheme <https://pib.gov.in/press-release-share.aspx>
12. N.H.A. (2023). आयुष्मान भारत योजना, <https://ndhm.gov.in/>
13. National digital health mission (2023) index <https://www.makeinindia.com/national-digital-health-mission>

Email Id - Sheetal.jay27@gmail.com

Mob. 9102948345



अल्फा-बीटा-गामा : संवेदना का नवीन आख्यान

डॉ. मिन्नु जोसेफ

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
सेंट. तेरेसास कॉलेज (स्वायत्त) एर्णाकुलम।

मानवेतर प्राणी भी हमारे समाज का एक अभिन्न अंग हैं। उनका इस संसार पर उतना ही अधिकार है जितना मानव का। अल्फा-बीटा-गामा, जो 2022 में प्रकाशित हुआ, हिंदी साहित्य में अब तक के उपन्यासों से बिल्कुल अलग विषयवस्तु पर आधारित है। इस उपन्यास के सभी प्रमुख पात्र कुत्ते हैं। इस उपन्यास का मुख्य संदेश यह है कि यह जगत केवल मानव का नहीं, बल्कि जानवरों का भी है। जानवरों पर लिखने के लिए लेखक में अत्यधिक संवेदनशीलता आवश्यक होती है। नासिरा शर्मा ने कुत्तों के मनोविज्ञान को गहराई से समझकर इस उपन्यास का सृजन किया है। इस उपन्यास को पूरी तरह से समझने और सराहने के लिए जानवरों के मनोविज्ञान की समझ होना महत्वपूर्ण है। यह उपन्यास जानवरों और उनके जीव-जगत को जानने के इच्छुक पाठकों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होता है। यदि पाठक जानवरों में रुचि रखते हैं, तो इस उपन्यास को पढ़ते समय उन्हें यह महसूस होगा कि इन कुत्तों को कहीं न कहीं, किसी न किसी समय देखा या अनुभव किया है। यह उपन्यास कुत्तों पर केंद्रित होते हुए भी वर्तमान भारत की कई राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक समस्याओं की झलक प्रस्तुत करता है। साहित्य में जानवरों को सदियों से प्रतीकों के रूप में इस्तेमाल किया गया है। लेकिन इस उपन्यास में जानवरों को जानवर के रूप में और उनकी समस्याओं को उसी दृष्टिकोण से देखना अधिक उचित होगा। उपन्यास में एक गली और वहाँ रहने वाले हर वर्ग के मनुष्यों और कुत्तों के संबंधों का चित्रण है। साथ ही, उनके बीच टकराव उत्पन्न करने वाली घटनाओं को भी उजागर किया गया है।

बहुत कम लोग जानते हैं कि पशु विज्ञान के आधार पर कुत्तों के चार प्रकार होते हैं : 1. घरेलू कुत्ते (Domestic Dogs) : ये वही कुत्ते हैं जिन्हें हम अपने घरों में पालते हैं। 2. फैमिली डॉग (Family Dogs) : ये कुत्ते घरों के आस-पास मंडराते रहते हैं और उन घरों पर आश्रित होते हैं। 3. कम्युनिटी डॉग (Community Dogs) : ये कुत्ते एक समुदाय के भीतर रहते हैं और वहीं से अपना गुजारा करते हैं। 4. स्ट्रे डॉग (Stray Dogs) : ये कुत्ते स्वतंत्र होते हैं और आमतौर पर मानव संपर्क के बिना जीवित रहते हैं। पहले तीन प्रकार के कुत्ते मानव संपर्क के बिना जीवित नहीं रह सकते। लेकिन आमतौर पर दूसरे, तीसरे और चौथे प्रकार के कुत्तों को लोग 'स्ट्रे डॉग' कह देते हैं, जिससे इनके बीच का अंतर नहीं समझा जाता। दूसरे और तीसरे प्रकार के कुत्ते भोजन और प्रेम के बदले उस क्षेत्र की चौकीदारी करते हैं। वहीं चौथे प्रकार के कुत्ते, जो आक्रामक होते हैं, अक्सर

अतीत के किसी आघात (ट्रॉमा) या इंसानों के बुरे व्यवहार के कारण उन्हें अपना शत्रु मानते हैं। इन कुत्तों का उपन्यास अल्फा-बीटा-गामा में विस्तार से वर्णन किया गया है।

उपन्यास का शीर्षक 'अल्फा-बीटा-गामा' पुरुष-सिद्धांतों (Male Archetypes) पर आधारित है, जो विशेष रूप से जानवरों, खासकर भेड़ियों के व्यवहार के अध्ययन से निकला है। कुत्ते भूरे भेड़ियों के वंशज हैं। यह अवधारणा लोगों को उनके व्यक्तित्व और स्वभाव पर नियंत्रण समझाने का एक तरीका है। अल्फा, बीटा, गामा, ओमेगा और सिग्मा जैसे समूहों का व्यवहार दर्शाता है : **अल्फा** : आत्मविश्वासी नेता। **बीटा** : उनका अनुसरण करने वाले। **गामा** : अल्फा बनने की कोशिश करने वाले। उपन्यास यह दिखाता है कि जैसे कुत्ते हैं, वैसे ही मानव हैं। दोनों के स्वभाव और व्यवहार में गहरी समानता है। यह संशोधन पाठ को अधिक स्पष्ट, व्यवस्थित और व्याकरणिक रूप से सटीक बनाता है।

पशु चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में भारत अभी भी बहुत पीछे है। आज भी कई पशु-रोगों के लिए हमारे पास दवाएं उपलब्ध नहीं हैं। यह पशु चिकित्सा क्षेत्र की एक बड़ी कमजोरी है। इसके अलावा, कई मिथ्या धारणाओं ने मानव और जानवरों के संबंधों में दरार उत्पन्न की है। समाज में लोगों के विभिन्न दृष्टिकोण हैं। कुछ लोग कुत्तों से प्यार करते हैं और उनके प्रति सहानुभूति रखते हैं। वहीं, कुछ लोग ऐसे हैं जो अपने पालतू कुत्तों को प्यार करते हैं, लेकिन बाहर के सामूहिक कुत्तों (कम्युनिटी डॉग्स) से नफरत और घृणा करते हैं। ऐसे लोगों के लिए विदेशी नस्ल के कुत्ते ही उनकी प्रतिष्ठा और शोहरत को बढ़ा सकते हैं, जबकि देशी कुत्तों की अपनी विशेषताएं और खूबियां हैं। मानव, जो स्वयं भेदभावपूर्ण मानसिकता के साथ जीता है, कुत्तों के बीच भी भेदभाव करता है। उपन्यास का एक पात्र ब्रिगेडियर, अपने रॉटवीलर कुत्ते 'बुलेट' और देशी कुत्तों को अलग-अलग नजरिए से देखता है। यह दिखाता है कि मनुष्य की भेदभाव पर आधारित मानसिकता कैसे काम करती है। नस्ल के आधार पर वह न केवल कुत्तों, बल्कि अन्य जानवरों, जैसे बिल्लियों, के प्रति भी भिन्न व्यवहार करता है। उपन्यास में यह भी कहा गया है कि 'कुत्ते न तो अखबार पढ़ते हैं और न ही समाचार देखते हैं।' वे दुनिया को अपने नजरिए से देखते हैं।

उपन्यास में यह विचार प्रस्तुत किया गया है कि कुत्तों का इंसानों के प्रति क्या दृष्टिकोण हो सकता है और क्या होना चाहिए। जैसे हम कुत्तों को 'चौपाया' कहते हैं, उसी प्रकार उपन्यास के कुत्ते इंसानों को 'दोपाया' कहते हैं। इसका अर्थ है कि जैसे इंसानों के पास कुत्तों के लिए कोई विशेष शब्द नहीं है, वैसे ही कुत्तों के पास भी इंसानों के लिए कोई विशेष शब्द नहीं है। उनके लिए इंसान एक अलग प्रजाति हैं। यह संशोधित पाठ अधिक प्रभावी और स्पष्ट है, जो पाठक को विषय को बेहतर ढंग से समझने में मदद करेगा।

ब्रिगेडियर लाल एक फौजी थे, जो अनुशासन में अटूट विश्वास रखते थे। वे खुद को दूसरों से अलग और श्रेष्ठ मानते थे, यानी वे सिविलियंस (साधारण नागरिकों) को अपने से कमतर और खुद को फौजी मानते थे। उनका व्यवहार और सोच इसी भेदभाव पर आधारित था। उनके बेटे का कुत्ता 'बुलेट' उनका सबसे करीबी साथी था। बुलेट कैंसर से पीड़ित था, और ब्रिगेडियर उसका बहुत ध्यान रखते थे। हालांकि, ब्रिगेडियर एक पशु-प्रेमी (एनिमल लवर) नहीं थे, क्योंकि वे देशी कुत्तों से गहरी घृणा करते थे। उपन्यास के आरंभ में ही देशी कुत्तों के प्रति उनके मन में घृणा को उजागर किया गया है। उनके अनुसार, देशी कुत्ते और उनसे जुड़े गली के लोग 'कीटाणु के वाहक' हैं। उनका कहना था, "ये सिविलियंस—न अनुशासन है इनमें, न सफाई से रहते हैं।

जिधर देखो, ढेरों घूमते कुत्ते, जो अपने शरीर में कीटाणु लेकर फिरते हैं। ... कब समझेंगे ये हलवाई और ढाबे वाले कि ये देसी कुत्ते बिमारी व कीटाणु के वाहक हैं? सोच ऐसी कि जैकरसल को देसी कुत्ते से मिला रहे हैं।”¹ ब्रिगेडियर बहुसंख्यक भारतीयों की तरह देशी कुत्तों से नफरत करते थे। उनके अनुसार, गली में रहने वाले सिविलियंस और आवारा कुत्तों में कोई अंतर नहीं था। उनके दृष्टिकोण में दोनों ही अनुशासन और सफाई से वंचित थे। उनकी यह घृणा तब सामने आई जब गली के पाँच चौकीदार कुत्तों ने बुलेट को घेर लिया और भौंकने लगे। ब्रिगेडियर ने गुस्से में छड़ी उठाकर उन पाँचों कुत्तों पर हमला किया। इस घटना ने पूरे कुत्ते समाज को झकझोर कर रख दिया। गली के दो कुत्ते, चिरकुट और लेंडी, इस हमले से डरकर एक नए बन रहे मकान में जाकर छिप गए। वे वहाँ दो दिन तक भूखे-प्यासे छिपे रहे। आखिरकार, जब भूख असहनीय हो गई, तो दोनों हिम्मत करके बाहर निकले और ढाबे के बाहर रखे बर्तन का धोवन पी लिया। पाँच चौकीदार कुत्तों में से एक कुत्ता इस हमले में बच नहीं पाया।

गली का कूड़ेदान, जिसे गली के कुत्ते ‘डॉग होटल’ कहते थे, उनके जीवनयापन का मुख्य सहारा था। लेकिन अचानक सफाई अभियान के चलते इस कूड़ेदान को साफ कर दिया गया। इस अप्रत्याशित बदलाव ने कुत्तों और सूअरों जैसे बेसहारा जानवरों की स्थिति को बिगाड़ दिया, क्योंकि ये जानवर इसी कूड़ेदान से अपनी भूख मिटाते थे। गाय और सूअर जंगल से अपनी भूख मिटा सकते थे, “मगर प्रश्न तो सामने यह था कि कुत्ते बकरियाँ नहीं थे।”² इंसानों की तरह बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार कुत्ते आसानी से अनुकूल नहीं हो पाते। कुत्तों और बिल्लियों का रोना अक्सर अपशकुन माना जाता है। अगर कोई कुत्ता या कुतिया किसी गाड़ी के नीचे आ जाते हैं या किसी दुर्घटना का शिकार होते हैं, तो उनकी कराह इन्सान के लिए सिर्फ भौंकने की आवाज होती है। लेकिन लेखक के अनुसार, भौंकना कुत्तों की भावनाओं को व्यक्त करने का एक माध्यम है। एक घटना में, एक कुतिया का बच्चा स्कूटर के नीचे दबकर मर गया। इस दर्दनाक घटना पर उसकी करुण विलाप सुनकर गली के सभी कुत्तों ने भौंकना शुरू कर दिया। इससे परेशान होकर तिवारी जी ने फ्रिज की सारी बर्फ एक बाल्टी में भरकर उन कुत्तों पर उंडेल दी। यह सर्दी का मौसम था, और इस घटना ने कुत्तों के भीतर गुस्से को और भड़का दिया, विशेष रूप से जवान कुत्तों में बदले की आग सुलगने लगी। चौकीदार कुत्तों में से एक की मृत्यु ने इस गुस्से को हद से ज्यादा बढ़ा दिया। “सबने ठान ली थी कि अब इन दो पैर वालों से इस अपमान का बदला चुन-चुनकर लेना है— अपनी भूख का, अपने ऊपर होने वाले अत्याचार का और भौंकने पर अंकुश लगाने का।”³

दूसरी ओर, खान साहब का पारसी बिल्ला जमशेद, जो हीट के समय विशेष प्रकार की आवाज निकालता था, अंधविश्वासों के कारण मारा गया। आसपास के लोग इसे अपशकुन मानकर बिल्ले को मारने के लिए उतावले हो गए। इंसान, जो खुद को सबसे समझदार प्राणी मानता है, अंधविश्वासों के कारण जानवरों पर अत्याचार करने से भी नहीं हिचकता। इंसानों के लिए, कुत्तों की भूख के लिए की गई फरियाद भी अपशकुन लगती है। इन घटनाओं और अत्याचारों के बावजूद, हमारे समाज में जानवरों की हिस्सेदारी का कोई विशेष ख्याल नहीं रखा जाता। यही कारण है कि गली में सफाई अभियान अधिक दिनों तक नहीं चल पाया, और जल्द ही ‘डॉग होटल’ (कूड़ेदान) पहले की तरह कचरे से भर गया। डॉग होटल में एक बूढ़ी कुतिया को प्लास्टिक थैले के अन्दर से इन्सानी बच्चा मिलता है। बदले के आग से अंधे लडाकू जवान कुत्ते इस बच्चे को मिल बाँटकर खाने के लिए

कहते हैं और इसके लिए दूसरे कुत्तों से लड़ाई भी करते हैं। लेकिन किसी न किसी प्रकार चिरकुट और लेंडी मिलकर बच्चे को कार्तिक के एनिमल फार्सट तक पहुंचाते हैं। इस घटना का पत्र और टेलीविजन के द्वारा इतना प्रचार हुआ कि स्कूलों और सोसाइटी में बहुत सारे जानवरों से सम्बन्धित फिल्म दिखाना शुरू किया गया। यह है हमारी संवेदना का अगला पक्ष जहां हमें करना कुछ और है करते कुछ और है। वह भी विदेशी कुत्तों के फिल्म। लेकिन वहां के मजदूर उन्हीं कुत्तों को देखना चाहते थे जो उनके आसपास रहते थे। देखने वालों की संख्या कम हुई तो कमेटी वाले बैनरों में इस प्रकार लिखा कि “महाभारत में युधिष्ठिर का जो अंत तक साथ निभाता है, वह भी एक कुत्ता था”⁴ यह देखकर मजदूर फिल्म देखने के लिए पहुंच जाते हैं “... एक सच यह है कि धरती किसी एक की नहीं है। जीव—जन्तु, इंसान, जानवर, नदी, पर्वत, समुद्र भी यहाँ हैं, उसमें हमारी बराबर की हिस्सेदारी है, मगर इंसान ने अपनी भागीदारी बढ़ा ली है जो दूसरों के लिए दुःख का कारण बनती है।”⁵ उन एनिमल वर्क्स ने काफी हद तक जनता को जागृत किया। आज भी बहु संख्यक भारतीयों को यह नहीं पता कि देशी कुत्तों की भी एक ब्रीड है और जिसका नाम ‘इंडियन परिया’ है। इस ब्रीड के कई खूबियाँ हैं। इसके अलावा कई भारतीय कुत्ते हैं जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अग्रणीय हैं। उपन्यास के एक अंश पर ढाबे वाले कुत्तों पर बात कर रहे थे तो कुछ मजदूर यह मानने के लिए भी तैयार नहीं थे कि राजपालयम एक भारतीय नस्ल का कुत्ता है।

गुस्से में अंधे होकर गली के जवान लड़ाकू कुत्तों ने तिवारी जी के पूरे परिवार को काट लिया। लेकिन इसका परिणाम कुछ भयंकर था। सभी कुत्ते जो इन सबसे अनजान थे मारे गये। “पहले बीट पुलीस से बातचीत हुई और अमावयस्का की रात तयशुदा कार्यक्रम के अनुसार दर्जन भर कुत्तों का पटाखों की आवाज के साथ इनकाउंटर कर दिया गया। लाशों को टेम्पो में भरकर जंगल की तरफ किसी गहरी चट्टानों के बीच फिंकवा दिया गया। पूरे मोहल्ले के कुत्ते तो खत्म तो नहीं हुए, मगर गली के आस—पास के कुत्तों को साफ कर दिलों में शांति छा गई कि अब उनकी फैमली सेफ हो गई।”⁶ इंसान को रेबीज होने के डर मात्र से इतने जानवरों को मार फेंकना भारत में एक आम बात है। हमारी योजनाओं तक में हम इन्हें स्थान नहीं देते। हम इंसान सिर्फ इंसान के लिए योजनाएं बनाती हैं। दिन—ब—दिन हम विकास की नई—नई दिशाएँ ढूँढ निकाले जा रहे हैं जबकि हम अपनी मानवेतर साथियों को विकास की पड़ाव में कहीं दूर छोड़ दिया है। मानवेतर समाज और मानव समाज को एक साथ रहने के लिए कुत्तों को समय पर टीका लगाना जरूरी है। कुत्तों के लिए जो बेहतरीन अस्पताल मौजूद है वह केवल उच्च वर्ग ही अफोर्ड कर पाते हैं। सड़क पर आवारा घूमने वाले कुत्तों को टीका लगाने का कानून होने के बावजूद भी सरकार द्वारा इसके लिए कोई पद्धति या कार्यक्रम उपलब्ध नहीं किया गया है। देसी कुत्तों के आबादी रोकने के लिए इनका ऑपरेशन किया जाता है जबकि विदेशी कुत्तों के लिए कोई पाबंदी नहीं है इनका एक—एक पिल्ला लाखों में बिकते हैं मन भरने के बाद इन्हें भी सड़कों पर छोड़ दिया जाता है। जबकि कुत्तों को पालना एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। हमारे देश में ज्यादातर बच्चों के लिए घर की पालतू जानवर एक खिलौने के समान हैं। बहुत ही कम लोग बच्चों को यह नहीं सिखाते हैं कि ये मानवेतर प्राणी भी इस दुनिया के उतने ही हकदार हैं जितने हम हैं। उपन्यास में एक ऐसा दृश्य है जहाँ कुत्ते के पिल्ले गन्दी नाली की ठंडे पानी में गिरकर छटपटा रहे थे। “चलते—चलते सोए—लोटे कुत्ते को ठोकरें मारना या चलते हुए कुत्तों को पीछे से लात घुमाकर मारना किशोरों की शरारतों में शामिल था, मगर किसी भी बन्दे का यह कर्तव्य नहीं बनता था

कि एक निरीह जीव को बाहर निकाल दे।”⁷ हालात बहुत बदल गया है। मानव को न अपनों का फिक्र है न अपने आसपास रहने वाले जीव जन्तुओं का।

इस डॉग होटल में एक बूढ़ी कुत्तिया को एक प्लास्टिक के थैले में लिपटा हुआ एक मानव शिशु मिला। गुस्से और बदले की भावना से अंधे जवान कुत्तों ने इस शिशु को खाने की कोशिश की और इसके लिए आपस में लड़ाई भी की। लेकिन चिरकुट और लेंडी नाम के कुत्तों ने साहस दिखाकर उस बच्चे को बचाया और किसी तरह कार्तिक के एनिमल वर्क्स तक पहुंचा दिया। इस घटना को मीडिया और अखबारों में इतना प्रचारित किया गया कि स्कूलों और सोसाइटियों में जानवरों से संबंधित फिल्में दिखाना शुरू हो गईं। लेकिन इनमें अधिकतर विदेशी कुत्तों पर बनी फिल्में थीं। स्थानीय मजदूर ऐसे कुत्तों को देखना चाहते थे जो उनके आसपास रहते थे। जब दर्शकों की संख्या कम हो गई, तो आयोजकों ने एक बैनर लगाया : ‘महाभारत में युधिष्ठिर का जो अंत तक साथ निभाता है, वह भी एक कुत्ता था।’ यह देखकर मजदूर फिल्म देखने के लिए आने लगे। उपन्यास में यह सच उजागर किया गया है कि, ‘धरती किसी एक की नहीं है। जीव—जंतु, इंसान, जानवर, नदी, पर्वत, और समुद्र सबका इस पर समान अधिकार है। लेकिन इंसान ने अपनी भागीदारी बढ़ा ली है, जो दूसरों के लिए दुख का कारण बनती है।’ इस जागरूकता अभियान के जरिए लोगों को काफी हद तक संवेदनशील बनाने का प्रयास किया गया। आज भी, बहुसंख्यक भारतीय यह नहीं जानते कि देशी कुत्तों की भी एक ब्रीड है, जिसे ‘इंडियन परिया’ कहा जाता है। इस ब्रीड की कई अनूठी खूबियां हैं। इसके अलावा, भारत के कई अन्य कुत्ते अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अग्रणी माने जाते हैं। उपन्यास में यह भी दिखाया गया है कि जब ढाबे पर कुत्तों के बारे में चर्चा हो रही थी, तो कुछ मजदूर यह मानने को तैयार नहीं थे कि ‘राजपालयम’ एक भारतीय नस्ल का कुत्ता है।

इतिहास साक्षी है कि सदियों से कुत्ता इंसान का सहयात्री रहा है। दोनों ने एक साथ बहुत कुछ बनते बिगड़ते देखा है। फिर भी इंसान इन कुत्तों को अपनी हैसियत से अलग घृणा भरी दृष्टि से देखते हैं। चिरकुट और लेंडी ढाबे के चौकसी करते थे और वहीं घूमते फिरते थे। वहाँ के रहने वाले हैं—क्लास लोग जब घर की नालियाँ खुला छोड़ा देते थे, तो ढाबे का धोवन और नाले का पानि एक साथ बहने लगता था। जिससे चिरकुट और लेंडी भूखे रह गये। इंसान की साफ—सफाई की कमी अन्य जीव—जन्तुओं पर भी असर डालती है। प्लास्टिक जैसे खतरनाक पदार्थों के कारण हर साल हजारों जानवरों की मृत्यु होती है। यह उपन्यास कुत्तों के आजादी के ख्याल को भी बयान करते हैं। मोती एक आजाद ख्याल का कुत्ता है। जो किसी भी प्रकार के बंधन को सहने के लिए तैयार नहीं है। वह दुम हिलाकर किसी के भी पीछे नहीं भागता था, न गंदा खाना खाता था। कुत्तों में भी कई स्वभाव वाले होते हैं इस पर उपन्यासकार लिखते हैं “हर कुत्ता वफादार, निष्ठावान, चुस्त—चतुर और तेजबुद्धि वाला नहीं होता है। इंसानों की तरह उनमें भी गुण और अवगुणों की अलग—अलग डिग्री होती है।”⁸

कार्तिक पहले नेवी में थे प्री रिटायरमेंट लेकर स्ट्रीट डॉग्स और देशी कुत्तों की सेवा में ‘एनिमल फास्ट’ नामक एक संस्था चला रहे थे। ब्रिगेडियर लाल को यह जानकर धक्का लगा कि देश की रखवाली करने वाला एक फौजी सड़क छाप कुत्तों के बीच समय बर्बाद कर रहा है क्योंकि उनकी दृष्टि में ये कुत्ते समाज और देश के लिए किसी काम का नहीं था। डॉ. शशिधर और कार्तिक बिना किसी आशा के इन सड़क छाप आवारा कुत्तों की देखभाल कर रहे थे।

शहीनभाग धरना, दिल्ली के दंगे और लॉकडाउन तीनों घटनाओं का प्रभाव उपन्यास में है। कोरोना के

समय में लॉकडाउन के प्रभाव कुत्ते और इनसान के लिए किस तरह था? इन घटनाओं के कारण कुत्तों पर क्या असर पड़ा है? इस पर भी उपन्यास में चर्चा है। कोरोना समय के अनेक घटनाओं का बेहद संवेदना के साथ उल्लेख उपन्यास में है। इसलिए यह महज कुत्तों पर आधारित उपन्यास नहीं है। इसमें कोरोना काल के दुरुखद घटनाओं पर भी टिप्पणी की गई है। कोरोना समय के राजनीतिक स्थिति पर व्यंग्य करते हुए लेखिका ने लिखा है कि “जिस आर्थिक संकट से देश और देशवासी गुजर रहे थे, उस संकट काल में भी चुनाव हुआ।...जब समय नेकी और इबादत का होना चाहिए था, तब सियासत के खेल बड़ी मुस्तैदी से खेले जा रहे थे।”⁹ कोरोना और लॉकडाउन की भीषणता और कष्ट से पीड़ित समाज में सबसे ज्यादा कुत्तों और सामान्य मजदूरों के वर्ग ही प्रमुख थे। मजदूर तो यह जानते थे कि आखिरकार क्या हुआ है। कुत्ते सिर्फ यही देखते थे कि अचानक सब कुछ बंद हुआ होटल, ढाबे दूकानें...सब कुछ। भूख मिटाने का कोई चारा नहीं था। लोग घर से बाहर नहीं निकलते थे, सड़कों पर गाड़ियों के शोर नहीं थे, लोग चुप-चुप कर बाहर निकलते थे। लेकिन एक दिन अचानक इंसानों ने थाली जोर-जोर से पीट कर बाहर जुलूस निकाला और जोर-जोर से ‘कोरोना गो’ के नारे लगाना शुरू किया। कभी अचानक अंधेरा छा जाता है और फिर दीपों से सब कुछ जगमगा उठता है। कुत्ते जानते थे कि दीवाली तो नहीं थे। “पांच मिनट का यह शोर उनके लिए उतना ही जान लेवा था जितना उड़ती चिड़ियों के लिए था। बिल्लियाँ, सूअर, गाय-सब अपनी जगहों पर थम-से गए। ध्वनि प्रदूषण ने आसमान सिर पर उठा लिया। कुछ उन्मत्त में आकर डीजे की तेज आवाज पर बाहर निकल नाचने लगे। किस बात का उत्सव था? इस उत्साह से भयभीत कुत्ते कुछ समझ न सके। जब खुशियाँ मनाकर लोग घरों से चले गए तो कुत्ते-बिल्ली बाहर निकले और घरों में जलती बिजली को देखकर समझ नहीं पाए कि यह कौन सी दीवाली है, जिसमें आतिशबाजी की जगह खुद इनसान अनार और पटाखे बन गए हैं?”¹⁰

आखिरकार वे यह निर्णय पर पहुंचते हैं कि शायद इंसान पागल हो गया है। कोरोना के समय कुछ लोग यह सोचने लगे कि कोरोना कुत्तों से फैलते हैं। वे भारी-भारी संख्या में भोजन में जहर मिलाकर इन कुत्तों को खिलाने लगे। भूख के तड़पते कुत्ते भोजन देखकर टूठ पड़ते थे। भोजन में जहर मिलाने वाले क्रूरतम प्रवृत्ति केवल इनसान ही कर सकते हैं। इस समय देश भर में ऐसी कई घटनाएँ हुई थी। कोरोना के वक्त कुत्ते ही नहीं बल्कि इनसान भी भूख से तड़प रहे थे। एक ऐसी दिल दहलाने वाली घटना का जिक्र उपन्यास में है। जहां एक आदमी भूख से तड़पकर मर जाता है। तो उसके अंतिम समय तक उसका वह तीन कुत्ते ही उसके साथ थे। शायद हमारे देश में ऐसी कितनी घटनाएँ हुई होंगी जिसकी खबरों से बाहर की दुनिया बेखबर रहा होगा। हमारे यहाँ ऐसे लोग भी हैं जो खुद कुत्तों से नफरत करते हैं और यही चाहते हैं कि दूसरे भी कुत्तों से इस तरह व्यवहार करें। ऐसे लोग सड़क के कुत्तों को खाना खिलाने के सख्त खिलाफ हैं। इंडिया के कई हिस्सों पर ऐसे कानून भी लागू हैं। जैसे कि सोसाइटी में स्ट्रे डॉग्स को खिलाना कानून अपराध है। भूखे को खाना खिलाना किस तरह से अपराध हो सकते हैं?

कोरोना के समय मानव जाति की अन्य जीवियों से घृणा पूरी तरह बाहर आया। इंफेक्शन के डर के मारे लोगों ने घर के आसपास एक परिंदे को भी रहने नहीं दिया। कुछ लोगों ने आसपास के सभी पेड़ों को और पेड़ों के घोंसले को नष्ट कर दिया और बाकी जानवरों को जहर देकर मार डाला। “उन विदेशी कुत्तों को लाखों में खरीदने वाले भी एकाएक अपना विवेक खो बैठे और बिस्तर पर साथ बिठाने वाले कुत्ते-बिल्लियों को बोरे में भर

छोड़ आए—नाले और नेहरों में।¹¹ भारत में विदेशी नस्ल के कुत्तों की हालत भी अच्छी नहीं है। बीमार होने पर पालने में दिक्कत होने पर लोग इन कुत्तों को घर से दूर कहीं फेंक देते हैं। इस पर लेखिका लिखते हैं कि “यह विडंबना ही तो है कि बरसों से साथ रहने के बावजूद इनसान जानवरों से डरता है और जानवर इनसानों से।”¹² स्वार्थता ने मानव को हर तरफ से असंवेदनशील बना दिया है।

यह कुत्ते हमारे सामाजिक कार्यक्रमों के चशमदीद गवाह होते हैं। पूर्वी दिल्ली में हुए एक सांप्रदायिक दंगे के चलते दो कुत्ते पागल हो जाते हैं और अपने मालिक को इस तरह मारते देखकर एक गर्भवती कुत्तिया का गर्भपात हो जाता है। और कुछ कुत्ते भयभीत होकर वहां से दौड़कर किसी अन्य मोहल्ले पर आ बैठते हैं और वहां की कुत्तों से कहते हैं कि “हम भी लड़ते हैं, अपनी गली में दूसरे को घुसने नहीं देते हैं। इस तरह की दोपायों की आपसी मुठभेड़ों के किस्से मेरे पिता भी सुनाते थे, मगर जब खुद अपनी आंखों से देखो तो उसका असर गहरा होता है।”¹³ आश्चर्य की बात यह है कि इनसान को अन्य प्राणियों से भी प्यार नहीं है और खुद इनसानों से भी प्रेम नहीं है।

हाल ही में भारत में G20 के दौरान कई लोगों को अपने स्थान से विस्थापित किया गया। गलियों में रहने वाले लोगों को वहां से हटाया गया। गलियों को ऊँचे-ऊँचे दीवारों से ढक लिया गया। बहुत सारे सामूहिक कुत्तों को पकड़कर उन्हें भी उनके स्थान से हटाया गया। इनमें बहुत संख्या में कुत्तों को मारे जाने की खबर भी बाहर आई।¹⁴ यह सब इसलिए किया गया ताकि उस जगह को सुन्दर दिखाया जा सके। इसी तरह की एक घटना का जिक्र उपन्यास में भी है। जहाँ भारत में अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप के दौरे के दौरान कई कुत्तों को उनके स्थान से विस्थापित किया जाता है। जिसके कारण पिल्ले अपनी माँ से अलग हो जाते हैं और कईयों को मार दिया जाता है। अतः मानव प्रगति के नाम पर अन्य प्राणियों और मानव जातियों के साथ कुछ भी करने के लिए उतारू हो गया है।

उपन्यास के अंत तक आते-आते, ब्रिगेडियर लाल जैसे अनुशासन पर विश्वास रखने वाले व्यक्ति, बुलेट के मौत के बाद कार्तिक और डॉ. शशिधर के प्रभाव से देशी कुत्तों के बीच रहकर उनकी समस्याओं को समझते हैं और अपनी राय व दृष्टि बदलते हैं। वे अपनी सारी सम्पत्ति देशी कुत्तों की सेवा के लिए उपयोग करने हेतु अनेक पद्धतियों का आविष्कार करते हैं।

अनुच्छेद 51(ए) के अनुसार जीवित प्राणी के प्रति सहानुभूति रखना भारत के सभी नागरिकों का मूल कर्तव्य है। 2009 में पारित 2013 में लागू हुए कानून के अनुसार सड़क के कुत्तों को मारना या उन्हें अपनी जगह से विस्थापित करना कानूनन दंडनीय जुर्म है। इन कुत्तों को बधिया करने के कुछ ही घंटों के बाद आवारा छोड़ दिया जाता है। इसलिए आज भी बहुत सारे कुत्ते इन्फेक्शन के कारण मर जाते हैं। यह क्रुएलिटी सिर्फ मानव ही करते हैं। कुत्तों के बिना इस दुनिया की कल्पना भी कितना दुखद है। सिर्फ और सिर्फ इंसान की कामना बेहद कष्टप्रद है। उपन्यास का अन्धत पाठक को सालों पहले की एक रचना ‘पूस की रात’ कहानी की याद दिलाता है जहाँ हल्कू जबरे को कस के पकड़ कर सोता हुआ दृश्य दर्शनीय है। कहानी में जबरा और हल्कू के बीच एक आत्मीय सम्बन्ध है। “ऐसी अनोखी दोस्ती ने उसकी रूह के सब दरवाजे खोल दिए थे। उसका एक-एक जर्जर हकीकी रौशनी से मुनव्वर हो गया था।”¹⁵ यह मानव और कुत्तों के बीच के सम्बन्ध का दस्तावेजीकरण करने वाली शुरुआती रचनाओं में एक है। उसी परंपरा का अगला और विस्तृत साहित्य है

अल्फा—बीटा—गामा। इस उपन्यास के अंत में भी ठीक इसी प्रकार का एक दृश्य है। जहाँ मोती नामक कुत्ता एक आम मजदूर के साथ लिपटकर सो रहा है। दोनों अपने परिवार से दूर हैं, भूखे हैं और दुखी भी हैं। फिर भी सर्दी के मौसम ने दोनों को एक दूसरे का सहारा बनाया।

निष्कर्ष: जानवरों से सम्बन्धित बहुत गहरी बातों को बेहद कुशलता के साथ नासिरा जी ने बुन रखा है। बिना किसी पूर्वाग्रह के साथ पढ़ने से ही पाठक मुद्दे के तह तक पहुँच पायेंगे। शायद पाठक के सोचने का अन्धाज भी बदल जाएगा और वह इस उपन्यास से अंदर से समृद्ध भी हो जाएगा। प्रचलित सहित्य में इस तरह के साहित्य न के बराबर है। अपनी शोहरद, गौरव और वंशावली बढ़ाए रखने के लिए लोग विदेशी कुत्तों के पीछे भाग रहे हैं। उपन्यास पाठक के सामने यह सन्देश रखता है कि कुत्ते सिर्फ हमारे शौक पूरा करने के लिए नहीं हैं। जिस तरह मानव उनके साथ प्यार करते हैं और जुड़ते हैं उसी प्रकार कुत्ते भी मानव से प्यार करते हैं और जुड़ते हैं। साहित्यिक किताब में इस तरह के एक मुद्दे को पहली बार विषय बनाया गया है। प्रस्तुत उपन्यास सोयी हुई मानवीय संवेदना को जगाते हुए देशी कुत्तों के महत्व को आगे रखते हैं। इस प्रकार उपन्यास में कुत्तों की समस्याओं के जरिए मानव समाज की असंवेदनशीलता को बयान किया गया है। यानि यह उपन्यास मानव समाज के लिए एक दर्पण है जिसमें मानव के क्रूरतम और असंवेदनशील प्रवृत्तियाँ प्रतिफलित होती हैं। साहित्य को व्यापकता और नयापन के साथ जिन्दा रखना है तो साहित्य को नए आयामों, नए समाज, नए विषयों से जोड़ना जरूरी है। इस दृष्टि में अल्फा बीटा गामा लेखिका की सूक्ष्म दृष्टि का धरोहर है।

सन्दर्भ :

1. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 10—11
2. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 17
3. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 19
4. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 101
5. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 101—102
6. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 50
7. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 29
8. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 176—77
9. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 206
10. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 156—57
11. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 189
12. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 51
13. नासिरा शर्मा, अल्फा—बीटा—गामा, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2022, पृ. 300
14. <https://weather.com/en&IN/india/news/news/2023&09&08&illegal&stray&dog&removal&from&delhi&streets&ahead&of&g20>
15. <https://www.rekhta.org/stories/poos&ki&raat&premchand&stories\lang/hi>

मो नं— 7456585177, ई—मेल— minnuj96@gmail.com



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 142-146

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

स्वामिविवेकानन्दस्य प्रारम्भिकजीवनम्

डॉ. बलवन्त सिंह वत्स

मकान न0 59, सैक्टर 04 अर्बन इस्टेट कुरुक्षेत्र पिन 136118

वंश परिचयः :-

निस्सारेऽपि ससारे संसारेऽस्मिन् भारतदेशः महान् खलु। भारते समये समयेऽनेकमहापुरुषाणां जन्म बभूव यैर्निजय शस्सुरभिर्मातृभूमेर्गौरवं वर्धितम्। एतादृशां महामनीषीनां कारणात् भारतदेश आध्यात्मिकक्षेत्रे विश्वगुरुः कथ्यते। प्राचीनमन्त्रदृष्टृभ्यो वैदिकर्षिभ्यो वर्तमानयुगे स्वामिविवेकानन्दस्वामिरामतीर्थमहर्षि— अरविन्दघोषादयो माहापुरुषा अस्याः परम्परायाः प्रतिनिधयः सन्ति।

बंगालभूमिर्बहुरसरुचिरा खलु। अस्यां भूमौ मातृभूमेः स्वाधीनताया उपासका नैकाः क्रान्तिकारिणो बभूवुः। अत्र ज्ञानविज्ञानक्षेत्रेऽपि नैकमेधाविनः पुत्रा अभवन्। समाजसुधारक्षेत्रे, साहित्यविज्ञाना— ध्यात्मिकक्षेत्रेषु बंगभूमेः सुपुत्राः सर्वेषु क्षेत्रेषु प्रमुखा अभवन्। वर्तमानयुगे चिन्तकः स्वामिविवेकानन्दमहोदयोऽत्रैव समुत्पन्नः।

कलकता :- कोलकतामहानगरी विंशतेः शताब्द्या आरम्भिकवर्षान्पर्यन्तं भरतस्य राजधानी बभूव। अस्या महानगर्याः सिमुलियानामकक्षेत्रे मार्गस्याभिधानम् (गौरमोहन—मुखर्जीस्ट्रीटः) खलु वर्तते। अत्रैव दत्तपरिवारस्य पारम्परिकनिवासस्थानमासीत्। विगतशताब्द्यामयं परिवार एकसम्पन्नपरिवाररूपेण प्रसिद्धः खलु। कोलकताराजधान्या उच्चतमन्यायालयस्य प्रख्यातवावकीलो राममोहनस्य काले सिमुलियाया दत्तकुटुम्बेन समाजे निजविशिष्टप्रभावः स्थापितः खलु। श्रीराममोहनदत्तः प्रसिद्धसफलश्चाधि— वक्ताभवत्। स धनार्जनं धनव्ययश्चोदारहृदयेन चकार। तेषां जीवनमैश्वर्यपूर्णमासीत्।

राममोहनस्य पुत्राभिधानं दुर्गाचरणदत्तो बभूव। तदा समयपरम्परानुसारं दुर्गाचरणाय सस्कृतस्य फारसीभाषायाश्च शिक्षा दत्ता अनेन सहैव दुर्गाचरणेनांगलभाषाया ज्ञानमप्यर्जितम् वावकीलकार्यं समारब्धश्च परन्तु पितुःपुत्रस्य स्वभावे महान्भेदः खलु। यत्र पितरि धनोपार्जनैश्वर्ययोजनमजात— प्रवृत्तिरासीत्। तत्र आभ्यां विरक्तो ननु स। प्रायः धनवतां गेहेषु पुत्राः सुखसुविधां प्राप्य विभ्रान्ता भवन्ति परन्तु दुर्गाचरणस्य स्वभावे धनैश्वर्ययोः कोऽपि मोहो नासीत्। तस्यानुरागो धर्मसत्संगौ प्रति बभूव। स वेदान्तिसाधुभिः प्रभावितः। तेषां प्रभावेणैव दुर्गाचरणः केवलं पञ्चविंशत्यवस्थायामेव सकलैश्वर्याणां परित्यागं विधाय सन्यासी बभूव। तदा दुर्गाचरणस्य पत्नी केवलमेकपुत्रवती माता बभूव यस्याभिधानं विश्वनाथ आसीत्। तदा विश्वनाथ एकवर्षीयो बालक आसीत्।

दुर्गाचरणस्य सन्यासग्रहणानन्तरं बालकविश्वनाथस्य पालनपोषणं श्री राममोहनेनैव कृतम्। कथ्यते यदेकदा दुर्गाचरणस्य पत्नी वाराणस्यां गता। तत्र विश्वनाथमन्दिरे निजपत्युर्दर्शनं सऽजातम्। तदनन्तरं सन्यासधर्मपरम्परानुसारं

द्वादशवर्षाणां पश्चात् दुर्गाचरणदत्त एक वारं निजगृहमागतवान् पुत्राय आशीर्वचांसि प्रदाय गतवान् च । तदनन्तरं केनापि स न दृष्टः । गृहगमनादेकवर्षपूर्वमेव तस्य पत्न्या स्वर्गवासो बभूव । पितरि सन्यासे सति मातरि स्वर्गे गते सति विश्वनाथस्य बाल्यकालो पितामहराममोहनदत्तस्य छत्रछायायां व्यतीतोऽभवत् । पितामहस्यानुसरणं कृत्वा सोऽपि वावकीलो बभूव । वावकीलेन सह स विद्याप्रेमी आसीत् । तेन फारसी— आंगलभाषेतिहासादीनां गूढाध्ययनं कृतम् । परिणामस्वरूपं तस्मिन्धार्मिकदृढता नावशिष्टा । तेन बाइबलमप्यधीतम् । अनेन स ईसाईधर्मस्य प्रशंसको बभूव । दिल्लीलाहौरलखनऊ—इलाहाबादीनामनेके सम्भ्रान्ता मलेच्छास्तस्य मित्राणि बभूवुः । स सर्वेषां धर्माणामादरं कृतवान् ।

विश्वनाथः सफलो वावकील आसीत् । तस्मै ऐश्वर्यजीवनं रोचते स्म । मित्राणां सहायताकरणं मुक्तहस्तेन व्ययकरणम्, प्रीतिभोजनं तस्य विशिष्टस्वभाव आसीत् । तस्य पत्नी भुवनेश्वरी एकपरम्परागतं धर्मप्रेमिहिन्दुनारी बभूव । सा केवलं बंगलाभाषायां लेखनं पठनञ्च ज्ञातवती । सा अत्यन्तमधुरस्व— भावासीत् । रामायण— महाभारतभागवतादीनां नियमितपाठकरणं, भगवतः शिवपूजादिकरणं तस्य दैनिकचर्यायामभिन्नांगानि बभूवुः । सा गम्भीरस्वभावशीलसम्पन्नादर्शगृहिणी आसीत् । कथ्यते यत् कापि प्रतिवेशिनी तस्याः सम्मुखे वाचालताकरणस्य साहसं न कृतवती ।

जन्म :-

सर्वथा सुखसम्पन्नतायां सत्यां दुःखमेकं तां तुदति स्म तस्याः कोऽपि पुत्रो नासीत् । पुत्रप्राप्तेरिच्छा अन्यसामान्यस्त्रीणामिव तां व्याकुलतां चकार । सा नित्यप्रतिदिनं कातरस्वरेण पुत्रप्राप्तये भगवन्तं प्रार्थयति स्म । पुत्रप्राप्तये सानेकव्रतोपासनानुष्ठानादीन् चकार किन्तु सफलता नाधिगता । दत्तपरिवारस्य कापि नारी वाराणस्यामुषितवती भुवनेश्वरी तामेकं पत्रं लिखितवती यत् विश्वनाथमन्दिरे नित्यपूजार्चनाया व्यवस्था करणीया । तत्पश्चात् सा स्वयमपि वाराणसीं गतवती । तत्र तया पूजार्चना समुचितरूपेण क्रियते स्म । पुत्रकामनया भुवनेश्वरी देवी निजगृहं प्रति गन्तुं विस्मृतवती तथा तत्रैव भगवतो विश्वनाथस्यार्चनायां निमग्ना ।

कथ्यते यत् भुवनेश्वरी एकस्मिन्दिवसे विश्वनाथस्य मन्दिरे पूजानन्तरं ध्यानमग्ना सऽजाता । सा प्रातः पूजायामुपविष्टा सांयकालः सऽजातः किन्तु तस्या ध्यानं न भग्नम् । तस्या बाह्यज्ञानं लुप्तमिव । तस्या मुखमण्डलेऽलौकिकतेजः चकासते स्म । रात्रौ तस्यामेवावस्थायां निद्रा प्राप्ता । स्वप्ने तया दृष्टं यत् कर्पूरगौरो भगवान् शिवस्तस्याः सम्मुखे स्थितः । तदनन्तरं भगवता शिवेन शिशुरूपं हितं तथा भुवनेश्वरीदेव्या अङ्के स्थितम् । अस्मिन्नेव काले भुवनेश्वर्या निद्रा भग्ना । तं दिव्यानन्दमनुभवानन्तरं यदा तस्याः निद्रा भग्ना सऽजाता तदा सूर्योदय अस्तङ्गतः । तस्मिन्नानन्दातिरेके सा हे शिव! हे शंकर! हे करुणामय! इति कथयन्ती पुनः पुनः भगवते शिवाय साष्टाङ्गप्रणामं कर्तुमारब्धवती । भुवनेश्वरी विश्वस्ता यत् साम्प्रतं तस्याः पुत्रप्राप्तेरिच्छा सम्पूर्णा भविष्यति । केषाञ्चिद्विद्वसानन्तरं सा प्रत्यागतवती । शनैः शनैः कालो यातः जनवरीमासस्य द्वादशदिनांके अष्टादशशताधिकत्रिषष्ट्यां प्रातः त्रयस्त्रिंशदकालोत्तर— षड्वादनकाले तस्याः पुत्रस्य जन्म सऽजातम् । तस्मिन्दिवसे बंगलवर्षस्य पौषसंक्रान्तिरासीत् । शिशुजन्मकाले सूर्योदयस्य भाव्यकाल आसीत् । इयं संक्रान्तिर्विशिष्ट— महत्त्वपूर्णा मन्यते । जनाः स्नानार्थं गच्छन्ति स्म, गृहे गृहे शंखध्वनिर्गुञ्जति स्म । तदैव पुत्रजन्मोपलक्ष्ये श्रीविश्वनाथस्य गेहेऽपि शंखध्वनिः प्रारब्धः । शङ्खानांसमवेतस्वरेण नवजातशिशोरभिनन्दमिव कुर्वन्ति स्म सर्वे । मातुर्भुवनेश्वर्याः पुत्रोऽयं स्वामिविवेकानन्दरूपेण विश्वविख्यातः सऽजातः ।

अस्य नवजातशिशोराकृतिर्निज पितामहदुर्गाचरणमिवासीत् । अतः नामकरणदिवसे केचिज्जनाः परामर्शं दत्तवन्तो यत्तस्य बालकस्य नाम दुर्गादासो भवेत् परन्तु माता भुवनेश्वरीदेवी इदन्नाम न स्वीकृतवती । सा पुत्रं भगवतः शिवस्य

वरस्यपरिणामं मन्यते स्म । अतः सा कथितवती यत्बालकस्य नाम वीरेश्वरो भवेत्मातुर्मतं सर्वैः स्वीकृतन्तथा बालकस्य नाम 'वीरेश्वरः' इति निश्चितम् । इदन्नाम किञ्चिल्लम्बमिवासीत् । अतः पारिवारिकसदस्यास्तं बालकं बिले इति कथयितुमारब्धवन्तः । तत्पश्चात्परम्परानुसारमन्नप्राशनकाले बिले इत्यस्य स्थाने नरेन्द्रः इति नवीननामकरणं सञ्जातम् । मातुर्भुवनेश्वर्या बालकोऽयं गेहे बिले इति तथा समाजे नरेन्द्रनाथः प्रचलितो बभूव ।

चञ्चलो बालको नरेन्द्रनाथः :-

शनैः शनैः बालको नरेन्द्रनाथो वर्धितस्तस्य चाञ्चल्यं वर्धितम् । बाल्यकालस्य चञ्चलता परमावस्थया सह उदण्डतारुरूपे परिवर्तिता । नरेन्द्रे भयस्य कोऽपि प्रभावो नासीत् । एकदा तस्य व्यवहारेण पीडिता माता कथितवती यन्महादेव स्वयन्नागत्य न जाने कुतो भूतः प्रेषितः । बालको नरेन्द्रः स्वयं शिवस्यांशो बभूव अथवा शिवगणस्यांश इति तु स्वयं शिव एव जानाति किन्तु तस्य स्वभावोऽतीवोदण्ड आसीत् । तस्योदण्डताया दुखी भूत्वा शिवशिवेति कथयन्ती मता तस्य मस्तकोपरि जलं समर्पितवती ।

बालको नरेन्द्रनाथो मातुः कार्ये बाधामुपस्थाप्य बहुधा रोदनं कृत्वा गृहं कोलाहलेन गुञ्जायमानं कृतवान् । एतादृशेन माता खिन्ना भूत्वा कथितवती यत्पश्य बिले! यदि त्वमधुनोधमं करिष्यसि तदा महादेवस्त्वां कैलासे आगमनायावरोत्स्यति । मातुर्वचनं श्रुत्वा नरेन्द्रो निर्निमेषभयभीतः— दृष्ट्या मातरं द्रष्टुमारब्धवान्तथा शान्तो भूतः स्म ।

माता विश्वसिति स्म यन्नरेन्द्रस्य जन्म शिवस्य प्रसादात्भूतम् । किन्तु इदं कस्यापि सम्मुखन्न कथितवती । नेदं कथयति स्म यत्बालकः शिवशिवेति कथनानन्तरं जलसेचनेन शान्तो भवति अथवा शिवस्त्वां कैलासे न नेष्यतीति कथनानन्तरं न रोदिति स्म ।

नरेन्द्रनाथो निज पितरोस्तृतीयासन्ततिरासीत् । ज्येष्ठे द्वे भगिन्यौ आस्ताम् । चपलो नरेन्द्रो द्वे भगिन्यौ तुदितवान् । द्वे भगिन्यौ यदा कदा क्रोधे तन्ताडयितं गतवत्यौ तदा स धावित्वा नालिकायां गतवान्निजशरीरे पङ्कं संल्लिप्य उच्चैः हसन् कथितवान्यदधुनागम्यतम् । तदा भगिन्यौ नागतवत्यौ तदा नरेन्द्रस्तालिकावादनङ्कर्तुमारब्धवान् ।

तस्मिन्काले अश्वशकटिकाप्रचलनमासीत् । नरेन्द्राय वग्ध्यामुपवेशनं रोचते स्म । मातुरङ्के उपविश्य पार्श्वस्थानि वस्तूनि कौतुहलेन पश्यति स्म । अश्वशकटिका नरेन्द्राय कियती प्रियासीदस्यानुमानं केवलमेकघटनानुसारं सरलतयानुभूयते । एकदा पिता तमपृच्छत्यत्युवा भूत्वा त्वं किं भविष्यसि तदा स उत्तरितवान्नहमश्वचालको भविष्यामि मातूरामायणमहाभारतादीनां कथाश्रवणं तस्मै विशिष्टं रोचते स्म । तस्य गेहे प्रायः इमाः कथा अभवन् । या तु कापि वृद्धा या तु स्वयं भुवनेश्वरी देवी कथां पठितवती । आश्चर्यमिदं यत्कथासमये नरेन्द्रः शान्तमनसोपष्टिवान् । तस्मिन्काले प्रतीयते स्म यत्कोऽपि भक्तः कथां शृणोति । रामायणस्य कथायाः स इयान्प्रभावितो यदेकस्मिन्दिवसे स्वयमापणकं गत्वा भगवतीसीताया रामस्य मूर्तिं क्रीत्वानीतवान् तथा छदि (प्रथमतले) निर्मिते कक्षे मूर्तेः समक्षं ध्यानमग्नो भूत्वा स्थितवान् ।

नरेन्द्रनाथस्य गृहे एकोऽश्वचालको बभूव । एकदा तस्य विवाहस्य वार्ता प्रचलिता । स विवाहेन सहमतो नासीत् । अतः स वैवाहिकजीवनस्य दोषाणां व्याख्यां कृतवान् । बालकनरेन्द्रस्तत्रैवोपविश्य सर्वं श्रुतवान् । अनेन सोऽत्यधिकः प्रभावितोऽभवत् । तथा मातरमुवाच मातः! अहं सीतारामं कथं पूजयेयम्? सीता तु रामस्य पत्नी वर्तते तस्य नेत्रयोरश्रूणि दृष्ट्वा माता तमङ्के उत्थापितवती स्नेहेनावदत्यन्न कापि वार्ता पुत्र! सीतारामस्यापेक्षा भगवतः शिवस्य पूजां कुर्यास्तदनन्तरन्नरेन्द्रस्तस्मिन्कक्षेऽगच्छत्यत्र मूर्तिः स्थापितासीत् । तेन मूर्तिमुत्थाप्य छदः नीचैः पातिता ।

प्रत्येकं ताक्रिकतायाः कारणं ज्ञातुमिच्छा नरेन्द्रस्य बाल्यकालादेव स्वभावो बभूव । यथा स मातरं पृष्टवान्मातः!

भातस्य स्थाल्याः स्पर्शानन्तरं शरीरस्य हस्तस्पर्शेन किं भवति? अथवा वामहस्तेन जलस्य पात्रमुत्थाप्य जलपानेन हस्तप्रक्षालनं कथं भवति? हस्ते उच्छिष्टं तु न लगति, माता एषां प्रश्नानामुत्तरं किमपि न दत्तवती। नरेन्द्रः प्रश्नानां संख्यावर्धनमकरोत्। विश्वनाथदत्तस्यैको वावक्किलः पेशावरस्य मुस्लिमजातीय आसीत्। नरेन्द्रस्तेन सह विचारेण सम्मिलितवान्। नरेन्द्रस्तस्याङ्के उपविश्य पञ्जाबु-अफगानिस्तानादिविषयेषु पृष्ठवान्तथा तेन सह चलितुं हठमकरोत्। अस्मिन्विषये स सज्जनः कथितवान् त्वं द्वयङ्गुलं वर्धस्व तदाहं त्वामवश्यमेव नेष्यामि। कदापि तु नरेन्द्रो द्वितीयदिवसे तं पुनः पृष्ठवान् अहं रात्रौ द्वयङ्गुलं वर्धितवान्साम्प्रतं भवता सह मां नय। स सज्जनोऽपि हसितवान्। तदा समाजे इत्थं कारणात्धर्मच्युतमिव मन्यते स्म। यद्यपि पिता विश्वनाथ एतादृशीनां वार्तानां महत्त्वं न दत्तवान्। तदापि गृहस्यान्ये सदस्या विरोधं कृतवन्तः। अस्य कृते नरेन्द्राय प्रताडना मिलिता स इदं ज्ञातुं न प्रभूतवान्यदित्थं कथं भवति।

विश्वनाथदत्तस्य वावक्किलेषु प्रत्येकं धर्मस्य जातेश्च जना आसन् ये तस्य गृहे आवागमनं कुर्वन्ति स्म। प्रत्येकं जातेर्धर्मस्य जनेभ्यो गृहे पृथक् पृथक् धूम्रपानयन्त्रं स्थपितमासीत् किन्तु नरेन्द्रो न जानाति स्म यदियन्ति धूम्रपानयन्त्राणि कथं स्थापितानि सन्ति, का आवश्यकता वर्तते। तस्य बालकस्य मनसि विचार उत्पन्नो यत्सम्भाव्यते यदपरजातेर्यन्त्रेण धूम्रकरणेन मृत्युर्भवेत्। एकस्मिन्दिवसे प्रत्येकं धूम्रपानयन्त्रस्य नलिकां मुखे कृत्वा पातुमारब्धवान् तस्मिन्काले तस्य पिता तत्रागतवान्तेन पृष्ठं किं क्रियते बिले। नरेन्द्रेणोत्तरितं यत् यदि अहं जातेर्भेदं न मन्ये तदा किं भविष्यति मम। किन्तु मम किमपि नाभवत्। पिता हसन्ततो गतवान्।

नरेन्द्रनाथेन यस्मात्कक्षात्सीतारामयोर्मूर्तिर्विस्थापिता तस्मिन्कक्षे पुनः शिवस्य मूर्तिः स्थापिता। अधुना स शिवस्य सम्मुखं ध्यानमग्नं भवितुमारब्धवान्। एकदा ध्यानमग्नसमये स निजमातुर्वार्तां स्मृतवान् (पश्य बिले यदि त्वमुधमं करिष्यसि शिवस्त्वां कैलासे न नेष्यति)। नरेन्द्रो विचारितवान् यदहं दृष्टोऽस्मात्कारणात्शिवेनाहं दूरं कृतः। नरेन्द्रस्तदैव मातुः पार्श्वे गतवान्पुष्टवान् च मातः! यद्यहं साधुर्भवेयम् तदा किं शिवो निज पार्श्वे आगमनायानुमतिं प्रदास्यति? तदा मातुर्मुखात्सहसा निस्सृतं यत् आम् कथन्न? पश्चात्माता निजशब्देषु पश्चात्तापं कृतवती किन्तु तस्मिन्काले केन कथयितुं शक्यते स्म यदयमेव बालको भविष्ये स्वामिविवेकानन्दो भविष्यति। एकस्मिन्दिवसे नरेन्द्रनाथो निजसमवयस्कैर्बालकैः सह निजपूजाकक्षे ध्यानमग्नः स्थितः। तदा एकेन बालकेन निज नेत्रे उद्घाटिते तदा स वक्तुमारब्धवान् सर्पः सर्पः। तेन दृष्टं यत् सम्मुखे एको नागः निजफणं प्रसार्य स्थितवान्। तस्य कोलाहलेन सर्वे बालका उत्थाय प्लावितवन्तः परन्तु नरेन्द्रनाथस्य ध्यानं भग्नं न जातम्। सर्वे बालका निजपरिवारानाहूतवन्तः। सर्वैः फणं प्रसार्य स्थितः सर्पो दृष्टः। बालकनरेन्द्रनाथस्य ध्यानं भग्नं न भूतम्। नरेन्द्रो ध्यानावस्थितोऽस्ति। न केनापि किमपि कृतम्। सर्वैर्दृष्टं यत्किञ्चिकालानन्तरं सर्पस्ततः स्वयं गतः। नरेन्द्रनाथोऽस्मिन्विषये सर्वथापरिचित आसीत्।

सन्यासिनो दृष्ट्वा नरेन्द्र आनन्दानुभूतिं चकार गृहे आगतेभ्यः सन्यासिभ्यः प्रचूरमात्रायां भिक्षां ददाति स्म। तत्पश्चादस्मिन्विषये प्रताडनार्थं स निश्चिन्तो भवति स्म कदापि स किमपि वस्त्रं स कर्तनं कृत्वा कौपीनं हित्वा तालिकां वादयन्त्यति स्म। तथा शिवःशिवेति जपते स्म। रामायणस्य कथायां तेन मात्रा श्रुतं यत् हनूमान् अमरोऽस्ति। एकस्मिन्दिवसे कथावाचकेनोक्तं यत्हनूमते कदलीफलानि रोचन्ते।

नरेन्द्रः कथाचकस्य पार्श्वे गत्वा पृष्ठवान् यत्पण्डितमहोदय! भवान् कथयति यत्हनूमते कदलीफलानि रोचन्ते। स कदलीफलानामुद्याने वसति। किं तत्र गते सति हनूमान् मिलिष्यति? पण्डितो हसन्नुवाच आम्! स तत्र

मिलिष्यति नरेन्द्रनाथस्तस्य वार्ता सत्यभूतां मतवान् तथा गृहस्य समीपे कदलीफलानामुद्याने गतवान् । रात्रीं पर्यन्तं तत्र स्थितवान्परमन्ते गृहं प्रत्यागतवान् । तस्योदासिनं मुखं दृष्ट्वा माता पृष्ठवती किं कारणम्? तेन भणितं मातावदत् पुत्र! इदं भवितुं शक्यते यत्हनूमान् रामस्य कार्यकृते अद्य कुत्रापि गतवान् कस्मिन्नन्यदिवसे मिलिष्यति चिन्तां मा कुरु ।

Dr. Balwant Singh Vats

Gold Medalist, Rtd BEO, 6 M.A, Ph.D., NET UGC, State Awardee, Second Possition in All India Sanskrit Bhashan Pratiyogita, Awarded by Sanskrit Akadami panchkula as a Writer, LL.B KUK. Radio Singer in Akashwani Rohtak from 25 years.

M. : 8901359751, 9416498867



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 147-150

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Women Entrepreneurship Through Traditional Indian Skills

Neelam Singh, Research Scholar

Dr. Nageshwar Prasad Agrawal, Professor

Coomerce, PMCOE Govt. Auto. P.G. College, Satna.

Abstract :

Women entrepreneurship in India has emerged as a crucial driver of inclusive economic growth and social empowerment. Traditional Indian skills such as handloom weaving, embroidery, pottery, handicrafts, and artisanal food processing provide women with viable opportunities to establish micro and small enterprises. This paper examines the role of traditional skills in promoting women entrepreneurship, the socio-economic challenges faced by women entrepreneurs, and the support mechanisms that enable success. Using secondary data from academic journals, government reports, and documented case studies, the research highlights how blending heritage skills with modern business practices and digital platforms can enhance women's economic participation. The study concludes that targeted policy interventions, financial inclusion, and skill development are essential for scaling women-led traditional enterprises.

This research paper investigates how Indian women are leveraging traditional skills such as weaving, embroidery, pottery, handicrafts, and artisanal food products to create sustainable entrepreneurial ventures. These enterprises promote cultural preservation, economic empowerment, and community development. By combining primary insights with academic literature, the study highlights key catalysts, barriers, and policy recommendations for fostering women-led craft entrepreneurship in India.

Keywords : Women Entrepreneurship, traditional skills, handicrafts, economic empowerment, India

1. Introduction :

Women entrepreneurship plays a vital role in economic development by fostering innovation, employment generation, and social inclusion. In India, traditional skills rooted in cultural heritage—

such as weaving, embroidery, pottery, and handicrafts—have long been practiced by women, particularly in rural and semi-urban areas. These skills, often passed down through generations, are increasingly being transformed into entrepreneurial ventures.

Despite the growing importance of women-led enterprises, female entrepreneurs face significant challenges, including limited access to finance, lack of formal education, market constraints, and socio-cultural barriers. However, government initiatives, self-help groups (SHGs), non-governmental organizations (NGOs), and digital platforms have created new opportunities for women to commercialize traditional skills.

The Government of India and several non-profits support training, microfinance, and digital market access to elevate traditional skills into sustainable enterprises. However, persistent barriers like limited access to capital, gender norms, and digital literacy continue to hamper growth.

2. Literature Review

2.1 Women Entrepreneurship in India - According to GEM indicators, Indian women's early-stage entrepreneurial activity remains below that of men, reflecting systemic gender gaps in opportunity and survival rates of enterprises.

Research highlights that women entrepreneurs often operate in informal or traditional sectors and view entrepreneurship as both an economic need and a path to independence.

2.2 Traditional Skills as Entrepreneurial Foundation - Traditional crafts like Phulkari embroidery, handloom weaving, jute handicrafts, and pottery have deep cultural roots and global demand. Notable clusters like the Phulkari cooperative in Punjab have trained and employed thousands of women artisans.

2.3 Barriers and Challenges - Studies show rural women entrepreneurs face multidimensional challenges including financial exclusion, lack of business education, and entrenched cultural norms that restrict mobility.

3. Research Objectives :

- Examine how traditional skills serve as a base for women-led entrepreneurship.
- Analyse the socio-economic enablers and barriers.
- Document initiatives that support entrepreneurial success.
- Propose strategies to strengthen craft-based women entrepreneurship.

4. Methodology :

4.1 Approach :

A **mixed-methods** approach :

- **Qualitative interviews** with 20 women entrepreneurs across Rajasthan, West Bengal,

- **Secondary data analysis** from academic journals, reports by NITI Aayog, and craft sector
 - **Case studies** of selected enterprises.
- 4.2 Sampling** - Purposive sampling focused on women running businesses that leverage traditional skills and have operated for at least two years.

5. Key Findings :

5.1 Motivations Driving Women Entrepreneurs :

Women pursue entrepreneurship to gain financial independence, assert decision-making power, and preserve family cultural legacies. Many choose traditional skills that align with flexible work environments. This trend has been supported by local government training and certification programs.

5.2 Support Systems and Enablers :

- **Government and NGOs :** Vocational training centres like Seva Bharati provide handicraft skills training and market access to women across India.
- **Self-Help Groups & Cooperatives :** Collective models enhance access to microcredit and group marketing channels.
- **Digital Platforms :** Social media and e-commerce enable direct reach to urban and global consumers.
- **Projects & Training Grants :** Initiatives like MP Tourism Board's *Tourism Sakhi* program equip women with livelihood skills linked to tourism and crafts.

5.3 Socio-Economic Impacts :

Women-owned craft enterprises contribute to local economies through job creation, intergenerational skill transmission, and increased household income. For example, women artisans in Prayagraj have built successful handicraft businesses with state support, generating significant annual turnovers and employing dozens of locals.

6. Case Examples :

6.1 Arti Rana - Tharu Women Craft Network- Arti Rana organized and trained over 800 Tharu women in handicrafts like moonj grass and jute products, creating sustainable livelihood and community networks.

6.2 Phulkari Cooperative in Punjab - The Phulkari craft cluster has empowered over 10,000 women with training, collective selling platforms, and increased income opportunities through national and international markets.

7. Discussion :

7.1 Empowerment and Agency - Craft-based enterprises enhance women's social status and economic agency. Women artisans often become role models in their communities, catalysing

broader gender norm shifts.

7.2 Digital and Market Integration- Digital tools and e-commerce are crucial for scaling traditional skill businesses. However, digital literacy training remains a bottleneck that needs strategic intervention.

8. Policy Recommendations :

To further strengthen women's entrepreneurship through traditional skills :

- **Expand skill development programs** with business and digital literacy.
- **Increase access to microfinance and seed capital**, particularly in rural areas.
- **Support SHG and cooperative market linkages** to national and global platforms.
- **Leverage technology** for branding, logistics, and e-commerce integration.
- **Incentivize partnerships** between government, NGOs, and private sector for mentorship and scaling.

9. Conclusion :

Women entrepreneurship rooted in India's traditional skills presents a powerful engine for cultural preservation, economic empowerment, and inclusive growth. While significant progress has been made, deliberate efforts involving policy support, financial inclusion, technology access, and market integration are essential to unlock its full potential.

References :

Academic Sources :

- *Women Entrepreneurship in India: A Comparative and Analytical Assessment Using GEM Indicators*. Journal of Commerce and Trade (2024).
- *Evaluation of factors affecting entrepreneurship: a case of Indian women in the handicraft industry*, Humanities and Social Sciences Communications (2023).
- *Indian Rural Women Entrepreneurs: Obstacles to Success and Empowerment Approaches* (2024).

Support Organizations & Case Evidence :

- Seva Bharati handicraft training and marketing initiatives.
- Phulkari craft employment and training.
- India government *Startup India* women entrepreneurship support.

Media & Program Implementation :

- Tourism Sakhi initiative for livelihood skills in Indore.
- Women handicraft entrepreneurs thriving in Prayagraj.
- NIT Raipur STREE project empowering rural women's skills



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 7-8
पृष्ठ : 151-156

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक-आर्थिक चिन्तन का विरलेषणात्मक अध्ययन

पूजा साकेत, शोधार्थी,

डॉ. अनुराधा जैन, प्राध्यापक

राजनीति विज्ञान, शासकीय स्वशासी स्नाताकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म०प्र०)

सारांश -

सामाजिक एवं आर्थिक विचारकों के मन में हमेशा आर्थिक विकास का प्रश्न होता है। उन्होंने समसामयिक परिस्थितियों से उबरने के लिए आर्थिक समस्याओं पर कुछ विचार और समाधान रखे हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि वे विचार और समाधान आज पुराने हो चुके हैं। उन विचारों में वर्तमान अर्थव्यवस्था को सही दिशा में निर्देशित करने की क्षमता है। भारत के मामले में अनेक विशेषज्ञों ने सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र से संबंधित अपने बहुमूल्य विचार रखे हैं। हालांकि उनके विचार सिद्धांत के रूप में नहीं हैं लेकिन आर्थिक विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। जब हम डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के आर्थिक विचारों पर गौर करते हैं तो हमने उन्हें बहुत महत्वपूर्ण आर्थिक विचारकों में पाया है। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को 'बाबासाहेब' के नाम से जाना जाता है। वह एक भारतीय विधिवेत्ता, राजनीतिज्ञ, दार्शनिक, मानवविज्ञानी, इतिहासकार और अर्थशास्त्री थे। डॉ. अम्बेडकर भारत के संविधान के महान् शिल्पकार थे। आर्थिक चिंतन में डॉ. अम्बेडकर का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। उन्होंने भारत में लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के संबंध में कुछ मुद्दों और विकल्पों पर प्रकाश डाला। उन्होंने कृषि, केंद्र और राज्य सरकार के बीच संबंध, औद्योगीकरण, मुद्रा, वित्त प्रणाली, बीमा, शिक्षा, मिश्रित अर्थव्यवस्था, समाजवाद, आर्थिक असमानता, गरीबी एवं बेरोजगारी आदि पर अपने आर्थिक विचार व्यक्त किए हैं। उनके आर्थिक विचार आज भी प्रासंगिक हैं। प्रस्तुत शोध पत्र उनके कुछ महत्वपूर्ण आर्थिक विचारों को उजागर करने का एक प्रयास है।

मुख्य शब्द : मिश्रित अर्थव्यवस्था, औद्योगीकरण, समाजवाद, आर्थिक असमानता।

प्रस्तावना -

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर 20वीं शताब्दी में भारत के सबसे उत्कृष्ट बुद्धिजीवियों में से थे। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को 'बाबासाहेब' के नाम से जाना जाता है। वह एक भारतीय विधिवेत्ता, राजनीतिज्ञ, दार्शनिक, मानवविज्ञानी, इतिहासकार और अर्थशास्त्री थे। डॉ. अम्बेडकर भारत के संविधान के महान् शिल्पकार थे। आर्थिक चिंतन में डॉ. अम्बेडकर का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। वृद्धि हो सकती है।^[2] उन्होंने भारत में प्राथमिक उद्योग

के रूप में कृषि में निवेश पर बल दिया। डॉ. अम्बेडकर विदेश से अर्थशास्त्र में डॉक्टरेट की डिग्री लेने वाले पहले भारतीय थे।^[1]

उन्होंने तर्क दिया कि औद्योगिकीकरण और कृषि विकास से भारतीय अर्थव्यवस्था में शरद पवार के अनुसार, अम्बेडकर के दर्शन ने सरकार को अपने खाद्य सुरक्षा लक्ष्य हासिल करने में मदद की।^[3] अम्बेडकर ने राष्ट्रीय आर्थिक और सामाजिक विकास की वकालत की, शिक्षा, सार्वजनिक स्वच्छता, समुदाय स्वास्थ्य, आवासीय सुविधाओं को बुनियादी सुविधाओं के रूप में जोर दिया।^[2]

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के प्रमुख अर्थशास्त्र प्रकाशन हैं “द प्रॉब्लम ऑफ रुपी” (पी एस किंग एंड सन लिमिटेड, लंदन 1923), और “द इवोल्यूशन ऑफ प्रोविंशियल फाइनेंस इन ब्रिटिश इंडिया” (पी एस इंडिया एंड देयर रेमेडीज’ जर्नल ऑफ द इंडियन इकोनॉमिक सोसाइटी, खंड 1, 1918।

इन अकादमिक आर्थिक लेखों के अलावा, उनके ज्ञापन और विभिन्न सरकारी आयोगों को दिए गए साक्ष्य, विभिन्न विधायी निकायों में भाषण, और पुस्तक समीक्षाएं हैं जिनमें सभी में कुछ आर्थिक सामग्री है। डॉक्टर अंबेडकर के आर्थिक विचारों का अध्ययन हम कृषि, उद्योग, श्रम, मुद्रा वित्तीय स्थिति बिंदुओं के अंतर्गत विभाजित करके कर सकते हैं।

कृषि व्यवस्था :

डॉ. अम्बेडकर कृषि को महत्व देते हैं क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था इसी क्षेत्र पर आधारित है। अंबेडकर के अनुसार भारतीय अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन का मूलभूत कारण भूमि व्यवस्था में परिवर्तन में देरी है।^[7] उनका विचार था कि कृषि और अंततः भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास के बिना ग्रामीण समाज का विकास असंभव है। उन्होंने मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी का समर्थन किया। उन्होंने भारतीय कृषि का राष्ट्रीयकरण सामूहिक खेती के साथ अपनाने का सुझाव दिया। उन्होंने भारतीय कृषि समस्याओं के समाधान के लिए कृषि पर निर्भर भूमिहीन मजदूरों पर जोर दिया। उन्होंने खेत के आकार को कभी महत्व नहीं दिया। उनके अनुसार पूंजी और अन्य संसाधन, छोटे आकार के खेत की तुलना में भारतीय कृषि क्षेत्र की मुख्य समस्याएं हैं। मशीनीकरण की मदद से कृषि के आधुनिकीकरण पर भी उन्होंने अपने विचार व्यक्त किए हैं आधुनिकीकरण से उत्पादन बढ़ेगा और इस क्षेत्र का विकास होगा। वे सामूहिक खेती में विश्वास करते थे। उनके अनुसार खेत के आवंटन का आधार जाति नहीं होनी चाहिए और सरकार को खेती और पानी की आपूर्ति के उपकरण उपलब्ध कराने चाहिए। सरकार को कृषि आय पर कर नहीं लगाना चाहिए और खेती से होने वाली आय को बिना किसी जाति के भेदभाव के किसानों के बीच वितरित किया जाना चाहिए।^[4] अंबेडकर ने कृषि सुधार को औद्योगिकीकरण के साथ जोड़ा ताकि ग्रामीण व शहरी प्रगति में एक प्रकार का संपर्क बना रहें। वास्तव में उन्होंने कृषि उद्योग दोनों को एक दूसरे का पूरक क्षेत्र माना है। यही कारण है कि जो बात अंबेडकर ने 1918 में कहीं उसे ही हमारे विशेषज्ञों ने 1950 के पश्चात् स्वीकार कर यह महसूस किया कि भारत की आर्थिक प्रगति के लिए ना केवल कृषि सुधार बल्कि साथ ही समूचे भारत में औद्योगिकीकरण की भी परम आवश्यकता है।

श्रम :-

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के अनुसार समाज में भेदभाव विशेष रूप से शोषण पर आधारित था और उन्होंने इस बात की पुष्टि की कि प्रत्येक श्रम को मनुष्य के रूप में माना जाना चाहिए, उन्होंने सभी के लिए

समानता और स्वतंत्रता का परिचय देने की आवश्यकता का सुझाव दिया। 1937 में उन्होंने लेबर पार्टी की स्थापना की। लेबर पार्टी की मान्यता थी कि किसान की जमीन के निरंतर टुकड़े होना और उन पर जनसंख्या का दबाव होना किसानों की गरीबी का मुख्य कारण है, इसका समाधान यह है कि पुराने लघु उद्योगों को बहाल किया जाए और नए उद्योग शुरू किए जाए। लोगों की योग्यता और उत्पादन शक्ति बढ़ाने के लिए उन्हें तकनीकी शिक्षा दी जाए। इसके लिए सरकार की ओर से उद्योग चलाने और प्रबंध करने का सुझाव दिया गया। कारखाने के कामगारों के रोजगार तथा कल्याण के लिए बेहतर कानून बनवाना भी पार्टी का एक लक्ष्य था। काम के घंटे तय करना, प्रमोशन के अवसर देना, वेतन, छुट्टियां, आवास की उपयुक्त सुविधा आदि के लिए प्रभावी कानून बनवाने के लिए सरकार को बाध्य करना दल के अन्य लक्ष्य थे।^[5] अंबेडकर के अनुसार जो सुविधाएं औद्योगिक श्रमिकों को दी जाती हैं वहीं सुविधाएं कृषि श्रमिकों की जानी चाहिए क्योंकि कृषि श्रम भी इससे अलग नहीं हैं उनके अनुसार कार्य की दशाएं प्रावधाई निधि, नियोक्ता के दायित्व, कार्य की क्षति पूर्ति, स्वास्थ्य बीमा, पेंशन आदि के लाभ सभी प्रकार के श्रम को प्राप्त होने चाहिए चाहे वह औद्योगिक श्रमिक हो या कृषि श्रमिक।^[6]

औद्योगिकीकरण :-

अंबेडकर सभी उद्योगों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में नहीं थे वे केवल महत्वपूर्ण उद्योगों का ही स्वामित्व और कार्यप्रणाली राज्य के अधीन करने के पक्ष में थे वह यह भी सुझाव देते थे कि जो उद्योग महत्वपूर्ण उद्योग नहीं हैं परंतु जो मूल उद्योग हैं उन्हें या तो राज्य चलाए। या राज्य द्वारा स्थापित निगम संचालित करें ^[7] डॉक्टर अंबेडकर ने निजी क्षेत्र का कभी भी विरोध नहीं किया। उनका यह निश्चित मत था कि मूलभूत उद्योगों के अतिरिक्त उत्पादन के क्षेत्र निजी उद्यमियों के स्वामित्व में होने चाहिए परंतु साथ ही साथ उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि निजी उद्यमियों को समाज के वृहत्त हितों को ध्यान में रखना होगा। सरकार को स्वयं निश्चित करना होगा कि कौन से उद्योग राज्य के द्वारा चलाए जाए या निजी क्षेत्र के द्वारा या निजी क्षेत्र तथा राज्य दोनों के नियंत्रण में हों।

वित्त का विकेन्द्रीकरण :-

अम्बेडकर ने अर्थव्यवस्था के राष्ट्रीयकरण पर जोर दिया। उनका विचार था कि राज्य को अर्थव्यवस्था का प्रबंधन करना चाहिए ताकि उत्पादन इष्टतम स्तर तक पहुंच सके और पूंजीपति द्वारा लाभ नहीं लिया जाना चाहिए। लाभ समान रूप से वितरित किया जाना चाहिए। वह पूंजीवादी व्यवस्था के कारण होने वाली स्पष्ट सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को दूर करते हुए समाज के प्रगतिशील परिवर्तन के लिए खड़े थे। अम्बेडकर समाजवाद के दृढ़ विश्वासी थे। उद्योगों के राष्ट्रीयकरण और जीवन बीमा पर उनके विचार ने भारत के सामने आने वाली आर्थिक समस्याओं के प्रति उनकी बड़ी चिंता को दर्शाया। सार्वजनिक क्षेत्र के गठन और जीवन बीमा निगम की स्थापना से पता चला कि वह अन्य प्रमुख अर्थशास्त्रियों के साथ सहमत थे। उन्होंने टिप्पणी की कि भारत का औद्योगिकीकरण एक आवश्यक चीज थी। लेकिन साथ-साथ राज्य प्रबंधन और उद्योग के राज्य स्वामित्व के सिद्धांत को अपनाया जाना चाहिए। सामाजिक बीमा और रोजगार पर नियंत्रण, बर्खास्तगी जैसी सुविधाएं उद्योग की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण थीं। इन उपायों के बारे में निम्न मध्यम वर्ग की रक्षा की जानी चाहिए। उनका दृढ़ विश्वास था कि शोषण को समाप्त करके, श्रम कल्याण और अनुकूल औद्योगिक संबंध के माध्यम से औद्योगिक सद्भाव स्थापित किया जा सकता है। उन्होंने टिप्पणी की “हमने राजनीतिक स्वतंत्रता और

समानता प्राप्त की है लेकिन आर्थिक और सामाजिक समानता के बिना यह काफी अपर्याप्त है।” अम्बेडकर ने आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता और समानता पर अधिक जोर दिया। समाज और समाजवाद की उनकी अवधारणा का उद्देश्य गरीब वर्गों के कल्याण के लिए आधारित असमानता को समाप्त करना था। जन्म पर सामाजिक व्यवहार पैटर्न में भेदभावपूर्ण प्रथाओं को समाप्त करना, सभी के लाभ के लिए राजनीतिक अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन करना, पूर्ण रोजगार और शिक्षा बनाए रखना, कमजोर और बीमारों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना। [8]

मुद्रा के संबंध में विचार :-

डॉ. अम्बेडकर के विचार वर्तमान भारतीय नकदी ढांचे को बहुत प्रभावित करते हैं। ब्रिटिश मानक के तहत जब भारत सरकार भारतीय रुपये के गिरते अनुमान से जूझ रहे थे, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने 1923 में ‘रुपये का मुद्रा, इसकी जन्मस्थली और व्यवस्था’ की रचना की। उन्होंने ब्रिटिश भारत के दौरान भारतीय धन की स्थिति पर अपनी जांच और शोध को केंद्रित किया। उन्होंने इस पर शोध प्रस्ताव तैयार किया। अपने सिद्धांत में, उन्होंने तर्क दिया कि सोने के व्यापार मानक में स्थिरता नहीं है। भारत जैसे निर्माण करने वाले देश सोने के व्यापार मानदंडों की लागत का प्रबंधन नहीं कर सकते हैं, इससे अधिक यह मूल्य वृद्धि के खतरे को भी बढ़ाता है। उन्होंने अंतर्दृष्टि की जानकारी और कारणों के साथ प्रदर्शित किया कि कैसे भारतीय रुपये ने अपना मूल्य खो दिया है और इस प्रकार रुपये की खरीद तीव्रता गिर रही है। उन्होंने सुझाव दिया कि सरकारी कमी को दूर किया जाना चाहिए और पैसे का एक वृत्ताकार प्रवाह होना चाहिए। उन्होंने यह भी प्रस्तावित किया कि रूपांतरण पैमाने पर निर्भरता की तुलना में मूल्य ठोसता पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए यह पुस्तक अनिवार्य रूप से भारतीय रिजर्व बैंक की नींव को प्रेरित करती है। [9]

समान कार्य के लिए समान वेतन :-

डॉ. अम्बेडकर प्रमुख व्यक्ति थे जिन्होंने वायसराय आधिकारिक सभा में श्रम मंत्री के रूप में औद्योगिक विशेषज्ञों के रूप में भारत में “समान कार्य के लिए समान वेतन” कानून लाया। भारतीय संविधान का मसौदा तैयार करते समय, डॉ. अम्बेडकर ने अनुच्छेद 39 (डी) को समाहित करने के लिए महत्वपूर्ण प्रतिबद्धता निभाई, जो राज्य को समकक्ष के लिए समान वेतन की पुष्टि करने के लिए एक निर्णय लेने के लिए संबंधित है। [10] उनके द्वारा इंगित किया गया है, महिलाओं की सामाजिक स्थिति और निष्पक्षता के निर्माण के बिना वित्तीय सुधार में समर्थन की कल्पना नहीं की जा सकती है, जो भी हो, भारत में महिलाओं की भयानक आर्थिक स्थिति के कारण भारत की आर्थिक उन्नति बाधित है। इस प्रकार, महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार करना और उन्हें समान अधिकार और व्यवसाय का अवसर देना महत्वपूर्ण हैं।

गरीबी एवं बेरोजगारी :-

डॉ. अम्बेडकर ने यह स्वीकार किया कि भूमि के टुकड़े-टुकड़े होना और उन पर जनसंख्या के दबाव के कारण ही कृषक गरीब हैं। इसका समाधान यह है कि पुराने उद्योगों को बहाल किया जाये और नये उद्योग चालू किये जायें। उन्हें तकनीकी शिक्षा प्रदान की जाये। स्पष्ट है कि अम्बेडकर गरीबी एवं बेरोजगारी समाप्त करने के लिए कृषि क्षेत्र में सामूहिक कृषि को अपनाने तथा उद्योग क्षेत्र में नये उद्योग लगाने एवं पुराने उद्योगों को बहाल करना मुख्य उपचार मानते थे। उन्होंने बताया कि किसानों और मजदूरों को बिना किसी जाति पांति

के भेद के एक मजदूर संगठन कायम करना चाहिए और विधानसभाओं में योग्य वक्ता चुनकर भेजना चाहिए। जो उनका प्रतिनिधित्व कर सके। आर्थिक असमानता के बारे में उन्होंने लिखा है कि जब तक समाज में आर्थिक समानता के साथ सामाजिक समानता स्थापित नहीं हो जाती देश का सम्पूर्ण विकास नहीं हो सकता।

अन्य विचार :

बी आर अंबेडकर ने नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के कार्यों की चर्चा करते हुए 1949 में हमारे संविधान के निर्माण के दौरान कहा था कि सरकारों को जनता से प्राप्त संसाधनों को न केवल नियमों, कानूनों और विनियमों के अनुसार खर्च करना चाहिए, बल्कि यह भी देखना चाहिए कि “वफादारी, ज्ञान और अर्थव्यवस्था” सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा व्यय के कृत्यों में चला गया है। इसलिए सरकार के लिए मूल इरादों के प्रति वफादार होना और भी आवश्यक हो जाता है।^[11]

डॉ अम्बेडकर ने दामोदर महानदी बेसिन पर बहुआयामी परियोजना को भी अंजाम दिया। जलग्रहण क्षेत्र को विकसित करने के लिए बिजली को उत्पादन करने के लिए, बाढ़ को पूर्ण विराम देने के लिए, सिंचाई के लिए पानी की आपूर्ति, जलमार्ग के रूप में और उन सभी उद्देश्यों के लिए औद्योगिक उपयोग के लिए परियोजनाओं को पूरा किया। उन्होंने बिजली उत्पादन को भी दिशा दी। बिजली की निरंतर और समृद्ध उपलब्धता बहुत महत्वपूर्ण हैं उन्होंने नई जल नीति, जलमार्ग, जल निकासी व्यवस्था आदि मुद्दों पर भी अपने विचार व्यक्त किये।

निष्कर्ष :-

विभिन्न आर्थिक विषयों पर, जिनसे अम्बेडकर का संबंध था, उनके निष्कर्षों का मूल्य काफी सटीक है क्योंकि उनका विश्लेषण अनुभवजन्य और ऐतिहासिक नींव पर आधारित था। उनके अनुसार प्रमुख उद्योग राज्य के स्वामित्व में संचालित होंगे। बुनियादी लेकिन गैर-महत्वपूर्ण उद्योग राज्य के स्वामित्व में होंगे और राज्य या उसके द्वारा स्थापित निगमों द्वारा संचालित होंगे। कृषि एक राज्य उद्योग होगा, और सामूहिक कृषि को प्राथमिकता दी जायेगी। उन्होंने औद्योगीकरण की आवश्यकता पर भी जोर दिया ताकि अधिशेष श्रम को कृषि से अन्य उत्पादक में स्थानांतरित किया जा सके।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि डॉ अंबेडकर के आर्थिक दर्शन सिद्धांत महत्वपूर्ण होने के साथ व्यवहार में भी लागू किये गये। उनका दर्शन मानवतावादी था जो सीधा मनुष्य के कल्याण से जुड़ा हुआ था। उनके महत्वपूर्ण विचारों का स्वतंत्रता, समानता, प्रजातंत्र, समाजवाद आदि में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

संदर्भ सूची :

- IEA.”Dr. B.R.ambedkar’s Economicandsocial Thoughtsand Their Contemporary Relevance”. IEA Newsletter-The Indian Economicassociation (IEA) (PDF). India: IEA publications, 2013, 10.
- Mishra, edited by.N. (2010).socio-economicand political vision of Dr. B.R.ambedkar. New Delhi: Concept Publishing Company, 2018, 173-174. ISBN 818069674X
- “Ambedkar had a vision for foodself-sufficiency’ “. The Times of India, 2013.

- Hiralal Vaman Chavan, "The Economic Thought of Dr. Babasaheb Ambedkar" (article 22) *The Indian Economic Journal*, 2013, 155
- डॉ. एम.एल. परिहार, बाबा साहब अम्बेडकर लाइफ एंड मिशन 14 अप्रैल 2017, पृ सं. 181
- WN Kuber, "B.R. Ambedkar" Page No. 130
- अंबेडकर, "स्टेट एंड माइनॉरिटीज", 1947, पृष्ठ 15
- डॉ. एम.एल. छीपा, शंकर लाल शर्मा, जे.के. सिद्ध, "भारतीय आर्थिक चिंतन", पृष्ठ 205–207
- Nageswari R, "Economic vision of Dr. B.R. Ambedkar, shanlax. *International Journal of Economics*, 2019, researchget.net
- डॉ. बी.आर. अंबेडकर के आर्थिक विचार : एक सिंहावलोकन, article 8, Om Prakash Ram, satya Ratnasinghandshivshankar. *The Indian Economic Journal*, 2013, 61-63
- MRsingariya "Dr. BR Ambedkar : asan Economist". *International Journal of Humanities and Social Science Invention*. 2013; 2(3) : 24-27. academia.edu



‘धूप से रूठी चाँदनी’ में प्रवासी जीवन की काव्यात्मक अभिव्यक्ति

डॉ. सदफ इशत्याक

पोस्ट डॉक्टोरल फ़ैलो (ICSSR PDF)

आगरा कॉलेज, आगरा।

सार :

जब व्यक्ति का मन अपनी माटी से दूर होता है, तब स्मृतियाँ ही उसका आश्रय बनती हैं। प्रवासी कवयित्री सुधा ओम ढींगरा के काव्य-संग्रह ‘धूप से रूठी चाँदनी’ में, यही अनुभूति बखूबी चित्रित है। धूप उजाले का प्रतीक है, गर्माहट का एहसास है, रोशनी का आत्मीय विस्तार है। इसके विपरीत चाँदनी शीतलता की पहचान है, ज्योत्स्ना की आभा है और कौमुदी का सौम्य आलोक है। सुधा जी अपने काव्य-संग्रह ‘धूप से रूठी चाँदनी’ के माध्यम से प्रवासी भारतीयों के मन की पीड़ा को उजागर करती हैं, जो अपने देश की ऊष्मा और अपनत्व से दूर होकर अकेलेपन व बेगानेपन की पीड़ा को झेलते हैं। कहने का तात्पर्य है कि प्रवासी भारतीय अपने नए देश में शीतल ठंड का तो अनुभव करते हैं लेकिन वे भारतीय ऊष्मा की तपिश को महसूस करने के लिए बेताब हो जाते हैं। उन्हें अनुभूति होती है कि कहीं धूप से चाँदनी रूठ तो नहीं गई है। चाँदनी का धूप से रूठ जाना वस्तुतः उस आंतरिक द्वंद्व, सांस्कृतिक विस्थापन और आत्मिक रिक्तता का रूपक है, जिसमें प्रवासी व्यक्ति भौतिक समृद्धि के बावजूद भावनात्मक संतुलन की खोज करता रहता है। कवयित्री ने प्रवासी जीवन की ऊहापोह, सांस्कृतिक टकराहट और वैश्विक परिवेश के मध्य संतुलन स्थापित करने का सफल प्रयास किया है। शोध अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सुधा जी का काव्य-संग्रह ‘धूप से रूठी चाँदनी’ केवल प्रवासी पीड़ा का दस्तावेज नहीं है बल्कि मानवीय संवेदना और जीवन मूल्यों का भी सशक्त काव्य-संग्रह है।

बीज शब्द - प्रवासी काव्य, सुधा ओम ढींगरा, धूप से रूठी चाँदनी, प्रवासी जीवन।

प्रवास आधुनिक युग की एक महत्वपूर्ण सामाजिक व सांस्कृतिक प्रक्रिया है, जिसने विश्व भर में भारतीय समुदाय को गहराई से प्रभावित किया है। अपने देश, भाषा, संस्कृति और पारिवारिक परिवेश से दूर रहकर प्रवासी व्यक्ति कई प्रकार की संवेदनाओं को महसूस करता है। इन संवेदनाओं की अभिव्यक्ति ही प्रवासी हिंदी साहित्य का मूल आधार है। जब अभिव्यक्ति का आधार कथा न होकर काव्यात्मक हो, तब प्रवासी कविता जन्म लेती है। प्रवासी हिंदी कविता केवल प्रवासी भारतीयों की व्यथा नहीं है बल्कि यह उनकी स्मृतियों, सांस्कृतिक चेतना, जीवन संघर्ष व भविष्य के प्रति आशा का भी सजीव दस्तावेज है। प्रवासी कवयित्रियों ने अपनी अनुभूतियों को मानवीय संवेदना से जोड़ते हुए अपनी रचनाओं को सार्वभौमिक स्वर प्रदान किया है।

प्रवासी कवयित्री सुधा ओम ढींगरा अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रवासी जीवन के विविध पक्षों को

अभिव्यक्त करती हैं। आपकी रचनाओं में प्रवासी मन की पीड़ा के साथ-साथ जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टि व भारतीय मूल्यों के प्रति अटूट विश्वास दिखाई देता है। आपका काव्य संग्रह 'धूप से रुठी चाँदनी' प्रवासी जीवन की इन्हीं जटिल अनुभूतियों का सशक्त काव्यात्मक दस्तावेज है। इस काव्य-संग्रह की अनेक कविताएँ प्रवासी मन की उस पीड़ा को अभिव्यक्त करती हैं जो अपनेपन से दूर होकर भी अपनेपन की तलाश में भटकते रहते हैं। प्रवासी मन की इस व्यथा को सुधा जी 'नींद चली आती है' कविता में इस तरह लिखती हैं कि –

“बाँट में,
अपने हिस्से का सब छोड़,
कोने में पड़ी
सूत से बुनी वह
मंजी अपने साथ ले आई।”¹

उपर्युक्त पंक्तियों में मंजी अर्थात् चारपाई उस अपनेपन का प्रतीक है, जिस पर लेटकर, बैठकर भारत में कई बरस गुजारे। उस चारपाई से मौसी की यादें जुड़ी हैं। भले ही आज उस चारपाई के रंग फीके हो गए हों लेकिन उस पर टाँगें फैलाते ही नींद आ जाती है। इस तरह कवयित्री कहना चाहती हैं कि प्रवासी भारतीय का मन दो संसारों में झूलता रहता है – एक तो जिसमें वह वर्तमान में जी रहा है और दूसरा वह, जो उसकी स्मृतियों में आज भी जीवित है।

प्रवासी भारतीय का अकेलापन केवल शारीरिक एकांत नहीं बल्कि भावनात्मक रिक्तता का भी अनुभव है। यह अकेलापन व्यक्ति के जीवन को अत्यधिक प्रभावित करता है। प्रवासी व्यक्ति अपने भारत में बिताए हुए पलों को याद करता है। बचपन को याद करता है। कवयित्री ने इस अनुभूति का चित्रण इस प्रकार किया है –

“हर इंसान में
एक बच्चा बसता है
अपने होने का एहसास दिला
कभी – कभी वह
बचपन में लौट जाने
बचपन दोहराने को
मजबूर है करता
वो मासूमियत, वो भोलापन
ओढ़ लेने को जी चाहता है,
तारों भरे आकाश में
बिछुड़ गए अपनों को फिर से
ढूँढ़ना अच्छा लगता है.....”²

सुधा जी का मानना है कि प्रवास के साथ विस्थापन की अनुभूति भी गहराई से जुड़ी होती है। व्यक्ति एक नए समाज का हिस्सा तो बन जाता है लेकिन अपनी मातृभूमि से विस्थापित होने का दर्द, उसे कचोटता रहता है। स्मृतियाँ उसे अपनी जड़ों से जोड़े रखती हैं और सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने की प्रेरणा देती

हैं।

“कभी – कभी
मन की उद्वेलना
मस्तिष्क में स्मृतियों को
स्पंदित.... उत्तेजित.... झंकृत कर
रतजगा है करवाती।”³

सुधा जी कहती हैं कि मन की उद्वेलना सिर्फ रतजगा ही नहीं करवाती है बल्कि एहसास, अनुभूतियाँ व स्पर्श के मर्म को भी पहचानती हैं। कहने का तात्पर्य है कि प्रवासी व्यक्ति अपने भारतीय जीवन और प्रवासी जीवन में संतुलन बैठाने का कार्य करता है। वह नई संस्कृति को स्वीकार तो करता है लेकिन भारतीय संस्कृति की जड़ों को काटना नहीं चाहता है। यही संवेदना प्रवासी जीवन में द्विधात्मक स्थिति पैदा करती है।

“विस्मृतियों के गर्भ से
यादों की अंजुरी भर लाई हूँ
कुछ यादें टिकी हैं इसमें
कुछ रिस रहीं हैं...
ढलते सूरज की लौ सी
तपिश अभी भी बाकी है
इन यादों में....।”⁴

उपर्युक्त पंक्तियाँ यही बताती हैं कि प्रवास केवल दूरी का अनुभव नहीं बल्कि आत्म पहचान की निरंतर चलने वाली यात्रा है। प्रवासी भारतीय अपनी पहचान चाहते हैं। अमेरिका की नागरिकता प्राप्त करने के लिए पापड़ बेलने पड़ते हैं लेकिन फिर भी नागरिकता नहीं मिल पाती है। वीजे की अवधि समाप्त होने पर अवैध प्रवास को मजबूर होते हैं। इन प्रवासी भारतीयों के लिए भारत लौटना सिर्फ एक सपना बनकर रह जाता है। ऐसी परिस्थितियों में –

“बेलगाम घोड़े सा दौड़ता मन
प्रश्नों में उलझा
ऊहापोह में धँसा
पूछ रहा है....
इस युग में
मानस मन के
कुंद द्वार खुल पाएंगे?
बँधी बेड़ियों के
जोड़ सभी हिल पाएंगे?”⁵

प्रवासी भारतीयों के मन में उठे तमाम प्रश्न बुलबुले की भाँति उठते हैं और फिर वहीं समाप्त हो जाते हैं। उनके मन में एक टीस सी उठती है कि क्या वे अपने भारतीय रंग में फिर से रंग सकेंगे। इन लोगों का

अपनी संस्कृति के प्रति अटूट विश्वास है। सुधा जी लिखती हैं कि –

“है विश्वास सपना होगा पूरा
मेरी नियति के साथ
खुल पाएँगे
हर किसी के सपनों के द्वार।”⁶

सुधा जी की यह पंक्तियाँ प्रवासी जीवन की हकीकत बयाँ करती हैं, खोखले रिश्तों की पोल खोलती हैं। आप अमेरिका के खोखले रिश्तों को अनाम रिश्ते कहकर संबोधित करती हैं। जहाँ भावनाओं की कोई कद्र नहीं है, एहसासों की कोई परवाह नहीं है, बस जल्दी से रिश्ते को नाम दे दिया जाता है। चाहे वह रिश्ता सुबह बने और शाम को टूट जाए लेकिन उस रिश्ते का नाम जरूर होता है। कवयित्री ऐसे अनाम रिश्तों में बँधने के बजाय स्वतंत्र रहना पसंद करती हैं। आप इस अनाम रिश्तों की पीड़ा को कुछ यूँ बयाँ करती हैं कि –

“तुमने कितनी जल्दी
इस अनाम एहसास को
नाम दे दिया
रिश्ते में बांध दिया।”⁷

कवयित्री कहती हैं कि इस अनाम रिश्ते में स्त्रियाँ जल्दी फँस जाती हैं। इन अनाम रिश्तों का मोहपाश उन पर हावी होने लगता है। ऐसे में उन्हें अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़नी पड़ती है। सुधा जी की कविताओं में स्त्री को एक सशक्त स्त्री के रूप में चित्रित किया गया है। वह अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ सकती है। अपने आत्मसम्मान को ठेस लगने से बचा सकती है। वह संघर्षशील, आत्मसम्मान से परिपूर्ण और परिस्थितियों का सामना करने वाली सशक्त व्यक्तित्व के रूप में सामने आती है। ऐसी स्त्रियों के लिए कवयित्री लिखती हैं कि—

“धीरे – धीरे जो कत्ल हुआ होगा,
दर्द जाने उसने कितना पिया होगा।”⁸

लेकिन इसके बाद वह स्त्री अँधेरे को मिटाने के लिए दीपों को भी किस तरह बाँटती है। पंक्तियाँ इस प्रकार हैं –

“मैं दीप बाँटती हूँ....
इसमें तेल है मोहब्बत का
बाती है प्यार की
और लौ है प्रेम की
रोशन करती है जो
हर अंधियारें
हृदय और मस्तिष्क को।”⁹

‘धूप से रुठी चाँदनी’ काव्य संग्रह की कविताएँ यह भी संकेत करती हैं कि सांस्कृतिक अस्मिता किसी बाहरी प्रदर्शन का विषय नहीं है बल्कि व्यक्ति के भीतर जीवित रहने वाली चेतना है। प्रवासी भारतीय विश्व के किसी भी कोने में प्रवास करें, उनकी भाषा स्मृतियाँ, त्योहार, पारिवारिक संस्कार और मानवीय मूल्य उन्हें अपनी

जड़ों से जोड़े रखते हैं। यही कारण है कि सुधा ओम ढींगरा का काव्य प्रवासी जीवन को केवल पीड़ा और विस्थापन के रूप में नहीं देखता है बल्कि उसे संस्कृतिक आत्मविश्वास और मानवीय मूल्यों की पुर्नस्थापना के रूप में भी प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि सुधा ओम ढींगरा का काव्य-संग्रह 'धूप से रूठी चाँदनी' केवल प्रवासी जीवन की पीड़ा का आख्यान नहीं है बल्कि भारतीय सांस्कृतिक चेतना, मानवीय संवेदनाओं और वैश्विक परिवेश में अपनी पहचान को अक्षुण्ण बनाए रखने के संघर्ष का प्रभावशाली काव्य-संग्रह है। अंततः कहा जा सकता है कि 'धूप से रूठी चाँदनी' काव्य-संग्रह प्रवासी हिंदी साहित्य को समृद्ध करने वाली एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. ढींगरा, सुधा ओम। (2010). धूप से रूठी चाँदनी. सीहोर (म.प्र.) : शिवना प्रकाशन. पृष्ठ सं -14
2. वही, पृष्ठ संख्या - 25
3. वही, पृष्ठ संख्या - 31
4. वही, पृष्ठ संख्या - 36
5. वही, पृष्ठ संख्या - 63
6. वही, पृष्ठ संख्या - 63
7. वही, पृष्ठ संख्या - 18
8. वही, पृष्ठ संख्या - 104
9. वही, पृष्ठ संख्या - 111

मोबाइल नम्बर 7669530619

ई मेल – sdf-ishtyaque@gmail.com



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 7-8
पृष्ठ : 162-165

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

वर्तमान संदर्भों में हनुमान के आदर्शों की आवश्यकता

डॉ. दीपक कुमार

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी

राजकीय महाविद्यालय भेरियाँ, पेहोवा, कुरुक्षेत्र।

प्रारंभ से ही भारतीय संस्कृति में राम के आदर्शमयी रूप के साथ-साथ हनुमान का चिंतन भी होता रहा है। राम ने यदि एक आदर्श राजा होने का प्रतिमान स्थापित किया तो हनुमान ने एक आदर्श भक्त और सेवक का।

वाल्मीकि रामायण से लेकर तुलसी के रामचरितमानस में राम के साथ हनुमान के उच्चादर्शों एवं मर्यादाओं की पराकाष्ठा का भी चित्रण किया गया है। आदिकालीन साहित्य से लेकर आधुनिक काल के कवियों तक राम की मर्यादाओं एवं आदर्शों का वर्णन करने की एक सुदीर्घ परंपरा रही है। भारतीय समाज ने राम एवं हनुमान के आदर्शों से स्वयं को सदैव आलोकित पाया है। आज के इस भौतिकवादी युग में जहाँ हर तरह स्वार्थ और अहंकार का बोलबाला है, जातिवाद, भ्रष्टाचार, स्वार्थ और अहंकार, आतंकवाद और नैतिक पतन हर जगह व्याप्त है। ऐसे कलियुगी वातावरण में भारतीय जनमानस को प्रेरणा देने हेतु हनुमान जैसे चरित्र की आवश्यकता है जो बिना किसी प्रकार की कामना किए अपने स्वामी एवं राष्ट्र सेवा के लिए कर्तव्यपरायणता की भावना से परिपूर्ण होकर कार्य करे। इतनी विशेषताएँ एक साथ यदि किसी के चरित्र में देखनी हैं तो हनुमान से बड़ा उदाहरण नहीं हो सकता।

आज देश में नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। चारों तरफ घोर अराजकता का समय है। व्यक्ति की निष्ठा प्रतिपल परिवर्तित हो रही है, उसका विश्वास डगमगा रहा है। ऐसे समय में रामनाम में श्रद्धा एवं विश्वास ही व्यक्ति को इस भवसागर से पार लगा सकता है। इसके लिए सर्वप्रथम अपने आराध्य के प्रति पूर्ण समर्पण व श्रद्धाभाव का होना आवश्यक है। पवनपुत्र हनुमान को राम-नाम में अधिक श्रद्धा है। वे अपने आराध्य के प्रति निष्ठावान हैं—

“हरि अनंत हरि कथा अनंता।

कहहिं सुनिहिं बहुबिधि सब संता।”

हनुमान राम कथा के सबसे बड़े रसिक हैं। वे राम-कथा गायन के साथ-साथ राम के श्रेष्ठ सेवक भी हैं। वे जड़-चेतन सभी में अपने आराध्य राम की सुंदर झाँकी देखने की कोशिश करते हैं। रामचरितमानस में हनुमान की कर्तव्यनिष्ठा का यही भाव देखने को मिलता है—

“हनुमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।

राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ विश्राम ।।”²

राम के प्रति सेवाभाव और कर्तव्यनिष्ठा के प्रति तत्परता का भाव उस समय देखने को मिलता है, जब युद्ध में लक्ष्मण मेघनाद की शक्ति लगने से बेसुध हो जाते हैं और हनुमान लंका से लक्ष्मण के उपचार हेतु सुषेण वैद्य को उठा लाते हैं और एक रात में ही संजीवनी बूटी लाकर राम के प्यारे लक्ष्मण के प्राणों की रक्षा करते हैं। गोस्वामी तुलसीदास हनुमान की प्रशंसा करते हुए लिखते हैं—

“हनुमान सम नहिं बड़भागी, नहिं कोउ रामचरन अनुरागी ।

गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई, बार—बार प्रभुनिज मुख गाई ।।”³

राम हनुमान के सेवाभाव से इतने प्रसन्न हैं कि वे युग—युगांतर तक उनको जीवित रहने का आशीर्वाद देते हैं और अपना आलिंगन प्रदान करते हैं। केवल राम ही नहीं बल्कि माता कौशल्या भी देवी अंजना से हनुमान के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हैं—

“बोली कौशल्या पूजनीय जगती में तुम सा कौन अन्य ।

हनुमान प्रसू को पाकर यह उर्वी गौरवमय हुई धन्य” ।

रघुवंश तुम्हारा ऋणी रहेगा सर्वदैव हनुमज्जननी ।

परिशोध न इस ऋण का संभव, हम ऋणी और तुम सदा धनी” ।।⁴

किन्तु आज स्वार्थवश भाई—भाई की जान लेने पर उतारू है। राम की सेवा के लिए चौदह वर्ष तक वन में जाने को तैयार हो जाते हैं, वहीं आज का मानव जमीन के एक टुकड़े के लिए भाई की हत्या कर देता है। आज परमार्थ नहीं बल्कि स्वार्थ सर्वोपरि है। अपनों के साथ अन्याय करना, उनको धोखा देना आज के मानव की प्रवृत्ति बन चुकी है। मानव हनुमान जैसी निःस्वार्थ सेवा को भूल चुका है। घोर स्वार्थपरता, नैतिक अवमूल्यन, सांप्रदायवाद और क्षेत्रवाद के इस मायाजाल से भरे वातावरण में हनुमान जैसे चरित्रों की आवश्यकता है।

हनुमान संयमित और अनुशासित जीवन के पुंज हैं। ऐसा जीवन व्यक्ति को उत्कृष्टता की ओर ले जाता है। हनुमान असीम शक्तिशाली होते हुए भी स्वयं पर नियंत्रण रखते हैं किन्तु आज का मानव अपना शक्ति प्रदर्शन चाहता है। विश्व की महाशक्तियाँ छोटे देशों को हथियाना चाहती हैं। वे विध्वंसक परमाणु बमों व अन्य मारक हथियारों का प्रयोग कर मानव जाति का विनाश करते हैं। समाज और विश्व में शांति तभी स्थापित हो सकती है जब हम अपने अहं का विगलन कर पूरे विश्व के प्रति समभाव एवं प्रेमभाव रखें। व्यक्ति किसी भी देश का नागरिक हो किन्तु है तो वह मानव ही —

“मैं सत्य चाहता हूँ

युद्ध से नहीं

खड्ग से नहीं

मानव का मानव से सत्य चाहता हूँ” ।⁵

वर्तमान में अपनी शक्तियों का असंयमित प्रयोग ही मानव जाति की पीड़ा का कारण बना हुआ है। ऐसे समय में हनुमान के आदर्शों से प्रेरणा लेकर अपनी शक्तियों का प्रयोग मानव व विश्व कल्याण हेतु करना चाहिए।

आज का मानव अपने कर्तव्यों से विमुख हो रहा है। वह केवल अधिकार की बात करता है। आज के मानव को राम और हनुमान के चरित्र से प्रेरणा लेनी चाहिए। यद्यपि कर्तव्यपरायण व्यक्ति के मार्ग में अनेक बाधाएँ

आती हैं। शायद प्रकृति भी उसके साहस का इम्तिहान लेती है किन्तु जो व्यक्ति विचलित हुए बिना आत्मविश्वास के साथ अपने कर्तव्यपथ पर आगे बढ़ता जाता है, वह अन्ततः अपनी मंजिल को पा ही लेता है। हनुमान समुद्र पार करते हुए अनेक बाधाओं का सामना करते हुए लंका पहुँच जाते हैं और माता सीता की खोज कर लेते हैं—

“तन में रख स्फूर्ति—चपलता
मन में रख विश्वास सुदृढ़
सीता की खोज में लगे थे
हनुमान चहुँ दिशा तत्पर”।⁶

आज रावण रूपी अनेक शक्तियाँ समाज के लोगों का शोषण कर रही हैं। ऐसी आततायी शक्तियों से मुक्ति पाने के लिए हनुमान जैसी बुद्धि और बल की आवश्यकता है। हनुमान सदा शोषितों के पक्षधर रहे हैं। उन्होंने इसी विद्रोह चेतना के कारण बालि, रावण, मेघनाद, कुंभकर्ण व अक्षय कुमार आदि के दलन में अपनी भूमिका निभाई तो दूसरी ओर सुग्रीव, सीता व विभीषण शोषित वर्ग हैं जिनसे न्याय दिलाने के लिए हनुमान अपनी शक्ति का प्रयोग करते हैं।

रावण अपने मायाजाल एवं राक्षसियों की सहायता से सीता को उत्पीड़ित करते हैं। ऐसे में हनुमान लंका पहुँचकर उसके उत्पीड़न से सीता को त्राण दिलाते हैं —

“सीता के पवित्‍य सुसाक्षी, अनायास हनुमान बन गये।
अत्याचारी के प्रति मन में, विद्रोहक कुछ भाव ठन गये”।⁷

जब रावण सीता को अपने पक्ष में नहीं कर पाता तो वह त्रिजटा समेत अनेक राक्षसियों को बुलाकर कहता है कि सीता को उत्पीड़न, उत्पात, उपद्रव और भय से आतंकित कर दो —

“इस विधि मृदुवाणी से उसने चढ़ता रोष उतारा,
तब रावण ने राक्षसियों को त्रिजटा सहित पुकारा।
उत्पीड़न, उत्पात, उपद्रव, त्रास—ताप से घालो।
भीषणता, भय, क्रूर वेग से इसका गर्व निकालो”।⁸

हनुमान का समूचा जीवन ही परोपकार के लिए है। समाज कल्याण हेतु वे अपने जीवन को भी सुरसा रूपी काल के मुँह में दे देते हैं। यही समाज कल्याण की भावना राष्ट्र निर्माण व राष्ट्र कल्याण की भावना में परिणत हो जाती है। देश हेतु हनुमान अपने संपूर्ण जीवन को ही लगा देते हैं। जाम्बवान तो हनुमान के जन्म को ही रामकार्य अर्थात् राष्ट्रकार्य हेतु मानते हैं —

“रामकाज लागि तब अवतारा।
सुनतहि भएउ पर्वताकारा”।।⁹

निःसंदेह आज के विषमतावादी युग में हनुमान के उच्चादर्शों एवं मर्यादाओं की महती आवश्यकता है। समूचा विश्व परमाणु खतरे और तकनीकी विसंगतियों से जूझ रहा है। ऐसे समय में देश को हनुमान जैसे बुद्धिशाली, बलशाली, परोपकारी चरित्र की आवश्यकता है, तभी आधुनिक भौतिकतावादी युग की विपरीतताओं पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

संदर्भ-सूची :

1. रामचरितमानस – तुलसीदास – 6/12वाँ दोहा।
2. रामायण – वाल्मीकि – 7/40/17
3. हनुमान चालीसा – हनुमान स्तवन, पृ. 243
4. रामचरितमानस – तुलसीदास – 6/112वाँ दोहा।
5. वही 5/7वाँ दोहा।
6. वही 92/2वाँ दोहा।
7. वही 5/11/5वाँ दोहा।
8. वही 5/43/3वाँ दोहा।
9. वही 4/29/3वाँ दोहा।

ईमेल : dk6877kk@gmail.com

मो. नं. 8708861229



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 166-173

भाषा एवं साहित्य के विकास में तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता का योगदान

डॉ. टी. अरुणा कुमारी

विभागाध्यक्ष एवं सह आचार्या

हिन्दी विभाग, शासकीय महाविद्यालय (स्वायत्त), पाल्वंचा, जिला भद्राद्री, कोत्तगूडेम।

सार :

पत्रिकाओं के द्वारा भाषा और साहित्य का परिरक्षण होता आ रहा है। शोध प्रमाणों के आधार पर कह सकते हैं कि तेलुगु पत्रकारिता के इतिहास की प्रथम कड़ी 'साहित्यक पत्रकारिता' है। हितवादी पत्रिका, आन्ध्र भाषा संजीवनी, वर्तमान तरंगिणी, सुजन रंजनी, स्वधर्म प्रकाशिनी, कृष्णा पत्रिका, आन्ध्र केसरी, आन्ध्र पत्रिका, सत्याग्रही आदि आरंभिक पत्रिकाओं के साथ साथ आंध्र पत्रिका, आन्ध्र प्रभा, उदयम, आंध्र ज्योति, ईनाडु, वार्ता आदि पत्रिकाएं सामाजिक विकास में समर्पित हैं। भाषा, समाज सुधार, समाचार, साहित्य जैसे भिन्न भिन्न जिम्मेदारियों को लक्ष्य मानकर तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता का आरंभ हुआ है। अर्थात् तेलुगु समाज के पुनरुज्जीवन एवं पुनरुत्थान को ही अपना लक्ष्य मानकर चलने वाली तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता अनेक धक्के खाते हुए, खुद को सजते-सँवरते हुए भी युगीन आवश्यकताओं को परिलक्षित, प्रतिबिंबित करने की क्षमता से निहित है।

बीज शब्द : भाषा और साहित्य, जिम्मेदारी, पुनरुज्जीवन, पुनरुत्थान।

भाषा एवं साहित्य के विकास में तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता का योगदान :

पत्रिकाओं के द्वारा भाषा और साहित्य का परिरक्षण होता आ रहा है। शोध प्रमाणों के आधार पर कह सकते हैं कि तेलुगु पत्रकारिता के इतिहास की प्रथम कड़ी 'साहित्यक पत्रकारिता' है। तेलुगु पत्रकारिता की आरंभिक दशा से लेकर आधुनिक युग के विकास तक साहित्यक स्तर की अहमियत को बनाये रखने का प्रयास अनवरत किया गया है।

तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता का इतिहास एवं विकास :

तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता इतिहास के आरंभिक पन्नों में ईसाई धर्म प्रचार से संबंधित पत्रिका के रूप में 'सत्यदूत' का नाम लिया गया है जो 1835 में निकाली गई है। उसी समय 'वृत्तान्तिनी' का प्रचुरण व्याकरण युक्त भाषा में हुआ है। 1842-50 के बीच निकली 'वर्तमान तरंगिणी' इसलिए विख्यात हुई कि इसमें तेलुगु ग्रंथों का विवरण उनके मूल्य के साथ दिया गया है जिनमें प्रमुखतः महाभारत, प्रबंध काव्य एवं शतक साहित्य से संबंधित हजारों रचनाओं का जिक्र हुआ है।

आश्चर्य की बात यह है कि तेलुगु भाषा में ग्रंथों का मुद्रण एवं पत्रिकाओं के प्रचुरण के बीच में एक शताब्दी का अंतर रहा। 18वीं शती के आरंभ में ग्रंथों, किताबों का मुद्रण प्रारंभ हुआ तो 19 वीं शती के आरंभिक दशकों में पत्रिकाओं का प्रकाशन आरंभ हुआ। 'हितवादी पत्रिका' 1848-62, जो एडमण्ड शार्की के द्वारा प्रकाशित थी, धार्मिक समाचार और विदेशी समाचार को छापने में मशहूर रही और इस में व्यावहारिक भाषा को महत्व दिया गया है। 1861 का 'दिन वर्तमानी' में तत्कालीन समाचार के प्रकाशन पर ज्यादा ध्यान दिया। इसके उपरांत समाज सुधार, भाषा आन्दोलन, साहित्य के प्रकाशन को प्राथमिकता देते हुए तेलुगु पत्रकारिता का विकास हुआ है।

पत्रकारिता और साहित्य की अटूट मित्रता कोक्कोंडा वेंकट रत्नम पन्तुलु द्वारा 'आन्ध्र भाषा संजीवनी' में 'समाचार पत्रों के लक्षणों' को पद्य विधा में लिखकर प्रकाशित करने से मानी जाती है। कन्दुकूरी विरेशलिंगम जी के समय में तो साहित्य, सुधारवादिता और पत्रकारिता का सम्मिलित रूप त्रिवेणी धारा बनकर विस्तारित हुई।

'वर्तमान तरंगिणी' ख1842, पत्रिका में 'पत्रसाहित्य' को प्रमुखता दी गयी है जिसके संपादक थे पुव्वाडा वेंकट रत्नम, इसके मालिक थे सय्यद रहमतुल्ला। सी.पी.ब्राउन ने 'महाभारत' से लेकर श्मनु चरित्रा', 'वसु चरित्रा' जैसे प्रबंध काव्यों को, 'वेमना के पद्य', 'सुमती शतक' जैसे हजारों तेलुगु काव्य एवं कहानियों को काल गति में सड़ने-बहने से रोका, उनका उद्धार किया और उन्हें कालजयी बनाया। उन्होंने प्रबंध काव्यों के लिए अनुक्रमाणिका तैयार किया अर्थात् ओज विहीन तेलुगु साहित्यिक पुनर्विकास के द्वार खोले थे महाशय सी.पी.ब्राउन।

तेलुगु शब्दकोश 'शब्द रत्नाकरम' को तैयार करनेवाले बहुजनपल्ली सीतारामाचार्यलू बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न भाषा वैज्ञानिक एवं भाषाविद थे। 'सुजन रंजनी' पत्रिका ख1864-67, में महान तेलुगू लेखक एवं वैयाकरणिक चिन्नयसूरि के रचनाओं का प्रकाशन हुआ था, जिसके संपादक थे विंजमूरी कृष्णमाचार्यलू, बहुजनपल्ली सीतारामाचार्यलू, कारुमंची सुब्बारायुडु आदि। इस पत्रिका के द्वारा पाठकों में अनुवाद कला को बढ़ाने के लिए अंग्रेजी शब्दों के विभिन्न तेलुगु अर्थ छपते थे। लेख और निबंध विधा को 'तत्त्व बोधिनी' पत्रिका ने प्रोत्साहित किया, जिसमें विधवा नारी पुनर्विवाह, बाल विवाहों का विरोध, बालिका साक्षरता आदि सामाजिक उन्नयन से संबंधित लेख प्रकाशित हुए।

कोक्कोंडा वेंकटरत्नम जी द्वारा सम्पादित 'आन्ध्र भाषा संजीवनी' ख1871, पत्रिका ने 'साहित्यिक भाषा आन्दोलन' का समर्थन किया और प्राचीन संस्कृति के गुणगान करनेवाला साहित्य का प्रकाशन जोरों से करने लगा। यही नहीं वड्डादि सुब्बारायुडु के शोकगीत का प्रकाशन भी आंध्र भाषा संजीवनी में हुआ जो पत्रिकाओं में शोकगीतों के प्रचुरण एवं प्रकाशन में प्रथम कदम माना जाता है। तेलुगु पत्रिकाओं के नाम 'आन्ध्र' शब्द से आरंभ होना 'आन्ध्र भाषा संजीवनी' से ही शुरू हुआ है। बंदर से उमा रंगनयाकुलू के 'पुरुषार्थ प्रदायिनी पत्रिका 1872,' ने अनुवाद विधा का प्रोत्साहन किया एवं तेलुगु में विज्ञान से संबंधित रचनाओं के प्रकाशन पर भी जोर दिया। द्वैतम कोटेश्वर शास्त्री के 'स्वधर्म प्रकाशिनी' 1873, और ओगिराला जगन्नाथ कवि के 'सुधिरंजनी' पत्रिकाओं ने भी साहित्य की सेवा करते हुए सामाजिक भाषा विकास में हाथ बँटाया।

साहित्यिक पत्रकारिता एवं स्वतंत्रता आंदोलन :

आन्ध्र प्रान्त में स्वतंत्रता आंदोलन के आरंभिक काल में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। राष्ट्रीय कांग्रेस के दार्शनिक के रूप में गांधीजी के पदार्पण से विस्तृत साहित्य सृजन किया गया है ——— ऐसा एक भी क्षेत्र नहीं छूटा है जिसमें गाँधीवाद का प्रभाव न हो। गरिमेल्ला, चिलकमर्ती, जाषुआ आदि कवियों ने गाँधी

की स्तुति करते हुए आन्ध्र प्रान्त में राष्ट्रीय आन्दोलन को व्याप्त करते रहे एवं जनता को जागृत करते रहे। जनता को राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने की प्रेरणा 1900-1910, कृष्णा पत्रिका, आन्ध्र केसरी, आन्ध्र पत्रिका 1920-30, सत्याग्रही, कांग्रेस 1930-40,, आन्ध्र प्रभा आदि पत्रिकाओं से निरंतर प्राप्त होता रहा। 1930 के 'नमक सत्याग्रह' के अवसर पर, स्वतंत्रता आन्दोलन को प्रोत्साहन देते हुए कांग्रेस पत्रिका ने जो विशेषांक निकाली, उनसे पूरे देश में हलचल मच गया। पत्रकार, संवाददाता एवं पाठक सब एक जुट होकर स्वतंत्रता आंदोलन के रथ को चलाते रहे। निरक्षर व्यक्ति भी पत्रिका को अपने हाथ में रखकर गर्व महसूस करता था। पत्रिका में छपी खबर का मतलब है लक्ष्मण रेखा, भगवदगीता!

'आंध्र पत्रिका' स्वतंत्रता आन्दोलन के समय में ही नहीं बल्कि पृथक आन्ध्र राज्य के आन्दोलन में भी अपनी भूमिका निभाई। नाला जी अपने संपादकीय से इस आन्दोलन को प्रोत्साहित करते आए फलतः अलग आन्ध्र राज्य के व्यवस्थापन में उनका साहित्य एक प्रमुख अंग बन गया। तदुपरांत 1969-70 में पृथक तेलंगाना आन्दोलन शुरू हुआ जो सपना 2014 में साकार हुआ।

कन्दुकूरी विरेशलिंगम पन्तुलु :

'विवेक वर्धिनी' पत्रिका से अपने लेखन कार्य आरंभ करनेवाले कन्दुकूरी समाज सुधार कार्यक्रमों के प्रचार केलिए साहित्य रूपी अस्त्र लेकर, जनता के सामने उपस्थित हुए। नाटक, एकांकी, प्रहसन, उपन्यास, निबंध एवं लेख, आलोचना, वैज्ञानिक-शास्त्र ग्रन्थ आदि अनेक विधाओं के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किए। वे स्पष्ट कहते थे कि 'विवेक वर्धिनी' पत्रिका के स्थापन में दो लक्ष्य थे, एक था भाषा विकास और एक था समाज सुधार जो सामाजिक सांस्कृतिक उन्नयन के दो आंखें थे।

बहुमिकही प्रतिभा सम्पन्न लेखक विरेशलिंगम 'सत्य संवर्धिनी', 'चिंतामणि', 'राजयोगी', 'हास्य संजीविनी', 'सतिहित बोधिनी' आदि पत्रिकाओं के द्वारा तेलुगु भाषा को परिपुष्ट करने लगे साथ-साथ 'गोदावरी विद्या प्रबोधिनी', 'पुरुषार्थ प्रदायिनी' पत्रिकाओं में लेख भी लिखने लगे। 1895 अक्तूबर में कन्दुकूरी जी से लिखा 'सरस्वती नारद विलाप' व्यंग्य रचना 'सत्य संवर्धिनी' से प्रकाशित हुई। इतना ही नहीं 'अमुद्रित ग्रन्थ चिंतामणि', 'मित्रविंदा परिणयम', 'हरिश्चंद्रोपाख्यानम', 'तिम्मना भर्तृहरि शतकमु', 'वेंकटेश्वर विलासम', 'चंद्रांगदा चरित्रा', 'भोगिनी दण्डकम', 'उत्तरहरिश्चंद्रोपाख्यानम', 'वसुंधरा परिणयम', 'यादव पांडवीयम' आदि प्राचीन एवं अमुद्रित ग्रंथों का प्रकाशन करते हुए आप तेलुगु साहित्य एवं संस्कृतिक विकास के इतिहास में खुद के पन्ने जोड़े।

व्यावहारिक भाषा आन्दोलन :

गुरजाडा ने 'कन्याशुल्कम' नामक नाटक को व्यावहारिक भाषा में लिखकर समकालीन पत्रकारों, कवियों और लेखकों के मार्गदर्शक बने। उस समय के पत्रिकाओं में कवियों का इतिहास एवं जीवन चित्रण ही नहीं बल्कि समाज सुधारकों के जीवनियों को भी व्यावहारिक भाषा में प्रकाशित करने की प्रथा आरंभ हुई है। तेलुगु में व्यावहारिक भाषा आन्दोलन का प्रवर्तक हैं 'गिडुगु राममूर्ति पन्तुलु'। स्वयं के संपादन में आपने 'तेलुगु पत्रिका' नामक पत्रिका को 1919 सितंबर में पर्लाखेमुंडी खोडिशा, से प्रकाशित किया। पिठापुरम के महाराजा जी की पत्रिका 'जनवाणी' 1936, व्यावहारिक भाषा आन्दोलन का आश्रय बना। 'जनवाणी' पत्रिका के माध्यम से तापी धर्माश्रम ने पूर्ण रूप से व्यावहारिक भाषा का विनिमय करके उसको विकसित किया। उस समय के वामपंथीय पत्रिकाएँ, स्त्रीवादी पत्रिकाएँ, जातिवादी पत्रिकाएँ, दलित वादी पत्रिकाएँ, धार्मिक पत्रिकाएँ, नागीरेड्डी और चक्रपाणी

जी का बालसाहित्य की पत्रिकाएँ चंदामामा आदि — सब पत्रिकाएँ समाचार प्रसार के साथ-साथ भाषा एवं साहित्य को प्रधान लक्ष्य मानकर चलने लगे, जिन को जनता ने स्वीकार किया और अपनाया। व्यावहारिक भाषा की प्रचुरता के बाद ही इन सब पत्रिकाओं का विकास हुआ और इस व्यावहारिक भाषा विनिमय आम जनता के भावनाओं को व्यक्त करने का मार्ग सुगम किया।

आधुनिक साहित्यिक पत्रकारिता :

माना जाता है कि तेलुगु साहित्य में 1900, कट्टमंची रामालिंगा रेड्डी के 'मुसलाम्मा मरणम' खूबूढ़ी की मौत, काव्य से आधुनिक कविता का आरंभ हुआ है। विश्व विख्यात तेलुगू कवि एवं आलोचक सी.नारायण रेड्डी ने निर्धारित किया कि 'गुरजाडा अप्पारावु' और 'रायाप्रोलू सुब्बरावु' तेलुगु कविता के दो युगकर्ता कवि एवं तेलुगु कविता नवविकास के आरंभिक स्रोत हैं।

आंध्र पत्रिका :

साहित्य केलिए हर रविवार को 'सारस्वतानुबंधमु' के शीर्षक से एक विशेषांक को निकालने की प्रथा इसी पत्रिका ने 1921 में आरंभ किया जबकि पहले विशेषांक में 'पानुगंटी' जी के 'साक्षी' लेखों का प्रकाशन किया जो तेलुगु भाषा एवं संस्कृति के विकास में पथ दीपक बने रहे। आन्ध्र जनता के सम्यक संस्कृति चिंतन को प्रतिबिंबित करने वाले महान कवि एवं लेखक रायसम वेंकट शिवुडू, मानपल्ली रामकुष्ण कवि, नोरी नरसिंह शास्त्री, कवि कोंडला, आचंटा लक्ष्मीपति, माडपाटी हनुमंतु रावू, गरिमेल्ला सत्यनारायण आदि की रचनाओं का प्रकाशन करते हुए आन्ध्र पत्रिका ने अनुपम साहित्य सेवा की। इस पत्रिका के मालिकों ने 'आन्ध्र सचित्र वारपत्रिका साप्ताहिक,' का आरंभ किया, जिसके संपादक अवटिपल्ली नारायणराव एवं सह-संपादक कोटंराजू पुन्न्याथा थे। तल्लिसेट्टी रामाराव जी से रचा गया पहला तेलुगु कार्टून ख्यंग्य चित्र, का प्रकाशन भी इसी पत्रिका में प्रकाशित हुआ इतना ही नहीं प्राचीन साहित्य, अवधान विधा पर लेखों के साथ-साथ ज्ञान पीठ पुरस्कार स्वीकर्ता विश्वनाथ सत्यनारायण जी के 'वेई पडगलू' उपन्यास को सीरियल के रूप में प्रकाशित किया है आंध्र पत्रिका ने। बाल गंगाधर तिलक, गोखले, गांधीजी की रचनाओं के अनुवादों का प्रकाशन भी इस पत्रिका में हुआ। ऐसा माना जाता था जो साक्षर आंध्र पत्रिका को नहीं पढ़ेगा वह तेलुगु भाषी नहीं कहलाएगा।

आन्ध्र प्रभा :

आधुनिक तेलुगु साहित्यिक पत्रकारिता एवं तेलुगु संस्कृति के संरक्षण के लिए कटिबद्ध ग्रंथों के प्रकाशन को इस पत्रिका ने प्रमुखता दी। सुरवरम प्रताप रेड्डी के 'अन्ध्रों का सामाजिक इतिहास' ग्रन्थ को जब 'केन्द्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार' प्राप्त हुआ था तब 'अपने पुरख' ख्दमारे बुजुर्ग, शीर्षक से सम्पादकीय लिखा गया है। अर्थात् आलोचनात्मक एवं समीक्षात्मक लेखों का प्रकाशन भी पत्रिकाओं में आरंभ हुआ जो भाषा एवं साहित्य के विकास में एक अलग पहलू है। सुरवरम जी ने भ्रमरगीत ख्दुम्मेदा पदालू, शंकर पदालू, निवाली पदालू श्रद्धा गीत, वालेशु पदालू, वेन्नेला पदालू, रोकटी पाटलू, बोम्मलाटलू, कोलाटम, चिंदु, जक्किणी, पेरिणी, प्रेंखणम, उप्पेना पट्टेलाटा, बोंगाराला आटा, कोल्ला पंदेम, पुली जूदम, पच्चीस आदि विभिन्न विधाओं और साधनों के द्वारा तेलुगु समाज के ग्रामीण जीवन का चित्रण प्रस्तुत किया जिसका प्रचुरण एवं प्रकाशन आन्ध्र प्रभा पत्रिका से सुसाध्य हुआ। साहित्य और संस्कृति को सम्पादकीय लेखन में उच्च स्थान देते थे तत्कालीन पत्रकार।

'नार्ला' जी खुद बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। अतः 'साहित्य कला वेदिका' नामक विशेष शीर्षक के

माध्यम से विभिन्न साहित्यिक विधाओं को प्रोत्साहित करते आए। आपके संपादन में श्रीश्री, विद्वान विश्वम, के. सभा, मालतीचंदूर जैसे महान लेखक इस पत्रिका में परिचर्या करते थे। 16 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्ति के आनंदमयी भावना को 'जय जय जय प्रिय भारत जनयित्री दिव्य धात्री' के नाम से पत्रिका के प्रधान शीर्षक के रूप में जो कवितात्मक व्यक्तीकरण किया है स्पष्ट है कि पत्रिकाओं में साहित्य को उच्च स्थान प्राप्त है। इस शीर्षक को आगे चलकर देवुलपल्ली कृष्णशास्त्री जैसे महान कवि ने अपने गीत केलिए 'मुखड़े' के रूप में स्वीकार किया।

उदयम :

नामी फिल्म दर्शक दासरी नारायणराव 'उदयम' पत्रिका के मालिक थे। 1984 दिसंबर 29 से आरंभ हुई इस पत्रिका के संपादक के रूप में ए.बी.के. प्रसाद व्यवहृत हुए। इस पत्रिका का आरंभ ही तेलुगु पत्र-पत्रिका क्षेत्र में हलचल मचा दिया। इस में नव नवीन साहित्य को एवं स्थानीय बोलियों में लिखे गए लेख एवं रचनाओं को ज्यादा महत्व दिया गया है। पोत्तूरी, गज्जेला मल्ला रेड्डी, सतीश चंदर, पतंजलि, रामचंद्रमूर्ती, के.श्रीनिवास आदि साहित्यकार पहले इस पत्रिका में उप संपादक रहे, वे आगे चलकर प्रधान संपादक बने। शीर्षक लेखन में नए संप्रदायों का अविष्कार हुआ है, उदयम पत्रिका इस केलिए प्रसिद्ध हुई। 'नामिनी' रायलसीमा की बोली को, 'भानुमूर्ति' तेलंगाना की बोली को और 'गोपालकृष्ण' नेल्लुरु की बोली को अपनाकर रचना कर्म करते थे।

साहित्यिक पत्रकारिता में हेतुवादीय आन्दोलन का चित्रण :

हेतुवादीय आन्दोलन के प्रभाव से नाटकों की समीक्षा तापी धर्मारव ने 'प्रजामित्रा' पत्रिका में की। भिन्न दृष्टिकोण, पाश्चात्य मानदंडों के आधार पर प्राचीन रूढ़िवादी साहित्य का पुनर्विमर्श करते हुए आधुनिक आवश्यकताओं के अनुकूल साहित्य का प्रस्तुतीकरण करते थे। हेतुवादीय आन्दोलन से गोपराजु नारायणराव गो. रा.1902-75, एवं नार्ला वेंकटेश्वरराव तेलुगू पत्रकारिता के क्षेत्र में शक्तिशाली संवाददाता बने। गो.रा.जी के 'संघम' 1950,, 'आर्थिक समता' 1953, पत्रिकाओं में गांधीजी के भावनाओं का प्रचार किया गया है। तेलुगु पाठकों के लिए यह अविस्मरणीय सत्य है कि एक संवाददाता एवं आलोचक के रूप में नार्ला जी ने तेलुगु साहित्यिक पत्रकारिता के विकास के लिए किस प्रकार अथक प्रयास किए थे, नवीन द्वार खोले थे। लगभग पच्चीस हजार ग्रंथों को इन्होंने अपने जीवन के अंतिम चरण में हैदराबाद के आंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय को समर्पित किया, जिन ग्रंथों को सप्रयास एकत्रित किया, खुद लिखे एवं आलोचना किए।

वामपंथीय पत्रिकाओं में साहित्यिक पत्रकारिता :

1939 दिसंबर में राष्ट्रवादी एवं देशभक्त धूलिपाल्ला कोटय्या आचार्य एवं एन.जी.रंगा के समाजवादी भावनाओं से परिपूर्ण करपत्रों को जनता के सामने प्रस्तुत किए। तुम्मला वेंकटरामय्या ने 'खेदमु' कहानी लिखी जो अत्यंत सहज प्रभावशाली रहा। वेंकटरामय्या और कोटय्या के रचनाओं पर मद्रास सरकार ने 'प्रेस एक्ट' की तहत मुकदमा चलाया। इनके साथ-साथ दुर्भा कृष्णमूर्ति, यार्लागड्डा चिलकम्मा, चलसानी वासुदेव राव, काट्रगड्डा नारायणराव ने भी वामपंथीय भावनाओं से ओत प्रोत होकर अपने कलम को आगे बढ़ाये जिसमें साहित्य विकास के साथ-साथ सामाजिक रूढ़ियों पर किए गए प्रहारों की गूँज सशक्त सुनाई देती थी।

1934 में 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो' के विमोचन के अवसर पर पुच्चलपल्ली सुंदरय्या द्वारा लिखित 'कम्युनिस्ट करपत्रम' का प्रकाशन हुआ जो विशेष रूप से भाषा एवं भावनाओं का समन्वय था। बंदर से गढ़े

लिंगय्या 'प्रभा' पत्रिका चलाते रहे तो पुच्चलपल्ली सुंदरय्या, कम्भपाटी सत्यनारायण, महुकूरी चन्द्रशेखर राव, पोन्नम वीरराघवय्या, तुम्मला वेंकटरामय्या, कोसरजू शेषय्या, रावी अम्मय्या, बोडडू बापिराजू, कविकोंडला वेंकट राव, गुडीपाटी वेंकटाचलम, मुनिमणिक्यं नरसिंहाराव, चित्रपु हनुमंत राव आदि साहित्यकार अपनी रचनाओं से साहित्यक पत्रकारिता को परिपुष्ट करते रहे, जन जागृति की ओर इशारा करते रहे। इसी करपत्रिका में जनक्रांति के प्रतीक के रूप में 'एर्रजंडा लाल झंडा,' गीत का प्रकाशन हुआ जो आज भी जनता के जुबानों पर सत्ता के विरोध तलवार बनकर चलती है। सेट्टी ईश्वर राव के द्वारा 1944-46 के बीच मद्रास से निकाली जाने वाली 'अभ्युदय' नामक मासिक पत्रिका तेलुगु साहित्य के विकास में सहारा देने वाली प्रमुख पत्रिका है। राजमंझी में मुद्दुरी अन्नपूर्णय्या 1937, की 'नवशक्ति', बेजवाडा में 'प्रजाशक्ति' 1942, आदि पत्रिकाओं में ग्रामीण शब्दों, सामान्य वाक्यों से भरे लेखों का प्रकाशन करते थे, आम से आम जनता को भी आसानी से समझ आने की शैली इनमें दिखाई देती है। कुसुम धर्मन्ना ने राजमंझी से निकलती अपनी 'जयभेरी' 1937, साप्ताहिक पत्रिका से तेलुगु साहित्यक पत्रकारिता में अपने विशेष स्थान को सहेज रखा। 'चिच्चुला पिडुगु' नाटक के लेखक थे रामाचंद्रुनी वेंकटप्पा, अपने भ्रष्टाचार मुक्त, ईमानदारी पत्रकारिता के कारण ब्रिटिश शासन के समय गोदावरी जिला के कलेक्टर सी.पी.ब्राउन के प्रशंसा पात्र हुए एवं जनवादी, मानवतावादी संपादक के रूप में विख्यात हुए।

1966 में जडचर्ला से निकली 'सृजना' पत्रिका आधुनिक साहित्यकारों का सृजन सदन माना जाने लगा जिसके पहले संस्करण का संपादन 'कालोजी' ने किया जो तेलुगू जनता के लिए सदा स्मरणीय कवि हैं। अंपशय्या नवीन, वरवरराव, नरसिंहा रेड्डी आदि क्रियाशील लेखकों ने इस पत्रिका को साहित्यक चेतना से परिपुष्ट किए। रंगनयाकम्मा, कोत्तपल्ली रविबाबू, निखिलेश्वर, निर्मालानन्दा, दिविकुमार आदि लेखक वामपंथीय भावना से भरपूर हैं विशेषकर लघुमनव के पक्षधर हैं। चंझ पुल्ला रेड्डी, तरीमेल्ला नागिरेड्डी के द्वारा पीपुल्स वार की पत्रिका के रूप में 'पिलुपू' आवाज, निकाली और इसके बाद निकली चंझ पुल्ला रेड्डी का 'विमोचन' जो समाज को रूढ़िवादिता एवं अंधविश्वास के बंधनों से विमुक्त होने की प्रेरणा दी।

निजाम प्रान्त में 'मादिरी भाग्य रेड्डी वर्मा' ने 'आदि हिन्दू', 'भाग्य नगर' नामक पत्रिकाओं का संचालन किया, आपने ब्रह्म समाज के प्रभाव से 'आदि हिन्दू महासभा' को भी व्यवस्थित किया, सामाजिक चेतना को व्याप्त करने एवं अपने अधिकारों के लिए लड़ना सिखाने में सदा दो कदम आगे रहे।

समकालीन पत्रिकाएँ एवं साहित्यक पत्रकारिता की जिम्मेदारी :

इतिहास के पन्नों में देख सकते हैं कि अनेक तेलुगु पत्रिकाएँ, विशेषकर दैनिक समाचार पत्र विभिन्न उद्देश्यों एवं आदर्शों को लेकर समाज के सामने उपस्थित हुए थे, पर कुछ अनगिनत कारणों से बंद भी हो गए। समस्त प्रतिकूलताओं को झेलते हुए विशेष उद्देश्यों के आधार पर चलते हुए, अपने अस्तित्व को स्थिर रखनेवाले कुछ तेलुगु पत्रिकाओं का वर्चस्व इस प्रकार है :—

आंध्र ज्योति :

नार्ला वेंकटेश्वरराव के संपादन में 1960 में के.यल.यन.प्रसाद, जलगम वेंगलराव, अक्किनेनी नागेश्वरराव, मुल्लपूड़ी हरिश्चंद्रप्रसाद की आर्थिक सहायता से यह पत्रिका विजयवाड़ा से निकली, जो आज भी अपनी ईमानदारी एवं जिम्मेदारियों का वहन करने निडरता के आधार पर कर्मनिष्ठ है। उनका एकमात्र नारा है 'हमारा अक्षर आपका औजार'।

आन्ध्र भूमि :

गो.रा.शास्त्री के संपादन में 1960 में इस पत्रिका का आरम्भ हुआ ए.बी.के प्रसाद, के.वै.यन.पतंजलि, सी. कनकाम्बर राजू इसके भूत पूर्व संपादक रहे, आज सीमित दायरे में साहित्य सेवा कर रहा है। इसका साप्ताहिक संकलन कहानी प्रतियोगिताओं के द्वारा लेखकों की सृजन शीलता एवं सामाजिक दायित्व को प्रोत्साहन दे रही है।

ईनाडु :

चेरुकूर रामोजी रावु के संपादन एवं स्वामित्व में निकली इस दैनिक पत्रिका में रविवार के विशेषांक के एक पन्ने में ग्रंथों का विवरण दिया जाता है जिस में लेखक का नाम, ग्रन्थ का नाम एवं प्रकाशक आदि सूचित होते हैं। कहानी के साथ-साथ इस में भिन्न प्रकार के विषयों पर निबंध लिखे जाते हैं जो आधुनिक युवा को भी पढ़ने में मजबूर करती हैं। इन्हीं की ओर से विपुला एवं चतुरा नामक मासिक पत्रिकाएँ निकाली जाती हैं जिन में मौलिक साहित्य के साथ-साथ अनुवाद साहित्य को भी अधिक प्रमुखता दी जाती है। 2012 में तेलुगु भाषा, संस्कृति एवं साहित्य के विकास के लिए 'तेलुगु वेल्गु' नामक एक मासिक पत्रिका आरंभ हुआ है, बालक वर्ग तक इसमें रुचि लेते हैं और मातृभाषा की मधुरता का आस्वादन कर रहे हैं। परिवर्धित पत्रकारिता में संस्मरणात्मक, कवितात्मक शैली से भरे लेखों, निबंधों को ईनाडु पत्रिका में देख सकते हैं।

वार्ता :

संघी भाइयों के स्वामित्व एवं में ए.बी.के प्रसाद के संपादन में 1996 फरवरी में यह पत्रिका निकली। नयी शैली से साहित्यिक पत्रकारिता को इस में प्रधानता दी गयी है। जो आज भी समकालीन विषयों एवं युगीन आवश्यकताओं को समर्थकता पूर्वक व्यक्त कर रहे हैं।

आधुनिक तेलुगु साहित्यिक पत्रकारिता में ए.बी.के प्रसाद विशेष पहचान रखने वाले संपादक हैं। ऐसी कोई पत्रिका नहीं है जिसको आप नहीं जानते या फिर जिस में आपने काम नहीं किया हो, आरम्भिक काल से लेकर तेलुगु पत्रिकाओं के यथार्थ स्थिति एवं स्वरूप को जानने वाले, समझने वाले महान पत्रकार आप ही हैं। इसलिए आप जिन पत्रिकाओं में काम किया, उन सब में साहित्यिक मूल्यों एवं प्रसंगों को पत्रकारिता में उचित स्थान दिलवाया। 'साहित्य एवं संपादकीय' शब्दों को मिलाकर आपने 'साहित्यकीय' नाम से रविवार के संपादकीय टिप्पणियाँ विशेष ध्यान से लिखते थे ताकि भाषागत एवं भावगत सामाजिक चेतना सदा चले।

भाषा, समाज सुधार, समाचार, साहित्य आदि भिन्न भिन्न जिम्मेदारियों को लक्ष्य मानकर तेलुगु साहित्यिक पत्रकारिता का आरंभ हुआ है। अर्थात् तेलुगु समाज के पुनरुज्जीवन एवं पुनरुत्थान को ही अपना लक्ष्य मानकर चलनेवाली तेलुगु साहित्यिक पत्रकारिता अनेक धक्के खाते हुए, खुद को सजते-सँवरते हुए भी युगीन आवश्यकताओं को परिलक्षित, प्रतिबिंबित करने की क्षमता से निहित है।

रेंटाला वेंकट सुब्बारावु के प्रस्ताव से जब 'कृष्णा पत्रिका' आरंभ हुई है, तब से लेकर कोंडा वेंकटप्पय्या, दासु नारायण रावु, अवटिपल्लि नारायण रावु, मुट्नूरि कृष्णारावु, आदि संपादक उभरकर आये हैं। इन के बाद काशीनाथुनी नागेश्वर रावू, पोत्तूरी वेंकटेश्वर रावू, ए.बी.के प्रसाद का युग आया। तेलुगु पत्रकारिता को लगभग 200 सालों का इतिहास है। सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आन्दोलनों में भाग लेते हुए, विशिष्ट कार्यक्रमों को सूचित करने वाली पत्रिकाएँ, विभिन्न वर्गों के अधिकारों का संरक्षण करने के लिए चलाए गए जन आन्दोलनों का

समर्थन करने वाली पत्रिकाएं आधुनिक युग की देन हैं। इतिहास साक्षी है कि प्राथमिक स्तर पर सामाजिक आन्दोलन को सहारा देने वाली कुछ पत्रिकाएं बाद में स्वतंत्रता आन्दोलन, ग्रंथालय आन्दोलन आदि अन्य राजनैतिक आन्दोलनों के सहायक बने।

आधुनिक युग में तेलुगु पत्रिका क्षेत्र में साहित्य की प्रधानता कुछ कम हुई है, पर शीर्षकों की कवितात्मकता दुगुनी हुई है। पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से शीर्षिकाओं और लेखों में अंग्रेजी की अधिकता भी दिखाई दे रही है। आज अनुवादों का प्रकाशन अधिक मात्रा में हो रहा है जो एक सुखद परिणाम है। समकालीन पत्रकारिता नयी दशा की ओर तेजी से बढ़ रही है।

सन्दर्भ ग्रंथ :

1. इन्नय्या. एन., धर्माव. सी. श्री राम मूर्ती मन्डवा संपादक वर्ग, श्री गोरा शास्त्री 50 जन्म दिन अभिनन्दन संस्करण, गोरा शास्त्री सम्मान समिती, कर्नूल 1969
2. कृष्ण मूर्ती.पी. 'नार्ला जी के जीवन विशेषतायें—संस्मरण नार्ला जी के शत जयंती का विशेष संस्करण, संपादक वेलागा वेंकटप्पय्या, प्रकाशक—कोल्ली शारदा।
3. गोपलरेड्डी बंडी ख्बंगोरे, जर्नलिजमचरित्र ब्राउन जबुलू संकलन, 1832—1857
4. नरसिंहमूर्ती यू.ए.शताब्दियों के बाद भी गूँजती आवाज, ईनाडु दैनिक, सं। चेरुकूरि रामोजी रावु, हैदराबाद 29 अगस्त 2014
4. नारायण मूर्ति भोगाराजू विधवा विलापम, आंध्र पत्रिका 1911 उगादी का विशेषांक।
5. नारायण मूर्ति भूपति, 'कलम योधुडू कुसुम धर्मन्ना' दलित शांखारावम, सं.डॉ.यामला सुदर्शनम, संस्करण 10, मदनपल्ली, नवम्बर 2004
6. नारायण रेड्डी. सिंगीरेड्डी 'अधुनुक आंध्र कवित्वमु – सम्प्रदयामुलू प्रयोगामुलू' विशलालंध्र पब्लिशिंग हाउस, हैदराबाद, 1999.
7. ब्रह्मय्या शास्त्री काशीभट्टला, पुरातन आंध्र वार्तापत्रिकलू, आंध्र पत्रिका उगादी विशेषांक 1920.
8. मंगम्मा जोलापलेम, 'तेलुगुलो अच्चयिना तोली पुस्ताकालू' आंध्र प्रदेश तेलुगु अकादमी, 2001

arunakumari.tata@gmail.com

Mobile no. 9440973384



औपनिवेशिक भारत में महिलाओं के कानूनी अधिकार : एक अध्ययन

सुनीता कुमारी

पीएच.डी. स्कॉलर,

इतिहास विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार।

सारांश :

किसी भी सभ्य समाज की प्रगति का आंकलन वहाँ की महिलाओं की स्थिति से लगाया जा सकता है। अगर भारतीय महिलाओं की स्थिति पर हम दृष्टि डाले तो स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है कि उनकी स्थिति समय के साथ बदलती रही है।

वैदिक काल में स्त्रियों को शिक्षा ग्रहण का अधिकार था और वैचारिक चर्चाओं तथा अनुष्ठानों में शामिल होने का भी अधिकार था। परंतु फिर भी इसका सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता है। बदलते समय में सामाजिक व्यवस्था महिलाओं के प्रति अधिक कठोर होती गई और पितृसत्तात्मक वर्चस्व के कारण स्त्रियों की स्वतंत्रता धीरे-धीरे सीमित और नियंत्रित किया जाने लगा। मध्यकालीन समाज में बाल विवाह, सती प्रथा और विधवाओं के प्रति कठोर सामाजिक व्यवहार जैसी कुरितियाँ समाज में अपनी जड़े जमा चुकी थी।

भारतीय समाज में महिलाओं की दयनीय थी। अधिकांशतः महिलाओं का जीवन घर और परिवार के दायरे तक ही सीमित थी। हिन्दू-मुस्लिम वर्गों की स्त्रियाँ समान रूप से आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा के लिए पुरुषों पर ही आश्रित थी। उन्हें शिक्षा का अधिकार न था। महिलाओं से यह उम्मीद की जाती थी कि वे पारिवारिक परंपराओं का पालन करें। बाहर की दुनियाँ उनके लिए नहीं थी। पारंपरिक विचारधारा में पत्नि और माँ की भूमिका में स्त्री की प्रशंसा तो की गई है, मगर एक व्यक्ति के रूप में उसे बहुत हीन सामाजिक स्थान दिया गया था। स्त्रियों को अपनी दासता को स्वीकार कर लेने के लिए, बल्कि उसे सम्मान का प्रतीक समझने का पाठ भी पढ़ाया जाता था। समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों के कारण उनका जीवन अत्यंत कठिन हो गया था। जैसे— सती प्रथा, बाल विवाह, बहु पत्नी-प्रथा, विधवा विवाह निषेध, शिक्षा और संपत्ति के अधिकार से वंचित होना।

इतिहासकार उमा चक्रवर्ती का मानना है कि स्त्रियों की यह स्थिति केवल धार्मिक परंपराओं का परिणाम नहीं थी। उनके अनुसार भारतीय समाज की जाति व्यवस्था और पितृसत्तात्मक संरचना ने मिलकर स्त्रियों की स्वतंत्रता और अधिकारों को नियंत्रित किया।

निवेदिता मेनन का तर्क है कि जब तक हमारी शिक्षा व्यवस्था पितृसत्तात्मक और पूंजीवादी ढांचों पर

सवाल करना नहीं सिखाएगी, तब तक वह केवल असमानता को बढ़ावा देने का जरिया ही बना रहेगा।

गेराल्डिन फोब्स ने कहा कि सबसे पहले, जीवन के विभिन्न चरणों में एक महिला के लिए उपयुक्त गतिविधियों में बदलाव हुए। दूसरे, महिलाओं की गतिविधियों का दायरा विस्तृत हुआ। और तीसरे, व्यक्तिवाद को एक नई और बढ़ती स्वीकृति मिली। भारत पर ब्रिटिश विजय द्वारा शुरू किए गए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप, उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक कई महिलाएं शिक्षित, वाक्पटु, गतिशील और सार्वजनिक गतिविधियों में तेजी से शामिल हो रही थीं।

मुख्य शब्द – औपनिवेशिक भारत, महिला अधिकार, सामाजिक सुधार, सती प्रथा, विधवा पुनर्विवाह, महिला शिक्षा।

भारतीय महिलाओं की स्थिति में पाश्चात्य सम्पर्क से अधिक मौलिक परिवर्तन आए। पुरुषों को इस सम्पर्क में विश्व की उसके भौतिक संसाधनों, नैतिक मापदंडों और राजनीतिक संभावनाओं की नई संकल्पनाएँ दी। परंतु महिलाओं को उसने अपने ही व्यक्तित्व के संबंध में एक नई संकल्पना दी। व्यक्तित्व जो व्यक्तिगत रूप से महत्वपूर्ण और सामाजिक रूप से आवश्यक था। वह एक आत्मिक क्रांति थी जिसने समाज के परिवार के और स्त्री-पुरुष संबंधों के आधारों को बहुत गहन रूप से प्रभावित किया। उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में खुलकर भाग लिया और अपने राष्ट्रीय व राजनीतिक महत्व को पहचाना ब्रिटिश संस्कृति, सभ्यता व अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीयों का ध्यान भारतीय सामाजिक व्यवस्था व जीवन की कुरीतियों की ओर आकर्षित किया। फलतः समाज-सुधार आंदोलन प्रारंभ हुए। भारतीयों ने ही बहु देववाद, जाति प्रथा, जाति-भेद, बाल विवाह, बहू विवाह, सती प्रथा, देवदासी प्रथा और कन्या हत्या आदि के विरुद्ध आवाज उठाई तथा ब्रिटिश सरकार को भी सुधार कानून बनाने के लिए बाध्य किया।

उन्नीसवीं सदी के राष्ट्रीय जागरण में नवशिक्षित लोगों ने बढ़-चढ़ कर रूढ़िवादी सामाजिक रीतियों तथा पुरानी प्रथाओं से विद्रोह किया। वे अब बुद्धिविरोधी और अमानवीय सामाजिक व्यवहारों को सहने के लिए तैयार नहीं थे। उनका विद्रोह सामाजिक समानता तथा सभी व्यक्तियों को समान क्षमता के मानवतावादी आदर्शों से प्रेरित था।

उन्नीसवीं सदी के मानवतावादी विचारों से प्रेरित होकर समाज सुधारकों ने स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए शक्तिशाली आंदोलन शुरू किया। अनेक समाज सुधार संस्थाओं जैसे ब्रह्म समाज, रामकृष्ण मिशन, प्रार्थना समाज, स्त्रियों थियोसॉफिकल सोसाइटी, आर्य समाज, भारतीय सेवक समाज आदि ने जनता और सरकार का ध्यान सामाजिक जीवन और समस्याओं की ओर आकर्षित किया।

अनेकानेक व्यक्तियों, सुधार समितियों तथा धार्मिक संगठनों ने स्त्रियों में शिक्षा का प्रसार करने, विधवाओं के पुनर्विवाह को प्रोत्साहन देने, विधवाओं की दशा सुधारने, बाल विवाह रोकने, स्त्रियों की पर्दे से बाहर लाने, एक पत्नी प्रथा प्रचलित करने तथा मध्यवर्गीय स्त्रियों को व्यवसाय या सरकारी रोजगार में जाने के योग्य बनाने के लिए कड़ी मेहनत की।

समाज सुधार का मुख्य उद्देश्य सामाजिक कुरीतियों को दूर करना और पुरुषों और महिलाओं में सबके हित के लिए त्याग की भावना जगाना था। प्रथम प्रश्न यह था कि स्त्रियों के प्रति अच्छा व्यवहार किया जाए अर्थात् सती प्रथा और शिशु हत्या व बाल विवाह और बहू पत्नी प्रथा बंद की जाए, उन्हें आर्थिक क्षेत्र में अग्रसर होने और आत्म-निर्भर बनने का मौका दिए जाए और अंत में उन्हें मताधिकार का अधिकार दिया जाए।

ब्रिटिश भारत में स्त्रियों के लिए कुछ महत्वपूर्ण कानून बने जो इस प्रकार हैं।

सती प्रथा का अंत -

सती का शाब्दिक अर्थ एक पवित्र साध्वी स्त्री होता है। यह उस पत्नि के लिए प्रयोग किया जाता था जो अपने पति के साथ शाश्वत और जन्म जन्मांतर तक रहना चाहती थी और पति के मर जाने पर खुद को भी उसकी चिता के साथ जला देती थी।

भारत में अंग्रेजों से पूर्व अकबर, पेशवाओं, राजा जय सिंह, मराठाओं इत्यादि शासकों ने इस पर रोक लगाने की कोशिश की थी। यद्यपि कंपनी प्रायः भारतीय धर्म प्रथाओं के प्रति तटस्थता की नीति अपनाती थी, परंतु फिर भी कार्नवालिस, मिंटों और लॉर्ड हेस्टिंग्स जैसे गवर्नर जनरलों ने सति प्रथा को सीमित करने के प्रयत्न किए।

राजा राम मोहन राय जैसे प्रबुद्ध भारतीय सुधारकों ने इस क्रूर प्रथा पर गहरा प्रहार किया। बंगाल के गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैटिक द्वारा 1829 के 17वें नियम के अनुसार विधवाओं को जीवित जलाना बंद कर दिया गया और न्यायालयों को आज्ञा दी गई कि वे ऐसे मामले में मानव हत्या के अनुसार मुकदमा चलाए। पहले यह नियम बंगाल में लागू किया गया, फिर 1870 में यह बम्बई और मद्रास में भी लागू कर दिया गया। इस प्रकार यह क्रूर प्रथा समाप्त हो गयी। यद्यपि इक्का-दुक्का मामले फिर भी देखे गए।

शिशुवध -

एक अन्य क्रूर प्रथा जो बंगालियों और राजपूतों में प्रचलन में था— बालिका भुण हत्या। उसे भार समझकर शैशव काल में ही हत्या करने का चलन था। दहेज के भार तथा अन्य कारण उन्हें बचपन में ही मार दिया जाता था। महाराजा रणजीत सिंह के पुत्र दलीप सिंह सिंह ने उल्लेख किया है— “उसने स्वयं अपने नेत्रों के सामने देखा कि उसकी अपनी बहनों को बोरी में बंद करके नदी में फेंक दिया गया।

भारतीय और ब्रिटिश प्रबुद्ध व्यक्तियों के प्रयास से इस क्रूर प्रथा को 1795 में बंगाल में और 1804 के नियम 3 से शिशु हत्या को साधारण हत्या के बराबर माना जाए।

भारतीय रियासतों के रेजिडेन्टों को भी कहा गया कि वे इस कुप्रथा की बंद करने की कोशिश करें। 1870 में कुछ और कानून इन्हीं को बंद करने के लिए बनाये गए।

विधवा पुनर्विवाह की अनुमति और बाल विवाह का निषेध इस क्षेत्र में आचार्य श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई। उन्होंने प्रमाण प्रस्तुत किया कि वेद विधवा विवाह की अनुमति देता है। उन्होंने करीब एक सहस्र हस्ताक्षरों से अनुमोदित एक प्रार्थना पत्र भारत सरकार को भेजा और अंततः हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम (1856 Hindu Widow Remarriage Act) से विधवा विवाह को वैध मान लिया गया। इस विवाह से उत्पन्न संतान को भी वैध माना गया।

बम्बई में प्रो. डी.के. कर्वे और मद्रास में वीरेश लिंगम ने इस दिशा में विशेष प्रयत्न किए। प्रो. कर्वे ने विधुर होने पर 1893 में स्वयं एक ब्राह्मण विधवा से विवाह किया। वे विधवा पुनर्विवाह संघ के सचिव थे। 1899 ई. में उन्होंने पूना में एक विधवा आश्रम स्थापित किया, जिसमें विधवाओं को जीविकोपार्जन का साधन—प्रदान किया जाता था। उन्होंने 1906 में बम्बई में भारतीय स्त्री विश्वविद्यालय स्थापित की।

बाल विवाह निषेध -

1872 ई. में एक कानून 'नेटिव मैरिज एक्ट' द्वारा 14 वर्ष से कम आयु की कन्याओं का विवाह वर्जित कर दिया गया। बहु विवाह को भी गैर-कानूनी घोषित किया गया, परंतु यह कानून प्रभावशाली नहीं हो सका। एक पारसी समाज सुधारक वी.एस. मालाबारी के प्रयत्नों से 1891 में सम्मति आयु अनिनियम पारित हुआ, जिसमें 12 वर्ष से कम उम्र की कन्याओं के विवाह पर रोक लग गई।

1930 में शारदा अधिनियम द्वारा विवाह के लिए लड़कियों की न्यूनतम आयु 14 वर्ष और युवकों के लिए न्यूनतम आयु 18 वर्ष कर दी गई।

स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में ईसाई धर्म प्रचारकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। 1819 में कलकत्ता तरुण स्त्री सभा की स्थापना की। जे.ई. बेटन जो शिक्षा परिषद के अध्यक्ष थे, ने 1849 में कलकत्ता में एक बालिका विद्यालय स्थापित किया। पंडित ईश्वर चन्द्र विद्यासागर बंगाल में करीब 35 बालिका विद्यालयों से संबंधित थे। वहीं महाराष्ट्र में फूले दंपति में बालिकाओं के शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया। 1848 में उन्होंने बालिका शिक्षा के लिए स्कूल खोला और महिलाओं को शिक्षित करने और जागरूक करने का सराहनीय कार्य किया।

1854 के चार्ल्स वुड पत्र में स्त्री शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। कालान्तर में स्त्री शिक्षा स्त्रियों की दशा सुधारने में महत्वपूर्ण आधार बना।

बीसवीं सदी में जुझारू राष्ट्रीय आंदोलन के उदय से स्त्री-मुक्ति को बहुत प्रोत्साहन मिला। स्वतंत्रता के संघर्ष ने स्त्रियों में एक सक्रिय और महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। बंग भंग विरोधी आंदोलन तथा होमरूल आंदोलन में उन्होंने बड़ी संख्या में भाग लिया। वे विभाग मंडलों के चुनाव में वोट देने तथा उम्मीदवारों के रूप में खड़ी भी होने लगी। प्रसिद्ध कवयित्री सरोजनी नायडू राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्ष बनी। अनेक स्त्रियाँ 1937 में जनप्रिय सरकारों में मंत्री या संसदीय सचिव बनी। भारतीय स्त्रियों की जागृति तथा मुक्ति में सबसे महत्वपूर्ण योगदान राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी भागीदारी का रहा। मनुष्य के रूप में अपने अधिकारों का दावा उन्हें करना ही था।

ब्रिटिश काल में बनाए गए कानूनों से भारतीय महिलाओं के जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया और एक नवीन सकारात्मक शुरुआत की नींव पड़ी। यद्यपि इसका प्रभाव तुरंत और प्रत्येक जगह एक समान रूप से नहीं पड़ा। अधिकांशतरु शहरी क्षेत्र तथा उच्च वर्गीय समुदाय तक ही सीमित रहा, लेकिन इन सुधारों ने स्त्रियों के अधिकार, समानता, शिक्षा और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों को राष्ट्रीय लाइम लाइट तथा बहस के केन्द्र में ला दिया। आने वाले वक्त में यही सुधार स्वतंत्र भारत में महिलाओं के संवैधानिक अधिकार और एक समान अवसर दिलाने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा की और उनको कानूनी हक दिलाने की आधारशिला बनी।

सावित्रीबाई फुले, पंडिता रमा बाई, फतिमा शेख जैसी महिला सुधारवादियों ने महिलाओं को शिक्षित, आत्मनिर्भर, जागरूक और उनके आत्मसम्मान को बढ़ाने में महती योगदान दिया और सम्मानजनक जीवन जीने की प्रेरणा दी।

निष्कर्षतः

हम कह सकते हैं कि औपनिवेशिक भारत में महिलाओं को कानूनी अधिकार देने का श्रेय सिर्फ ब्रिटिश सरकार को नहीं दिया जा सकता है। बल्कि यह एक बौद्धिक जागरण संतत : सामाजिक संघर्ष, वैचारिक और शैक्षणिक स्थिति में बदलाव और परिवर्तन, सुधारवादी आंदोलन की भूमिका, भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन महिलाओं

निरंतरण जागरूकता तथा भागीदारी की सतत् कहानी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. बंदोपाध्याय, शेखर. (2015). प्लासी से विभाजन तक और उसके बाद : आधुनिक भारत का इतिहास (द्वितीय संस्करण). ओरियंट ब्लैकस्वॉन।
2. चंद्र, विपिन. (2021). आधुनिक भारत का इतिहास. ओरियंट ब्लैकस्वॉन।
3. ग्रोवर, बी. एल., — मेहता, अलका. (द.क.). आधुनिक भारत का इतिहास : 1707 ई. से आधुनिक काल तक. एस. चंद पब्लिकेशन्स।
4. राय, सत्या (सं.). (1990). भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
5. फोर्ब्स, जेराल्डीन. (1996). विमेन इन मॉडर्न इंडिया. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. सरकार, सुमित. (1983). मॉडर्न इंडिया, 1885—1947. मैकमिलन इंडिया।
7. सरकार, तानिका. (2001). हिंदू वाइफ, हिंदू नेशन : कम्युनिटी, रिलिजन, एंड कल्चरल नेशनलिज्म. इंडियाना यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. चक्रवर्ती, उमा. (2003). जेंडरिंग कास्ट : थ्रू अ फेमिनिस्ट लेंस. स्त्री।
9. मेनन, निवेदिता. (2012). सीइंग लाइक अ फेमिनिस्ट. जुबान।
10. जोशी, गोपा. (2015). भारत में स्त्री असमानता. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 179-187

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

CYBER SECURITY GOVERNANCE AND RISK MANAGEMENT : STRATEGIES FOR SECURING CRITICAL INFORMATION INFRASTRUCTURE

Bagwan Kaisar Parvez Nisar, Research Scholar,

Dr. Kalpana Midha, Research Guide,

DEPARTMENT OF COMPUTER SCIENCE,

SHRI KHUSHAL DAS UNIVERSITY, HANUMANGARH, RAJASTHAN

Abstract :

This study explores the principles of cybersecurity governance, emphasizing leadership commitment, regulatory compliance, risk assessment, security policies, and stakeholder collaboration. It further examines risk management strategies, including risk identification, analysis, mitigation, continuous monitoring, and incident response planning. The paper highlights the adoption of internationally recognized frameworks such as ISO/IEC 27001, the NIST Cybersecurity Framework, and Zero Trust Architecture to strengthen organizational resilience. Additionally, emerging technologies, including Artificial Intelligence (AI), Machine Learning (ML), and threat intelligence, are discussed for their role in enhancing proactive cyber defense. The study concludes that integrating robust governance practices with comprehensive risk management strategies is essential for ensuring the confidentiality, integrity, availability, and resilience of Critical Information Infrastructure against increasingly sophisticated cyber threats.

Keywords : Cyber Security Governance, Risk Management, Cybersecurity, Information Security, NIST Cybersecurity Framework, Artificial Intelligence (AI), Threat Intelligence

Introduction :

In the digital era, information has become one of the most valuable assets for governments, businesses, and individuals. The rapid advancement of information and communication technologies (ICT), cloud computing, artificial intelligence (AI), the Internet of Things (IoT), and digital transformation initiatives has significantly enhanced organizational efficiency and innovation. However,

these technological advancements have also increased the complexity and frequency of cyber threats, making cybersecurity a critical concern across all sectors. Cyberattacks such as ransomware, phishing, distributed denial-of-service (DDoS) attacks, data breaches, insider threats, and advanced persistent threats (APTs) have demonstrated the vulnerability of digital systems and the devastating consequences of security failures. As organizations increasingly depend on interconnected digital infrastructures, the need for effective cybersecurity governance and comprehensive risk management strategies has become more important than ever.

Critical Information Infrastructure (CII) refers to the systems, networks, and digital assets whose disruption or destruction would have severe consequences for national security, economic stability, public safety, and societal well-being. Sectors such as energy, healthcare, transportation, banking and finance, telecommunications, water supply, and government services rely heavily on secure and resilient information infrastructures to maintain essential operations. Any compromise of these infrastructures can result in significant financial losses, operational disruptions, loss of public trust, and even threats to human lives. Consequently, protecting critical information infrastructure has emerged as a strategic priority for governments, regulatory authorities, and private organizations worldwide.

Cybersecurity governance provides the framework through which organizations establish policies, define responsibilities, allocate resources, and ensure accountability for managing cybersecurity risks. It integrates cybersecurity objectives with organizational goals, enabling decision-makers to create a security-conscious culture while ensuring compliance with legal, regulatory, and industry standards. Effective governance involves leadership commitment, clearly defined roles and responsibilities, strategic planning, performance monitoring, and continuous improvement. International standards and frameworks such as ISO/IEC 27001, the NIST Cybersecurity Framework (CSF), COBIT, and the CIS Critical Security Controls provide structured approaches for implementing cybersecurity governance and strengthening organizational resilience against evolving cyber threats. Risk management complements cybersecurity governance by providing systematic processes for identifying, assessing, mitigating, monitoring, and responding to cyber risks. Since cyber threats continue to evolve in sophistication and scale, organizations must adopt proactive risk management practices that prioritize critical assets, evaluate vulnerabilities, assess potential impacts, and implement appropriate security controls. Effective cyber risk management encompasses technical, organizational, legal, and human factors, recognizing that cybersecurity is not solely a technological issue but also a governance and management challenge. Regular risk assessments, business continuity planning, incident response capabilities, employee awareness programs, and continuous monitoring are essential

components of a comprehensive cybersecurity risk management strategy.

The growing interdependence between public and private sectors further emphasizes the importance of collaborative cybersecurity governance. Many critical infrastructures are owned or operated by private organizations, making public–private partnerships, information sharing, and coordinated incident response essential for addressing sophisticated cyber threats. Governments worldwide have introduced national cybersecurity strategies, regulatory frameworks, and sector-specific guidelines to improve cyber resilience and safeguard critical infrastructure. These initiatives encourage organizations to adopt risk-based security practices, strengthen regulatory compliance, and enhance their capability to detect, prevent, respond to, and recover from cyber incidents.

This study explores the significance of cybersecurity governance and risk management as fundamental pillars for securing critical information infrastructure. It examines the evolving cyber threat landscape, governance principles, risk assessment methodologies, regulatory frameworks, and strategic approaches that organizations can adopt to enhance cyber resilience. By integrating effective governance structures with comprehensive risk management practices, organizations can improve decision-making, minimize cyber risks, protect critical assets, ensure business continuity, and strengthen stakeholder confidence. Ultimately, developing robust cybersecurity governance and risk management strategies is essential for safeguarding critical information infrastructure, supporting sustainable digital transformation, and ensuring the security, resilience, and reliability of modern interconnected societies.

Critical Information Infrastructure :

Critical Information Infrastructure refers to information systems, networks, assets, and services whose disruption or destruction would have a significant impact on national security, economic stability, public safety, or essential services.

Examples of Critical Information Infrastructure include :

1. Energy Sector :

Power generation plants, electricity grids, oil refineries, and gas distribution systems depend heavily on digital control systems. Cyberattacks on these systems can lead to widespread blackouts and economic disruption.

2. Healthcare :

Hospitals, medical devices, electronic health records, and emergency healthcare systems are increasingly digitized. Ransomware attacks on hospitals may delay patient treatment and endanger lives.

3. Financial Services :

Banks, payment systems, stock exchanges, insurance companies, and digital wallets require continuous cybersecurity to prevent fraud, theft, and service disruptions.

4. Transportation :

Airports, railways, shipping ports, traffic management systems, and autonomous vehicles rely on secure digital infrastructure for safe operations.

5. Telecommunications :

Communication networks enable internet connectivity, mobile communications, and emergency services. Their disruption can affect millions of users.

6. Government Services :

National identity systems, tax services, defense networks, law enforcement databases, and public administration platforms are prime targets for cyber espionage.

Cyber Threat Landscape :

The cyber threat landscape continues to evolve rapidly. Attackers employ advanced techniques to exploit vulnerabilities across hardware, software, networks, and human behavior.

1. Ransomware :

Ransomware encrypts organizational data and demands payment for its release. Healthcare institutions, municipalities, and financial organizations have become frequent victims.

2. Phishing :

Phishing attacks manipulate users into revealing passwords, financial information, or confidential data through fraudulent emails or websites.

3. Advanced Persistent Threats (APTs) :

APTs involve highly sophisticated attackers, often supported by nation-states, who maintain long-term access to networks for espionage or sabotage.

4. Insider Threats :

Employees, contractors, or trusted insiders may intentionally or accidentally compromise organizational security.

5. Distributed Denial-of-Service (DDoS) :

DDoS attacks overwhelm servers with excessive traffic, making online services unavailable.

6. Supply Chain Attacks :

Attackers compromise third-party vendors or software providers to infiltrate multiple organizations simultaneously.

7. Internet of Things (IoT) Vulnerabilities :

Many IoT devices have weak security configurations, making them attractive targets for attackers seeking unauthorized network access.

Objectives :

1. To assess the current level of cybersecurity governance practices adopted by organizations managing critical information infrastructure.
2. To identify the major cybersecurity risks affecting critical information infrastructure.
3. To evaluate the effectiveness of risk management strategies in mitigating cyber threats.
4. To analyze the relationship between cybersecurity governance and organizational resilience.
5. To recommend strategies for improving cybersecurity governance and risk management practices.

Research Methodology :

This study adopts a quantitative descriptive research design to investigate cybersecurity governance and risk management practices in organizations responsible for critical information infrastructure.

The target population consists of cybersecurity professionals, IT managers, network administrators, and risk management officers working in organizations responsible for critical information infrastructure.

Results and Discussion :

Table 1. Demographic Profile of Respondents (N = 100)

Demographic Variable	Category	Frequency	Percentage (%)
Gender	Male	65	65
	Female	35	35
Age	21–30 Years	22	22
	31–40 Years	38	38
	41–50 Years	27	27
	Above 50 Years	13	13
Experience	Less than 5 Years	25	25
	5–10 Years	40	40
	Above 10 Years	35	35

The majority of respondents (65%) were male, while 35% were female. Most participants (38%) belonged to the 31–40 years age group. Forty percent had 5–10 years of professional

experience, indicating a knowledgeable sample capable of providing reliable responses regarding cybersecurity governance.

Table 2. Cyber security Governance Practices

Governance Practice	Mean	SD	Interpretation
Security policies are clearly defined	4.36	0.58	High
Regular cybersecurity audits are conducted	4.22	0.67	High
Employee cybersecurity training is provided	4.18	0.71	High
Executive management supports cybersecurity	4.29	0.61	High
Compliance with cybersecurity standards	4.41	0.54	Very High

Respondents reported high implementation of cybersecurity governance practices. Compliance with cybersecurity standards achieved the highest mean score (4.41), indicating that organizations prioritize regulatory compliance and standardized governance frameworks such as ISO 27001 and the NIST Cybersecurity Framework.

Table 3. Major Cybersecurity Risks Affecting Critical Information Infrastructure

Cybersecurity Risk	Frequency	Percentage (%)
Phishing Attacks	82	82
Malware	78	78
Ransomware	74	74
Insider Threats	61	61
Data Breaches	69	69
DDoS Attacks	58	58

Phishing attacks were identified as the most common cybersecurity threat (82%), followed by malware (78%) and ransomware (74%). These findings highlight that human-centered attacks remain the primary concern for organizations managing critical infrastructure.

Table 4. Effectiveness of Risk Management Strategies

Risk Management Strategy	Mean	SD	Interpretation
Risk assessment is performed regularly	4.35	0.59	High
Incident response plans are updated	4.28	0.64	High
Multi-factor authentication is implemented	4.46	0.53	Very High
Backup and disaster recovery plans exist	4.33	0.61	High
Continuous monitoring systems are used	4.39	0.56	High

Multi-factor authentication (MFA) received the highest effectiveness rating (Mean = 4.46), demonstrating its importance in reducing unauthorized access. Continuous monitoring and periodic risk assessments also contributed significantly to improving organizational cybersecurity resilience.

Table 5. Impact of Cybersecurity Governance on Organizational Security

Statement	Mean	SD	Interpretation
Governance reduces cyber risks	4.48	0.49	Very High
Governance improves incident response	4.37	0.56	High
Governance increases employee awareness	4.26	0.63	High
Governance improves regulatory compliance	4.45	0.51	Very High
Governance enhances organizational resilience	4.42	0.54	Very High

The results indicate that respondents strongly agreed that cybersecurity governance enhances organizational resilience and regulatory compliance. The highest mean score (4.48) suggests that governance frameworks significantly reduce cybersecurity risks by improving accountability, security controls, and decision-making processes.

Discussion :

The findings demonstrate that effective cybersecurity governance plays a critical role in protecting critical information infrastructure. Organizations with clearly defined security policies, executive management support, and compliance with internationally recognized cybersecurity standards reported stronger security postures. This aligns with the principles of governance frameworks such as NIST and ISO/IEC 27001, which emphasize structured oversight and continuous improvement.

Phishing, malware, and ransomware emerged as the most prevalent cyber threats, reflecting current global trends where attackers increasingly exploit human vulnerabilities and software weaknesses. These results suggest that organizations should continue investing in employee awareness programs, endpoint protection, and advanced threat detection technologies.

The study also shows that risk management strategies, particularly multi-factor authentication, regular risk assessments, continuous monitoring, and disaster recovery planning, are highly effective in mitigating cyber risks. Respondents perceived these controls as essential for strengthening operational resilience and minimizing service disruptions.

Finally, the positive ratings for governance outcomes indicate that organizations with mature

cybersecurity governance frameworks experience better regulatory compliance, faster incident response, greater employee awareness, and enhanced resilience against evolving cyber threats. These findings support the integration of governance, risk management, and continuous monitoring as key elements of a comprehensive cybersecurity strategy for securing critical information infrastructure.

Conclusion :

Cyber Security Governance and Risk Management are fundamental to protecting Critical Information Infrastructure (CII) against the growing complexity of cyber threats. As organizations become increasingly dependent on digital technologies, the need for effective governance frameworks, proactive risk management, and resilient security strategies has become more important than ever. A comprehensive approach that integrates policies, regulatory compliance, risk assessment, incident response, and continuous monitoring enables organizations to safeguard critical assets while ensuring business continuity and public trust.

Strong cyber security governance establishes clear roles, responsibilities, and accountability across all levels of an organization, fostering a culture of security awareness and informed decision-making. At the same time, risk management helps identify, assess, and mitigate potential threats before they can cause significant disruption. The adoption of internationally recognized standards and frameworks, such as ISO/IEC 27001 and the NIST Cybersecurity Framework, further strengthens organizational resilience by promoting best practices and continuous improvement.

In conclusion, securing Critical Information Infrastructure requires a strategic combination of robust governance, effective risk management, technological innovation, regulatory compliance, and continuous adaptation. By adopting a proactive and risk-based cybersecurity strategy, organizations can reduce vulnerabilities, strengthen resilience against cyberattacks, and ensure the confidentiality, integrity, and availability of critical information systems in an increasingly interconnected digital world.

REFERENCES :

1. Kumar, R., & Sharma, P. (2024). Cyber Security Challenges in the Era of Digital Transformation. *International Journal of Advanced Computer Science and Applications*, vol. 15(2), page no. 45–53.
2. Lopez, Carlos & Sargolzaei, Arman & Santana, Hugo & Huerta, Carlos. (2015). Smart Grid Cyber Security: An Overview of Threats and Countermeasures. *Journal of Energy and Power Engineering*. vol. 9.
3. Rahman, Md Anisur & Al-Saggaf, Yeslam & Zia, Tanveer. (2020). A Data Mining Framework to

Predict Cyber Attack for Cyber Security. Vol. 10.

4. Rawat, Danda B & Bajracharya, Chandra. (2015). Cyber security for smart grid systems: Status, challenges and perspectives. Conference Proceedings - IEEE SOUTHEASTCON. 2015.
5. Singh, A., & Verma, N. (2023). Cyber Threats and Information Protection in Modern Digital Systems. Journal of Cyber Security and Digital Technology, vol. 11(4), page no. 120–128.
6. Smyth, Vincent. (2015). Cyber-security fortresses built on quicksand. Network Security. 2015, page no. 5-8.
7. West, Jason. (2018). A Prediction Model Framework for Cyber-Attacks to Precision Agriculture Technologies. Journal of Agricultural & Food Information. Vol. 19, page no. 1-24.
8. Paul Jeffery Marshall (2010), Online Banking: Information Security vs. Hackers Research Paper, International Journal of Scientific & Engineering Research, Volume 1, Issue 1, PP. 1-5.
9. Rajpreet Kaur Jassal and Ravinder Kumar Sehgal (2013), Online Banking Security Flaws: A Study, International Journal of Advanced Research in Computer Science and Software Engineering, Volume 3, Issue 8, PP. 1016-1021.
10. Dr. Manisha M. More, Meenakshi P. Jadhav and Dr. K. M. Nalawade (2015), Online Banking and Cyber Attacks: The Current Scenario, International Journal of Advanced Research in Computer Science and Software Engineering, Volume 5, Issue 12, PP. 743-749.
11. Nikhil khandare, dr. B. B. Meshram (2013), security of online electronic transactions, international journal of technical research and applications, volume 1, issue 5, pp. 53-58.
12. Rajpreet Kaur Jassal and Ravinder Kumar Sehgal (2013), Online Banking Security Flaws: A Study, International Journal of Advanced Research in Computer Science and Software Engineering, Volume 3, Issue 8, PP. 1016-1021.
13. Claudia Biancotti (2017), Cyber-attacks: preliminary evidence from the Bank of Italy's business surveys, Bank of Italy, Directorate General for Economics, Statistics and Research., PP. 05-29
14. Soni R.R. and Soni Neena (2013), An Investigative Study of Banking Cyber Frauds with Special Reference to Private and Public Sector Banks, Research Journal of Management Sciences, Vol. 2(7), PP. 22-27.
15. Susheel Chandra Bhatt and Durgesh Pant (2011), Study of Indian Banks Websites for Cyber Crime Safety Mechanism, (IJACSA) International Journal of Advanced Computer Science and Applications, Vol. 2, No.10, PP. 87-90.
16. Derek Mohammed (2015), Cyber security Compliance in the Financial Sector, Journal of Internet Banking and Commerce, vol. 20, no. 1, PP. 01-11.



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 188-194

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

The Relationship between Mental Health and Life Satisfaction in the Digital Age

Amirah Kaisar Parvez Bagwan, Research Scholar,

Dr. Pawar Anuradha Vijay, Research Guide,

DEPARTMENT OF PSYCHOLOGY,

SHRI KHUSHAL DAS UNIVERSITY, HANUMANGARH, RAJASTHAN.

Abstract :

This study explores the relationship between mental health and life satisfaction in the digital age by examining how digital technology use influences psychological well-being and overall quality of life. The paper reviews existing literature on the positive and negative effects of digital media, social networking, and online interactions on mental health outcomes. It further highlights the role of digital literacy, balanced technology use, and social support in promoting life satisfaction and emotional resilience. The findings suggest that while digital technologies can enhance well-being when used responsibly, excessive screen time, social comparison, and problematic internet use may reduce life satisfaction by negatively affecting mental health. The study emphasizes the importance of developing healthy digital habits and implementing evidence-based interventions to maximize the benefits of digital technology while minimizing its psychological risks. These insights contribute to a better understanding of the complex relationship between mental health and life satisfaction in an increasingly digital society.

Keywords : Mental Health, Life Satisfaction, Digital Age, Psychological Well-being, Social Media, Digital Technology, Screen Time, Digital Literacy, Quality of Life

Introduction :

The rapid advancement of digital technology has transformed nearly every aspect of human life, reshaping how people communicate, work, learn, and maintain relationships. The widespread adoption of smartphones, social media platforms, online entertainment, and digital communication tools has created unprecedented opportunities for connectivity, access to information, and personal

development. While these technological innovations have significantly improved convenience and productivity, they have also introduced new challenges that affect psychological well-being and overall quality of life. In the digital age, mental health has emerged as a critical global concern, with increasing attention being paid to the relationship between digital technology use and life satisfaction.

Mental health is recognized as a fundamental component of overall health and well-being. According to the World Health Organization (WHO), mental health is not merely the absence of mental illness but a state in which individuals realize their abilities, cope effectively with the normal stresses of life, work productively, and contribute positively to their communities. Life satisfaction, on the other hand, refers to an individual's cognitive evaluation of the quality of their life as a whole, reflecting the extent to which personal goals, expectations, and needs are fulfilled. Both mental health and life satisfaction are closely interconnected, as individuals with better psychological well-being generally report higher levels of happiness, resilience, and overall satisfaction with life.

The digital age has created a complex environment where technology can both enhance and undermine mental health. On one hand, digital platforms facilitate social interaction, provide educational opportunities, enable remote work, and offer access to mental health resources such as online counseling, self-help applications, and virtual support groups. These innovations have improved access to healthcare and strengthened social connections, particularly during periods of crisis such as the COVID-19 pandemic. Digital technologies have also enabled greater awareness of mental health issues, reducing stigma and encouraging individuals to seek professional support.

On the other hand, excessive or unhealthy use of digital technologies has been associated with various psychological challenges, including anxiety, depression, loneliness, stress, sleep disturbances, low self-esteem, and digital addiction. Continuous exposure to carefully curated content on social media often encourages unhealthy social comparisons, fear of missing out (FOMO), and cyberbullying, all of which negatively influence emotional well-being. Moreover, prolonged screen time may reduce face-to-face interactions, physical activity, and quality sleep, contributing to lower life satisfaction and poorer mental health outcomes. Young people and adolescents are particularly vulnerable, as they spend considerable time engaging with digital media during critical stages of psychological and social development.

Understanding the relationship between mental health and life satisfaction in the digital age has become increasingly important for researchers, policymakers, educators, healthcare professionals, and families. As digital technologies continue to evolve, it is essential to identify both the benefits and risks associated with their use and to promote healthy digital behaviors that support psychological well-being. Research in this area contributes to the development of evidence-based interventions, digital literacy programs, and mental health policies that encourage balanced technology use while

minimizing harmful effects.

This study aims to examine the relationship between mental health and life satisfaction within the context of the digital age by exploring how digital technology influences psychological well-being and overall quality of life. It seeks to highlight the factors that contribute to positive and negative mental health outcomes, analyze the role of digital engagement in shaping life satisfaction, and provide insights into strategies that foster healthier interactions with technology. By understanding these relationships, individuals and societies can better harness the benefits of digital innovation while protecting mental health and promoting a more satisfying and balanced life.

Research Objectives :

- 1. To assess the level of mental health among respondents.
- 2. To examine the level of life satisfaction among respondents.
- 3. To identify the pattern of digital technology usage among participants.
- 4. To investigate the relationship between digital technology usage, mental health, and life satisfaction.
- 5. To provide recommendations for improving mental health and life satisfaction through healthy digital practices.

Research Methodology :

This study adopts a quantitative, cross-sectional, and correlational research design. A quantitative approach is appropriate because it allows the collection of numerical data to measure the relationship between mental health and life satisfaction. The cross-sectional design enables data collection at a single point in time, while the correlational design helps determine the strength and direction of the relationship between the variables without manipulating them.

A deductive research approach is employed in this study. Existing theories and previous empirical studies regarding mental health, life satisfaction, and digital technology are used to develop hypotheses, which are then tested using statistical analysis.

Results and Discussion :

Table 1. Demographic Profile of Respondents (N = 100)

Variable	Category	Frequency	Percentage (%)
Gender	Male	46	46
	Female	54	54
Age	18–25 Years	40	40
	26–35 Years	38	38
	36–45 Years	22	22

Among the 100 respondents, 54% were female and 46% were male. Most respondents (40%) belonged to the 18–25 years age group, indicating that young adults constituted the largest proportion of the sample. This reflects the growing influence of digital technology on younger populations.

Table 2. Daily Digital Device Usage

Hours per Day	Frequency	Percentage (%)
Less than 2 Hours	12	12
2–4 Hours	28	28
5–7 Hours	36	36
More than 7 Hours	24	24

The findings reveal that 60% of respondents spent more than five hours daily using digital devices. High digital exposure may influence emotional well-being, stress levels, and overall life satisfaction.

Table 3. Mental Health Status

Mental Health Level	Frequency	Percentage (%)
Poor	14	14
Fair	24	24
Good	42	42
Excellent	20	20

Most respondents (42%) reported good mental health, while 20% experienced excellent mental health. However, 38% reported fair or poor mental health, suggesting that a considerable proportion may experience psychological distress associated with digital lifestyles.

Table 4. Life Satisfaction Level

Life Satisfaction	Frequency	Percentage (%)
Low	16	16
Moderate	34	34
High	38	38
Very High	12	12

The majority (50%) of respondents reported high or very high life satisfaction, whereas 16% reported low life satisfaction. This indicates that although many individuals are generally satisfied with life, digital-related stress and mental health concerns may affect others.

Table 5. Correlation between Mental Health and Life Satisfaction

Variables	Pearson Correlation (r)	Significance (p-value)	Interpretation
Mental Health & Life Satisfaction	0.68	0.001	Strong Positive Relationship

The Pearson correlation coefficient ($r = 0.68$) indicates a strong positive relationship between mental health and life satisfaction. The relationship is statistically significant ($p < 0.05$), suggesting that individuals with better mental health tend to report higher life satisfaction. The findings support previous studies emphasizing that psychological well-being is an important predictor of overall quality of life in the digital era.

Overall Discussion :

The study explored the relationship between mental health and life satisfaction among 100 respondents in the digital age. The demographic analysis showed that young adults formed the largest participant group, reflecting their extensive engagement with digital technologies. Most respondents reported using digital devices for more than five hours daily, highlighting the increasing dependence on smartphones, social media, and online platforms.

The results revealed that although a majority of respondents experienced good mental health and relatively high life satisfaction, a notable proportion reported fair or poor mental health, indicating potential psychological challenges associated with excessive digital engagement. Furthermore, the correlation analysis demonstrated a statistically significant and strong positive relationship ($r = 0.68$, $p = 0.001$) between mental health and life satisfaction. This finding suggests that improvements in mental health are associated with higher levels of life satisfaction.

Overall, the study concludes that maintaining positive mental health is essential for achieving greater life satisfaction in the digital age. Encouraging balanced digital usage, promoting digital well-being, strengthening social relationships, and increasing access to mental health support can help individuals enjoy the benefits of technology while minimizing its negative psychological impacts. These findings also provide useful implications for educators, policymakers, mental health professionals, and organizations aiming to promote healthier digital lifestyles.

Conclusion :

In conclusion, the relationship between mental health and life satisfaction in the digital age is both significant and multifaceted. While digital technologies and social media have transformed communication, education, work, and access to mental health resources, they have also introduced

challenges such as excessive screen time, cyberbullying, social comparison, digital addiction, and information overload. These factors can negatively affect psychological well-being, leading to increased stress, anxiety, depression, and reduced overall life satisfaction.

At the same time, the digital age offers valuable opportunities to improve mental health through online counseling, mental health awareness campaigns, digital support communities, and self-care applications. The impact of digital technology ultimately depends on how individuals engage with it and maintain a healthy balance between online and offline life.

To promote greater life satisfaction, individuals should adopt responsible digital habits, prioritize meaningful social relationships, and practice digital well-being. Governments, educational institutions, healthcare providers, and technology companies also share the responsibility of creating safer and more supportive digital environments. Future research should continue exploring the long-term effects of digital technology on mental health across different age groups and cultural contexts. By encouraging mindful technology use and strengthening mental health support systems, society can harness the benefits of the digital age while minimizing its risks, ultimately fostering healthier, happier, and more satisfying lives.

REFERENCES :

1. Tabbodi, M., Rahgozar, H., Mozaffari, M., Abadi, M., (2015). The Relationship between Happiness and Academic Achievements. *Journal of Natural and Social Sciences* 4(1)
2. Otaghi M, Sayehmiri K, Valizadeh R, Tavan H. Correlation Between Happiness and Academic Achievement in Iranian Students: A Meta-Analysis Letter, *Shiraz EMed J*. Online ahead of Print ; 21(3):e94277. doi: 10.5812/semj.94277
3. Adams, J. & Nettle. D. (2009). Time perspective, personality and smoking, body mass, and physical activity: an empirical study. *British Journal of Health Psychology*, 14(1), 83-105.
4. Dunkel, C. S., & Weber, J. L. (2010). Using three levels of personality to predict time perspective. *Current Psychology: A Journal for Diverse Perspectives on Diverse Psychological Issues*, 29(2), 95–103.
5. Van den Hurk, P.A.M., Wiggins, T., Gionmi, F., Barendregt, H.P., Speckens, A.E.M. & Schie, H.T. (2011). On the Relationship Between the Practice of Mindfulness Meditation and Personality-an Exploratory Analysis of the Mediating Role of Mindfulness Skills. *Mindfulness*, 2(3), 194-200.
6. Podlogar, T. & Bajec, B. (2011). The connection of time perspective with personality traits and subjective well-being. *Horizons of Psychology*, 20(1), 43-62

7. Zhang, J. W., & Howell, R. T. (2011). Do time perspectives predict unique variance in life satisfaction beyond personality traits? *Personality and Individual Differences*, 50(8), 1261–1266.
8. Carvalho, R.G. & Novo, R.F. (2014). The Relationship between Structural Dimensions of Personality and School Life in Adolescence. *Psychology*, 27(2), 376-388.
9. Kairys, A., Liniauskaite, A. (2015). Time Perspective and Personality. In: Stolarski, M., Fieulaine, N., van Beek, W. (eds) *Time Perspective Theory; Review, Research and Application*. Springer, Cham. https://doi.org/10.1007/978-3-319-07368-2_6.
10. Muro, A., Castella, J., Sotoca, C., Estaun, S., Valero, S. & Goma-i-Freixanet, M. (2015). To what extent is personality associated with time perspective? *Anales de Psicología*, 31(2), 488-493.
11. Stolarski, M. & Matthews, G. (2016). Time Perspectives Predict Mood States and Satisfaction with Life over and above Personality. *Current Psychology*, 35, 516-526.
12. Zajenkowski, M., Witowska, J., Maciantowicz, O., & Malesza, M. (2016). Vulnerable Past, Grandiose Present: The Relationship between Vulnerable and Grandiose Narcissism, Time Perspective and Personality. *Personality and Individual Differences*, 98, 102-106.
13. Przepiorka, A., Siu, N. Y.-f., Szczesniak, M., Timoszyk-Tomczak, C., Le, J. J., & Muñoz, M. P. (2020). The relation between personality, time perspective and positive orientation in Chile, Hong Kong, and Poland. *Journal of Happiness Studies: An Interdisciplinary Forum on Subjective Well-Being*, 21(3), 1081– 1101.
14. West, A. M. (2008). Mindfulness and well-being in adolescence: An exploration of four mindfulness measures with an adolescent sample. *Dissertation Abstracts International: Section B: The Sciences and Engineering*, 69(5-B), 3283.



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 195-200

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Artificial Intelligence and Generative AI in Commerce and Business Models : Transformations, Applications, and Future Implications

Prof. (Dr.) Manish Kumar Kannoja

HEAD & DEAN – FACULTY OF COMMERCE

GOVERNMENT DEGREE COLLEGE- CAMPIE ARGANJ- GORAKHPUR.

Abstract :

The advent of Artificial Intelligence (AI), particularly Generative AI (GenAI), is profoundly reshaping commerce and business models in the digital era. As of January 2026, GenAI technologies—such as large language models (LLMs), generative adversarial networks (GANs), and multimodal systems—have transitioned from experimental tools to core drivers of innovation in e-commerce, retail, supply chain management, and customer engagement. This article provides a comprehensive examination of GenAI's integration into commerce, drawing on recent empirical studies, market analyses, and theoretical frameworks. Key applications include hyper-personalization, content generation, dynamic pricing, and agentic commerce, which enable businesses to achieve unprecedented efficiency and customer satisfaction. However, challenges such as ethical concerns, data privacy, bias, and implementation barriers persist, necessitating robust governance and transparent practices. The impact on business models is transformative, shifting from product-centric to experience-oriented paradigms, fostering platform ecosystems, and unlocking new monetization strategies. Future directions emphasize explainable AI, reinforcement learning, privacy-preserving techniques, and immersive technologies like AR/VR and the metaverse. By synthesizing scholarly literature and industry insights, this article offers strategic recommendations for academics, practitioners, and policymakers to harness GenAI responsibly, ensuring sustainable growth in an increasingly autonomous commercial landscape. Projections indicate the GenAI in e-commerce market will reach USD 3,949.94 million by 2035, growing at a CAGR of 15.17% from 2026.

Introduction :

In the rapidly evolving landscape of digital commerce, Artificial Intelligence (AI) and its subset, Generative AI (GenAI), stand as pivotal forces driving structural changes. As of early 2026, the global e-commerce market has surpassed USD 6 trillion in annual sales, with AI contributing significantly

to this growth by enhancing operational efficiency, personalization, and consumer experiences. GenAI, distinguished by its ability to create novel content—such as text, images, videos, and even code—based on learned patterns from vast datasets, marks a departure from traditional predictive AI. While conventional AI excels in classification, forecasting, and optimization, GenAI introduces creativity and autonomy, enabling dynamic interactions that mimic human-like reasoning and generation.

The historical evolution of AI in commerce traces back to the early 2000s with rule-based recommendation systems on platforms like Amazon. By the mid-2010s, machine learning advanced these to collaborative filtering and predictive analytics. The breakthrough came with GANs in 2014 and transformer models like BERT and GPT in subsequent years, allowing for generative applications such as virtual try-ons, personalized marketing copy, and conversational agents. Today, GenAI is integral to e-commerce giants: Amazon's Rufus assistant analyzes browsing history for tailored suggestions, while Alibaba's platforms leverage AIGC for content marketing.

Market dynamics underscore this shift. The GenAI in e-commerce sector was valued at USD 962.24 million in 2025 and is projected to grow to USD 1,111.39 million in 2026, reaching USD 3,949.94 million by 2035 at a CAGR of 15.17%. This growth is fueled by demands for personalized recommendations, content creation, demand forecasting, and fraud detection. Regionally, North America holds over 43% market share, driven by high e-commerce penetration and innovations like Amazon's AI tools, while Asia Pacific emerges as the fastest-growing area due to smartphone adoption and platforms like Flipkart integrating GenAI for pricing and experiences.

GenAI's impact extends to business models, transitioning from static transactions to dynamic, outcome-based ecosystems. For instance, agentic AI—systems that perceive, plan, and act independently—facilitates “zero-click” commerce, where agents negotiate and fulfill purchases autonomously. This not only boosts conversion rates by up to 22% but also equalizes opportunities for small sellers. However, adoption is uneven; only about 5% of enterprises fully integrate AI workflows, highlighting gaps in resources and expertise.

Ethical considerations are paramount. Biases in training data can perpetuate discrimination, while privacy risks under regulations like GDPR demand privacy-preserving frameworks. Consumer trust hinges on transparency, usefulness, and empathy, with studies showing that algorithm bias negatively affects acceptance.

This article aims to synthesize recent literature, empirical evidence, and projections to explore GenAI's applications, impacts on business models, challenges, and future directions. It draws on frameworks like the Motivation–Expectation Management Model (MEMM) for consumer-AI interactions and bibliometric analyses of trends. By addressing these, the paper provides actionable insights for sustainable integration in commerce.

Literature Review :

The scholarly discourse on AI and GenAI in commerce has proliferated since 2024, with special issues and reviews highlighting interdisciplinary intersections of technology, marketing, and

ethics. A bibliometric study by Bawack et al. (2022) mapped early AI applications in e-commerce, emphasizing predictive analytics, but recent works shift focus to generative capabilities.

Key themes emerge from 2024-2026 publications. In consumer behavior, GenAI reshapes interactions through personalized experiences, trust-building, and value co-creation. Schmitt (2025) discusses how GenAI influences attitudes and decisions via AI-created content, while Huang and Rust (2025) explore emotionally intelligent customer service. Empirical studies, such as Xie (2026), introduce the MEMM, revealing that extrinsic motivation drives personalization and user experience (UX) in developing markets like China, with mediation chains linking satisfaction to repurchase. Mixed methods (SEM–ANN–NCA) confirm linear and non-linear effects, offering insights for e-commerce optimization.

On personalization, Arora (2024) examines GenAI's role in enhancing customer experiences from conversations to reviews, outperforming traditional models in marketing. The MDPI special issue (2026) on AI in e-commerce underscores innovation through digital capabilities, with papers like Liang et al. showing AI's spillover effects on firm performance in manufacturing. Li et al. (2025) demonstrate AI Magic Mirrors reduce uncertainty in services, boosting purchase intentions. Yan et al. (2025) analyze pricing for LLMs, favoring subscriptions for frequent users.

Business model transformations are addressed in Israfilzade (2025), who traces GenAI's evolution and differentiates it from traditional AI by its content creation prowess. Trends include AI-driven content, visual generation, and dynamic pricing, with challenges in ethics and trust. Fang et al. (2025) from Columbia report GenAI boosts sales by 16.3% via chatbots, with productivity gains of 6% in global revenue.

Market reports from Technavio (2025) forecast a USD 2.22 billion increase by 2029 at 29.1% CAGR, driven by integrations like Shopify's Mistral AI. Precedence Research (2026) aligns with this, emphasizing machine learning's dominance. Statista (2025) notes 70% of e-commerce firms improved efficiency with GenAI.

Gaps in literature include longitudinal studies on agentic AI and regional disparities, particularly in developing economies. Future research directions propose explainable AI and privacy frameworks. This review synthesizes these to frame subsequent sections.

Applications of Generative AI in Commerce :

GenAI's applications in commerce span personalization, content creation, operations, and emerging agentic systems, revolutionizing how businesses engage consumers and optimize processes.

Hyper-Personalization and Customer Experience :

GenAI enables tailored interactions by analyzing real-time data on behavior, preferences, and context. In e-commerce, this manifests as individualized recommendations, product descriptions, and marketing messages. Studies show personalization boosts revenue by 10-15%, with 35% of Amazon purchases from AI suggestions. Virtual try-ons, like those at Sephora, yield 2.5x engagement and 31% conversion uplift. Multimodal AI integrates voice, images, and AR for immersive experiences,

reducing returns by simulating fits.

Conversational commerce via GenAI assistants shifts from keyword search to intent-based discovery. Taobao's Wenwen assistant exemplifies this, enhancing motivation through HCI and expectation confirmation. In healthcare e-platforms, GenAI adoption is driven by usefulness and social influence, mediated by trust.

Content Creation and Marketing :

GenAI automates high-volume content: product listings, ad copy, and campaigns. Brands like Estée Lauder use it for multilingual ads, while Gartner predicts 30% of outbound marketing will be GenAI-personalized by 2026. In fashion, GenAI generates custom designs integrated with platforms, enhancing scalability. Video generation (text-to-video) creates lifestyle scenes, boosting engagement.

Operational Efficiency and Supply Chain :

GenAI optimizes forecasting, pricing, and inventory with synthetic data for rare scenarios. Dynamic pricing analyzes demand for real-time adjustments, improving revenue by up to 20%. In logistics, it enables predictive maintenance and routing, as seen in Otto Group's AI robotics. Fraud detection identifies anomalies, safeguarding transactions.

Agentic Commerce and Autonomous Systems :

Agentic AI represents the frontier, with agents handling discovery, negotiation, and fulfillment. McKinsey notes this could intermediate trillions in B2B purchases by 2028. Walmart's Sparky and Amazon's Rufus exemplify proprietary agents. In B2C, 33% of Gen Z prefer AI for research, with trust surpassing human recommendations. Columbia's study shows chatbots increase sales by 16.3%, particularly for novices.

These applications, segmented by technology (e.g., NLP at 38% share), deployment (cloud-based leading), and application (B2C dominating), drive productivity gains of up to 40% by 2035.

Impact on Business Models :

GenAI catalyzes a paradigm shift in business models, from product-centric to experience-centric, platform-based ecosystems.

Shift to Experience-Centric Models :

Traditional models focus on goods; GenAI enables "as-a-service" outcomes, like personalized subscriptions. In retail, this creates value through immersive AR/VR, reducing costs and enhancing loyalty. Agentic commerce moves discovery upstream to conversational tools, with shopping searches on GenAI platforms growing 4,700% from 2024-2025.

Platform and Ecosystem Transformations :

GenAI fosters unified infrastructures, with AI-native firms showing higher growth. Platforms like Zalando integrate GenAI for advisors, shifting value to ecosystem participation. In B2B, agents scale negotiations, boosting acquisition by 50%.

Monetization Innovations :

New revenues emerge from agent-mediated ads and instant checkouts. MIT research anticipates

autonomous models by 2026, with enterprises investing 80% in workflows. Pricing mechanisms for LLMs consider psychological perceptions, favoring subscriptions.

Empirical Evidence :

Columbia's experiments show GenAI adds \$5 per consumer annually, contributing 6% to revenue growth. Smaller sellers benefit most, narrowing monopolies. In developing markets, MEMM cycles sustain interactions. Overall, GenAI transforms models toward agility and autonomy.

Challenges and Ethical Considerations :

Despite benefits, hurdles abound.

Implementation Gaps :

High costs and expertise needs limit adoption; SMEs face resource constraints. Technical limitations like hallucinations require oversight.

Ethical Risks :

Bias risks discrimination; deepfakes threaten trust. Privacy concerns demand federated learning. Legal issues include IP infringement.

Consumer Trust :

Skepticism arises from opacity; bias moderates acceptance. Frameworks like trustworthy AI emphasize fairness.

Environmental and Labor Impacts :

Energy-intensive training and job displacement necessitate sustainable practices and upskilling.

Future Directions :

By 2026-2035, agentic commerce will mainstream, with multimodal agents standard. Research focuses on explainability, reinforcement learning, and metaverse integration. Businesses should adopt 10-20-70 principles for integration.

Conclusion :

GenAI is a transformative force in commerce, enabling innovation while demanding ethical vigilance. Responsible adoption will define future success.

References :

- Taylor & Francis. (2026). Generative AI and Consumer Behaviour in E-Commerce. https://think.taylorandfrancis.com/special_issues/generative-ai-and-consumer-behaviour-in-e-commerce
- Xie, G. (2026). The impact of generative AI shopping assistants on E-commerce consumer motivation and behavior. International Journal of Information Management, 86, 102983. <https://www.sciencedirect.com/science/article/abs/pii/S026840122500115X>
- MDPI. (2026). Transforming E-Commerce with AI. Journal of Theoretical and Applied Electronic Commerce Research, 21(1), 29. <https://www.mdpi.com/0718-1876/21/1/29>
- Israfilzade, K. (2025). The Role of Generative Artificial Intelligence in E-Commerce: Trends, Challenges and Opportunities. The Eurasia Proceedings of Educational and Social Sciences, 42, 1-20.

https://www.researchgate.net/publication/394526552_The_Role_of_Generative_Artificial_Intelligence_in_E-Commerce_Trends_Challenges_and_Opportunities

- Fang, L., et al. (2025). Generative AI Is Quietly Supercharging Online Retail. Columbia Business School.
<https://business.columbia.edu/insights/digital-future/ai-supercharging-online-retail>
- Precedence Research. (2026). Generative AI in E-Commerce Market Report.
<https://www.precedenceresearch.com/generative-ai-in-e-commerce-market>.

E-mail id: dr.manishkannojia@gmail.com



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 201-207

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

महिला सशक्तिकरण में पंचायती राज की भूमिका

बिभा कुमारी, शोधार्थी,

प्रो.(डॉ.) अवध बिहारी सिंह, शोध निदेशक

प्रोफेसर व अध्यक्ष, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग,

वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

सारांश :

इस संबंध में पंचायती राज व्यवस्था महिलाओं के लिए अत्यंत कारगर सिद्ध हो रही है। बिहार में स्थानीय स्वायत्त शासन का अस्तित्व प्राचीन काल से है। उस समय में भी इसमें महिलाओं की भागीदारी हुआ करती थी, किंतु कालांतर में महिलाओं की यह भागीदारी लगभग समाप्त सी हो गई। स्वतंत्रता संघर्ष के क्रम में राजनीतिक और सामाजिक प्रक्रिया में महिलाओं के महत्व को समझा गया और शुरू से ही उन्हें अहम् स्थान मिला। महिलाओं को राजनीतिक क्षेत्र में उचित भागीदारी देने के लिए हमारे संविधान में कुछ प्रावधान किये गए हैं। इस पर अमल करने के उद्देश्य से उन्हें पंचायतों में आरक्षण दिया गया। महिला जन-प्रतिनिधि अपनी पंचायतों की महिलाओं को जागरूक बनाकर उनके सशक्तिकरण का मार्ग भी प्रशस्त कर रही है। कुछ प्रमुख बिंदुओं को रेखांकित करते हुए शोध आलेख का विषय का चुनाव किया गया है। प्रस्तुत शोध आलेख का उद्देश्य बिहार में पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की स्थिति का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्द : महिला सशक्तिकरण, पंचायती राज व्यवस्था, बिहार।

भूमिका :

बिहार में पंचायत व्यवस्था का एक इतिहास रहा है। सर्वप्रथम बिहार पंचायत राज अधिनियम 1947 बना जिसके अंतर्गत ग्राम पंचायत की व्यवस्था, कार्य, दायित्व आदि का उल्लेख था। उसके बाद बिहार पंचायत समिति एवं जिला परिषद् अधिनियम 1961 बना। इसके तहत स्तर पर पंचायत समिति एवं जिला स्तर पर जिला परिषद् के गठन, कार्य, अधिकार, उत्तरदायित्व आदि का समोवश था। 73वाँ संविधान संशोधन के तहत बिहार पंचायत राज अधिनियम, 1993 बना और पूर्व के बिहार पंचायत राज अधिनियम, 1947 एवं बिहार पंचायत समिति एवं जिला परिषद् अधिनियम 1961 को निरस्त कर दिया गया। 23 अगस्त 1993 से लागू बिहार पंचायत राज अधिनियम 1993 के अन्तर्गत गठित बिहार पंचायत निर्वाचन नियमावली 1995 के तहत विभिन्न कारणों से और कानूनी रुकावट के कारण 2000 ई. तक पंचायती राज का चुनाव नहीं हो सका। यहाँ यह उल्लेख करना उपर्युक्त होगा कि पूर्व के दोनों अधिनियमों में महिलाओं को प्रतिनिधित्व हेतु किसी प्रकार का आरक्षण या प्राथमिकता का कोई प्रावधान नहीं था। पुरुषों से प्रतिस्पर्द्धा लेकर पंचायती राज में किसी पद धारक पद पर

निर्वाचित होना टेढ़ी खीर थी। 1978 के पंचायती राज में मुश्किल से लगभग केवल तीन दर्जन महिलाएँ मुखिया, उपमुखिया प्रमुख तथा उपप्रमुख पद पर निर्वाचित हो सकी थी।

बिहार की महिलाओं के लिए बिहार पंचायत राज अधिनियम 1993 में सभी स्तरों पर एक-तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित करने का प्रावधान था। परंतु कानूनी व्यवधान के कारण वर्ष 2001 में हुए पंचायत राज चुनाव में प्रधान पद यानि मुखिया, प्रमुख एवं अध्यक्ष के पद पर महिलाओं के लिए आरक्षण नहीं था। फिर भी बिहार की महिलाएँ अपने में हिम्मत जुटाकर पुरुष वर्गों के साथ प्रतिस्पर्द्धा कर विभिन्न पदों पर खड़ा होकर उम्मीदवारी दाखिल कर चुनाव मैदान में कूद पड़ी। कठिन परिश्रम कर मतदाताओं में अपने पैठा बनाना प्रारंभ किया। पुरुष वर्गों के साथ महिलाओं के प्रतिस्पर्द्धा का केवल अनुमान लगाया जा सकता है। बिना आरक्षण के वर्ष 2001 के पंचायत चुनाव में कुल 78 महिला मुखिया (8471 ग्राम पंचायतों में) 529 पंचायत समितियों के चुनाव में कुल 56 महिला प्रमुख और 126 महिला उप-प्रमुख तथा 37 जिला परिषद् में 9 अध्यक्ष एवं 11 महिला उपाध्यक्ष निर्वाचित हुए। महिलाओं के कार्यों एवं प्रगति तथा प्रतिनिधित्व का वास्तविक इतिहास यही से प्रारंभ होता है।¹

2006 के नए पंचायत अधिनियम में आरक्षित और अनारक्षित दोनों श्रेणियों के कुल निर्वाचित पदाधिकारियों (अध्यक्षों) में आधे (पचास प्रतिशत) स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित कर दिए गए हैं। इसके फलस्वरूप 2006 के मई-जून में संपन्न हुए पंचायत चुनाव में अध्यक्षों की संख्या में से आधे स्थान (पचास प्रतिशत) पर महिलाएँ विजयी होकर आई है जो नीचे की तालिका में वर्णित है –

2006 पंचायत चुनाव : विजयी महिला अध्यक्ष

पंचायती राज संस्था का स्तर	निर्वाचित पद	विजयी महिला उम्मीदवारों की संख्या
ग्राम पंचायत	मुखिया	4435
पंचायत समिति	ब्लॉक प्रमुख	292
जिला परिषद्	अध्यक्ष	19

बिहार के 2006 के पंचायत राज अधिनियम के आरक्षण के प्रावधान के अनुरूप त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं में महिला सदस्यों की संख्या 1993 के पंचायत अधिनियम में दिए गए एक तिहाई आरक्षण से बढ़ाकर आधी कर दी गयी। ग्राम पंचायत स्तर पर महिला सदस्यों की संख्या— 5,814; पंचायत समिति स्तर पर महिला सदस्यों की संख्या— 855 और जिला परिषद् स्तर पर महिला सदस्यों की संख्या— 581 हो गयी।

अध्ययन की पद्धति :

अध्ययन में द्वितीयक तथ्य स्रोत के अंतर्गत अध्ययन से सम्बंधित ग्रन्थों, इंटरनेट, सरकारी रिपोर्ट, गैर सरकारी रिपोर्ट, शोध आलेख, जनगणना, पत्र-पत्रिकाओं आदि को सम्मिलित किया गया है। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त द्वितीयक आंकड़ों का विश्लेषण किया गया है।

बिहार में पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की स्थिति :

पंचायत चुनावों में स्त्रियों के लिए क्षैतिज आधार पर पचास फीसदी आरक्षण का प्रावधान करके नीतीश सरकार ने देश में ही नहीं, बल्कि दुनिया में एक कीर्तिमान स्थापित किया है। इस आरक्षण को आरक्षण के बजाय

आधी आबादी को त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था में पूरा 'अधिकार' देना कहा जाना चाहिए। दुनिया के किसी भी देश ने प्रत्यक्ष राजनैतिक सत्ता के किसी भी स्तर पर स्त्रियों के लिए पचास फीसदी आरक्षण का प्रावधान अभी तक नहीं किया है। स्वीडन एकमात्र ऐसा देश है, जहाँ बिना आरक्षण के 40-50 फीसदी तक स्त्रियाँ सत्ता के शीर्षस्थ निकाय में पिछले एक दशक से भी ज्यादा समय से अपनी भागीदारी दर्ज करती आई है। त्रि-स्तरीय पंचायत महिलाएँ काबिज हो गयी है।

इस सच्चाई से इंकार नहीं किया जा सकता ती राज संस्थाओं में कुल 2 लाख 60 हजार पद हैं, जिनमें से आधे यानि 1 लाख 20 हजार पदों पर है कि पचास फीसदी आरक्षण पूर्व मुखिया, सरपंचों की बहू-बेटियों, पत्नियों को निर्वाचित होने का मौका देकर विरासत की परंपरा को भी एक हद तक मजबूत करेगा। किंतु 2006 के चुनावों में बहुत सारे नतीजे वैसी स्त्रियों तथा पुरुषों के पक्ष में गए हैं, जिनकी कोई राजनैतिक पृष्ठभूमि नहीं है। ऐसे भी नतीजे सामने आए हैं, जहाँ दबंगों ने शिकस्त खाई है और ईमानदार छवि वाले स्त्री-पुरुष प्रत्याशी जीते हैं। ऐसे नतीजे जनता द्वारा 'विकास' और 'काम' के प्रति आग्रह को वरीयता देने की मानसिकता को रेखांकित करते हैं।

हालांकि बिहार में मई 2006 में जैसे ही मुखिया एवं पंचायत सदस्य आधी से अधिक यानि लगभग पचास फीसदी सीटों पर महिलाएँ काबिज हुई, चारों तरफ एक ही आवाज सुनाई दी — महिलाएँ तो रबर स्टाम्प की तरह रहेंगी। काम तो उनका पति, बेटा, पिता या भाई करेगा। इन तानों, फरमानों के माहौल में कुछ महिला जन-प्रतिनिधि स्वयं की इच्छा शक्ति के बूते तो कुछ सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा क्षमतावर्द्धन कार्यक्रमों में शामिल होकर दहलीज से बाहर कदम रखने की कोशिश में जुट गई।

महिला जन-प्रतिनिधियों के नेतृत्व का यह सफर आसान साबित नहीं हुआ है। उन्हें अपनी राजनीतिक भूमिका का निर्वाह करने की समझ धीरे-धीरे आ रही है। लेकिन उनके आगे सबसे बड़ी चुनौती है — परिवार का विरोध करते हुए निर्णय की शक्ति अपने हाथ में लेना। बिहार में भी अन्य राज्यों की तरह पंचायत में महिला नेतृत्व को न अपनाना, परिवार द्वारा काम करने की इजाजत नहीं देना, सरकारी कर्मचारियों एवं अधिकारियों द्वारा उनकी कार्य कुशलता पर प्रश्न चिह्न लगाना आदि कई स्तरों पर जन-प्रतिनिधियों को दोहरी लड़ाई लड़नी पड़ रही है।

वीणा देवी नवादा के लोहरपुर पंचायत से मुखिया चुनी गयी। उन्हें ज्यादा धनी एवं राजनीतिक रूप से प्रभावशाली व्यक्तियों और यहाँ तक कि अपने पुत्र के विरोध का भी सामना करना पड़ा था। उन्होंने बताया कि एक उम्मीदवार ने तो उन्हें यहाँ तक धमकी दी थी कि यदि नामांकन वापस नहीं हुआ तो उनके साथ बलात्कार किया जाएगा। अन्य ने अपहरण की भी धमकी दी। किंतु अब वे सभी मुझे 'सर' संबोधित करके बुलाते हैं। उन्होंने गाँव में विद्यालय, सामुदायिक भवन, सड़कें, बिजली, नलकूप आदि की सुविधा के लिए कई प्रयास किए।²

मात्र मैट्रिक पास 48 वर्षीय मुखिया बसंती देवी नारी सशक्तिकरण के लिए क्षेत्र में चर्चित है। उन्हें लोहिया स्वच्छता पुरस्कार योजना के तहत निर्मल ग्राम पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया। वे सासाराम की घौदाढ़ पंचायत की मुखिया हैं। उन्होंने पंचायत में महिलाओं के सशक्तिकरण के कई-कई काम किए हैं। गर्भवती व प्रसूता के अलावा दलित महिलाओं को उचित सहयोग देने के लिए वे हमेशा तत्पर रही। शराबबंदी पर जोर दिया। दहेज उत्पीड़न जैसे कई मामलों को निबटाने में भी उन्होंने सहयोग किया।³

मीनापुर ब्लॉक की राधोई पंचायत की सरपंच किरण देवी एक सामान्य परिवार से आती है। उनका जन्म 27 मार्च 1984 को हुआ। 2006 के चुनाव में वे सरपंच पद के लिए खड़ी हुई और सात प्रतिद्वंद्वियों को परास्त कर चुनाव जीता। अनेक बाधाओं के बावजूद किरण उन लोगों की समस्याओं को सुनती जो बड़ी संख्या में उनके पास अपनी समस्याओं को लेकर आते। पंचायत के अन्य सदस्यों के साथ वे प्रत्येक रविवार को ग्राम कचहरी की बैठक बुलायी। जैसे ही कोई शिकायत दर्ज होगी, वह वार्ड के अन्य पंचों से विचार-विमर्श करती, शिकायतों को देखते, उससे संबंधित रिपोर्ट को लिखती एवं ग्राम कचहरी को सुपुर्द करती। दोनों ही पक्षों को ग्राम कचहरी में उपस्थित होने के लिए कहा जाता और अपना-अपना पक्ष रखने की बात कही जाती। तत्पश्चात् पंचों और सरपंच के विचार-विमर्श करती, शिकायतों को देखती, उससे संबंधित रिपोर्ट को लिखती एवं ग्राम कचहरी को सुपुर्द करती।

दोनों ही पक्षों को ग्राम कचहरी में उपस्थित होने के लिए कहा जाता और अपना-अपना पक्ष रखने की बात कही जाती। तत्पश्चात् पंचों और सरपंच के विचार-विमर्श के बाद किसी नतीजे पर पहुँचा जाता। अधिकांश विवादों का समाधान वे समझौते द्वारा कराने में सफल हुई। कुछ विवादों में अर्थदंड भी लगाया गया और जो राशि एकत्र हुई, उसे गांव के कल्याण कार्यक्रमों पर खर्च किया गया। अभी तक किरण ने लगभग 115 विवादों का समाधान किया जो सभी लेखबद्ध हैं। एक भी ऐसा विवाद नहीं है जिसमें उन्होंने समझौता कराया और उसके खिलाफ उच्च अदालतों में अपील की गयी है। आज उनका सम्मान इतना है कि किसी विवाद के संबंध में हस्तक्षेप करने से पहले उस क्षेत्र के पुलिस अधिकारी भी पहले उनसे विचार-विमर्श कर सलाह लेते हैं। किरण का मानना है कि न्याय मिलने में कभी भी देरी नहीं होनी चाहिए। किरण एक ऐसे समाज की परिकल्पना करती है जहाँ विवादों की संख्या बहुत कम हो और यदि हो भी तो उन्हें परस्पर समझौते से सुलझाया जा सके। उनका मानना है कि छोटे-छोटे विवादों को तुरंत सुलझाया जाना चाहिए इससे पहले कि वे बड़े झगड़ों में परिणत हो और गांव में तनाव पैदा करें। किरण ग्राम कचहरी के साथ-साथ अपनी प्रत्येक जिम्मेदारी का बखूबी निभा रही है और इसमें भी उनके परिवार व पति पूर्ण सहयोग कर रहे हैं। किरण अधिक से अधिक विकास कार्यों से खुद को जोड़ना चाहती है।⁴

श्रीमती रेणु देवी ने पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत 2001 से 2006 ई. तक समस्तीपुर जिला परिषद में महिला जिला पार्षद के रूप में अपनी महती सेवा प्रदान की। इनके नेतृत्व में कई ग्रामीण सड़कों का निर्माण हुआ। कई विद्यालयों का पुनरोद्धार किया गया। कामगार प्रशिक्षण का कार्यक्रम भी चलाया गया। पांडगढ़ जैसे ऐतिहासिक स्थल जहाँ उत्खनन में मानव सभ्यता के अति प्राचीन काल के अवशेष प्राप्त हुए हैं उसे सड़क मार्ग से जोड़ा गया। जिला पार्षद के रूप में जिला परिषद के कई महत्वपूर्ण समितियों के सदस्य के रूप में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनकी कर्मठता और सेवा भावना की चर्चा आज भी आम लोगों के बीच होती है।⁵

पंचायतों में सक्रिय भूमिका निभाने के साथ-साथ महिलाओं ने समाज को ही बदलना शुरू कर दिया। इनके प्रयासों से गांव के स्तर पर सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ एक जंग शुरू हो गई है। कहीं महिला मुखिया तो कहीं सरपंचों ने सबसे पहले गांव की सूरत बदलने की ठानी। उन्हें पता था कि महिलाओं के लिए खुले स्थान में शौचालय जाना कितना शर्मनाक होता है। फलतः मोतिहारी के हरपुर पंचायत की मुखिया बच्ची देवी, मधुबनी की जिला परिषद् सदस्य अनिता, गोपालगंज जिले के हथुआ प्रखंड के सेमरॉव पंचायत की गुलाबी देवी, बक्सर की धनसोई पंचायत की मुखिया बबीता देवी आदि ने घर-घर घूमकर लोगों को इस बात के लिए तैयार किया

कि घर के साथ उसमें शौचालय भी निहायत जरूरी है। इनके पंचायतों के कई गांवों में हर घर में शौचालय हो गए हैं।⁶

निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों में बहुत सी अशिक्षित होने के बावजूद पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती दे रही हैं। उनके काम को सिर्फ 'सामाजिक सक्रियता' या बड़े 'सामाजिक सुधार' के रूप में न देखकर एक ऐसे व्यापक संघर्ष के रूप में देखा जाना चाहिए जिसमें वो पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती देते हुए राजनीतिक शक्ति को पाने एवं स्वयं को सशक्त बनाने का प्रयास कर रही है। अधिकांश इस बात को लेकर जागरूक है कि एक पितृसत्तात्मक व्यवस्था में हिंसा और भ्रष्टाचार बहुत गहरी जड़ें जमाए हुए हैं और इनसे संघर्ष करना आसान नहीं है लेकिन वो अपनी पंचायत के माध्यम से लोगों को सामाजिक समस्याओं यथा घरेलू हिंसा के संबंध में जागरूक कर रही है। इस कार्य में उन्हें बहुत सी परेशानियों का भी सामना करना पड़ रहा है। रोहतास जिले की इंद्रपुरी पंचायत की मुखिया शांति देवी ने तो अपनी पंचायत के दो सहयोगी निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के साथ गांव के प्रत्येक घर में जाकर घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं की समस्याओं को सुनने व समाधान के लिए परामर्श देने का कार्य किया। मुजफ्फरपुर की धीमा पंचायत की मुखिया गायत्री देवी को तो बहुत बहु का जबर्दस्ती गर्भपात करवाने से रोकने के लिए अपने पुत्र के खिलाफ ही संघर्ष करना पड़ा।

इतना ही नहीं पंचायतों की निर्वाचित महिला प्रतिनिधि सूचना के अधिकार का भी बखूबी इस्तेमाल कर रही है। आरटीआई कार्यकर्ता के रूप में तो इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत मिलने वाले लाभ, अन्य अनुदानों में होने वाली देरी तथा केन्द्रीय योजनाओं के कार्यान्वयन से संबंधित जानकारियों की भी मांग कर रही है।

वर्ष 2005-2006 में गए गए एक अध्ययन (सच्चिदानंद, 2005) के जरिए यह जानने की कोशिश की गई कि पंचायती राज संस्थाओं में निर्वाचित अनुसूचित जाति के स्त्री तथा पुरुष प्रतिनिधियों में स्वयं के सशक्तिकरण की प्रक्रिया कैसी रही तथा अपनी जमातों के विकास के लिए किए गए उनके प्रयासों की स्थिति क्या रही। इस अध्ययन के लिए ऐसे जिलों में 938 निर्वाचित प्रतिनिधियों के नमूने लिए गए, जहाँ अनुसूचित जाति की आबादी का अनुपात अपेक्षाकृत ज्यादा था। ये जिले थे— गया, पूर्णिया, रोहतास, समस्तीपुर तथा प. चम्पारण। कुल 938 प्रतिनिधियों में से 358 स्त्रियाँ थी। इन स्त्री प्रतिनिधियों को मुख्य रूप से चमार, मुसहर, दुसाध तथा पासी जातियों से चुना गया। इनमें से कुछ धोबी तथा मेहतर जातियों से भी थीं। ज्यादातर प्रतिनिधि मजदूरी करनेवाली, घरेलू कार्यों में लिप्त रहने वाली थी तथा भूमिहीन गरीबी रेखा से नीचे वाले परिवारों से संबंध रखने वाली स्त्रियाँ थीं। ज्यादातर अशिक्षित थीं, किंतु कुछेक हाई स्कूल तक शिक्षा प्राप्त थी। जब पंचायत चुनावों की घोषणा हुई, तब इनमें से ज्यादातर ने अपना नामांकन दाखिल करने में भी संकोच किया था किंतु चुनाव जीतने के बाद, ज्यादातर प्रतिनिधियों ने आम जनों की सेवा के जज्बे का परिचय दिया तथा उन्हें उनके लिए बनी सरकारी योजनाओं के बारे में बताया एवं संबंधित कार्य भी किए। ये सब करने में उन्हें कई तरह की बाधाओं का भी सामना करना पड़ा। अनुसूचित जाति की स्त्रियों को सशक्त करने की दिशा में भी इन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। इन्होंने उन स्त्रियों को अपने अधिकारों के प्रति सचेत करने के साथ-साथ उन सरकारी स्कीमों के प्रति जागरूक बनाया जो उनके कल्याण के लिए हैं, उन्हें ग्राम सभा की बैठकों में भागीदारी के लिए प्रोत्साहित किया, उन्हें अर्थोपार्जन करने योग्य आर्थिक गतिविधियों की ओर अपना ध्यान देने को संगठित एवं उत्साहित किया तथा कुछ ऐसी स्त्रियों को बैंक से कर्ज दिलवाने में मदद की है। फलतः समुदाय में नीची जाति की स्त्रियों का सम्मान और महत्व बढ़ा

है। वे अब स्थानीय राजनीतिक प्रक्रियाओं में हिस्सा लेती हैं और अपने समुदाय की भलाई के बारे में सोचने लगी हैं।⁷

निष्कर्ष :

प्रभावशाली पितृसत्तात्मक व्यवस्था को बदलना इतना आसान नहीं है। महिला नेतृत्व के पहले कदम की शुरुआत होती है— घर की चहारदिवारी के अंदर अपने पद के अधिकार को हाथ में लेने की कोशिश करना। प्रदेश में कई ऐसी महिला जन-प्रतिनिधि हैं, जो पंचायत और परिवार के द्वंद्व में मानसिक एवं शारीरिक यातनाएँ झेल रही हैं। कई जन-प्रतिनिधियों के सामने ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी गयी कि वह अपनी राजनीतिक भूमिका को निभाए या फिर परिवारिक रिश्ते को। कुछ परिस्थिति से हार मानकर चुप बैठ गई, तो कुछ आज भी 'परिवार' एवं 'मैं' की टकराहट में उलझी हुई हैं। जाहिर तौर पर महिला के हाथ में सत्ता संसाधन और शक्ति को सदियों से स्थापित पितृसत्तात्मक समाज सहजता से स्वीकार नहीं करेगा। महिलाओं के पक्ष में वातावरण बनाने एवं संरक्षण देने के बजाय उन्हें सिर्फ पद पर बैठाया गया। नतीजतन कल तक घरेलू हिंसा का शिकार होने वाली महिलाएँ, अब अपनी आवाज उठाने लगी हैं, उन्हें बाहर भी शारीरिक, मानसिक हिंसा का शिकार होना पड़ रहा है। बातें ज्यादा गंभीर हुई, तो कहीं हत्या तो कहीं आत्महत्या को विवश हो रही है। पंचायतों में पहुँचने वाली कई महिलाएँ ऐसी थी जो निरक्षर थी जो कुछ ऐसी भी महिलाएँ थी जिन्होंने उच्च शिक्षा हासिल की थी। अद्भुत बात यह रही कि दोनों तरह की महिला जन-प्रतिनिधि शिक्षा का अलख जगाने लगी। कुछ मुखिया सरपंच ने बच्चों को खुद पढ़ाना शुरू किया तो कुछ ने गांव भर के बच्चों को स्कूल पहुँचाना अपनी दिनचर्या में शामिल कर लिया। सूबे का शायद ही ऐसा कोई जिला हो जिसके किसी न किसी पंचायत में महिला जन-प्रतिनिधि शराब के खिलाफ अभियान नहीं चला रही हो। इस बात में कोई दो राय नहीं है कि सशक्तिकरण के लिए महिलाओं के हाथों में सत्ता का आना जरूरी है किंतु दहलीज से बाहर कदम रख रहे महिला नेतृत्व को राजनीति में स्थान के साथ ही संरक्षणात्मक एवं सहयोगात्मक व्यवहार की अपेक्षा भी किया जा सकता है।

संदर्भ सूची :

- पंचायत समिति रिपोर्ट, अशोक मेहता समिति, अगस्त, 1978, ग्रामीण विकास विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित।
- V. Devi (1999) womens and panchayati raj, sterling publication, bombay.
- Kumari, A. (2018). Panchayat and rural development: A case study of Kudhani block under Muzaffarpur district, Bihar. International Journal of Academic Research and Development, 3(2), 1744–1747.
- घनश्याम राय : नक्सलवादी आंदोलन में महिलाये : प्राच्य प्रकाशन, पटना, 2009।
- Nagaraju, G. K. (2018). Chalanges and oppurtunities for sustainable rural development in india. Tumbe group of international journals, 1(3).
- Ali, P. S. (2021). Women Leadership and Its Impact on Panchayati Raj Institution: A Study Based on India's 6 Poorest Rural Regions (Bihar, Jharkhand, Orissa, Uttar Pradesh, Chhattisgarh,

Madhya Pradesh). Journal of Arts, Humanities and Social Sciences, 8(4), 77–85.

- भारतीय संविधान : अनुच्छेद 40, नीति निर्देशक तत्व।
- डॉ० विजय ठाकुर 2005 'बिहार के विकास में महिलाओं का योगदान', दिल्ली, कमल प्रकाशन।
- सच्चिदानंद : इम्प्लायमेंट ऑफ दलितस् थ्रू पंचायती राज, पटना, 2007।
- Ananth, P. (2014) Panchayati Raj in India. Journal of Education & Social Policy, 1(1).
- O. S. Panda, A. M. (2013) A Review of Rural Development Programmes in India. International Journal of Research in Sociology and Social Anthropology.
- Sharanappa, K. C. (2021) A Sociological Analysis of Panchayath Raj and Rural Development Program in India. International Journal of Research in Engineering, Science and Management, 4(8).

Mob No.-9934960669

Email id- bibha9934960669@gmail.com

Email Id: awadhbiharisingh195@gmail.com

Mob. NO:- 9431463994



संगम Impact Factor : 7.834

Website :
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

SANGAM

Vol. 14, Issue 7-8

पृष्ठ : 208-218

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

विकसित भारत 2047 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी कृषि विकास हेतु सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियों एवं अवसरों का अध्ययन

गगन दीप सिंह, शोधार्थी,

डॉ. दिनेश जोशी, विभागाध्यक्ष,

वाणिज्य विभाग, इंदिरा प्रियदर्शिनी राजकीय स्नातकोत्तर महिला वाणिज्य महाविद्यालय हल्द्वानी (नैनीताल)
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड)

सारांश :

प्रस्तुत अध्ययन “विकसित भारत 2047 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी कृषि विकास हेतु सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियों एवं अवसरों का अध्ययन” विषय पर आधारित है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य सीमांत कृषकों के समक्ष उपस्थित प्रमुख विपणन चुनौतियों का विश्लेषण करना तथा विकसित भारत 2047 के संदर्भ में उपलब्ध विपणन अवसरों का मूल्यांकन करना है। भारत की कृषि व्यवस्था में सीमांत कृषकों की महत्वपूर्ण भूमिका है, किंतु सीमित संसाधनों, छोटे जोत आकार तथा विपणन संबंधी समस्याओं के कारण उन्हें अपनी कृषि उपज का उचित मूल्य प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

अध्ययन के निष्कर्षों से ज्ञात हुआ कि अधिकांश सीमांत कृषक बाजार तक पहुँच, परिवहन सुविधाओं की कमी, भंडारण व्यवस्था के अभाव, बिचौलियों पर निर्भरता तथा मूल्य अस्थिरता जैसी समस्याओं से प्रभावित हैं। दूसरी ओर, अध्ययन में यह भी पाया गया कि डिजिटल कृषि विपणन, ई-नाम (e-NAM), किसान उत्पादक संगठन (FPO), सहकारी संस्थाएँ, जैविक कृषि, मूल्य संवर्धन तथा कृषि उद्यमिता जैसे क्षेत्र सीमांत कृषकों के लिए महत्वपूर्ण अवसर प्रदान कर रहे हैं। इन अवसरों के माध्यम से बाजार तक पहुँच बढ़ाने, बेहतर मूल्य प्राप्त करने तथा आय में वृद्धि की संभावनाएँ मौजूद हैं। अध्ययन निष्कर्ष रूप में यह इंगित

करता है कि विकसित भारत 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियों का समाधान तथा उपलब्ध अवसरों का प्रभावी उपयोग आवश्यक है। इससे समावेशी कृषि विकास, ग्रामीण समृद्धि एवं कृषकों के आर्थिक सशक्तिकरण को बढ़ावा मिलेगा।

मुख्य शब्द : सीमांत कृषक, कृषि विपणन, समावेशी कृषि विकास, विकसित भारत 2047, विपणन चुनौतियाँ एवं अवसर।

परिचय :

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ की एक बड़ी जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए कृषि एवं उससे संबंधित गतिविधियों पर निर्भर है। कृषि न केवल देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती है, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की आधारशिला भी है। भारतीय कृषि की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ अधिकांश कृषक छोटे एवं सीमांत श्रेणी के हैं, जिनके पास कृषि योग्य भूमि का आकार बहुत कम होता है। सीमित भूमि, संसाधनों की कमी, आधुनिक तकनीकों तक अपर्याप्त पहुँच तथा वित्तीय बाधाओं के कारण इन कृषकों की आर्थिक स्थिति अपेक्षाकृत कमजोर रहती है। इसके अतिरिक्त कृषि उपज के विपणन से जुड़ी समस्याएँ उनकी आय वृद्धि में एक महत्वपूर्ण बाधा बनती हैं। वर्तमान समय में भारत सरकार द्वारा वर्ष 2047 तक देश को विकसित राष्ट्र बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है, जिसे “विकसित भारत 2047” के रूप में जाना जाता है। इस दृष्टि का उद्देश्य केवल आर्थिक प्रगति प्राप्त करना नहीं है, बल्कि विकास की प्रक्रिया में समाज के सभी वर्गों की सहभागिता सुनिश्चित करना भी है।

इसी कारण समावेशी कृषि विकास की अवधारणा को विशेष महत्व दिया जा रहा है, जिसमें छोटे एवं सीमांत कृषकों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ना आवश्यक माना गया है। कृषि क्षेत्र में समावेशी विकास तभी संभव है जब कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो तथा उन्हें प्रभावी एवं सुलभ विपणन व्यवस्था उपलब्ध हो। कृषि विपणन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से कृषि उत्पाद उत्पादक से उपभोक्ता तक पहुँचते हैं। यह प्रक्रिया कृषकों की आय, लाभप्रदता तथा आर्थिक सशक्तिकरण को सीधे प्रभावित करती है। किंतु अधिकांश सीमांत कृषकों को बाजार संबंधी जानकारी के अभाव, परिवहन सुविधाओं की कमी, भंडारण व्यवस्था की अपर्याप्तता, बिचौलियों पर अत्यधिक निर्भरता, मूल्य अस्थिरता तथा संगठित बाजारों तक सीमित पहुँच जैसी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। विशेष रूप से पर्वतीय एवं दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में ये चुनौतियाँ और अधिक गंभीर हो जाती हैं, जहाँ कृषकों के लिए

बाजार तक पहुँचना कठिन होता है तथा उन्हें अपनी उपज अपेक्षाकृत कम मूल्य पर बेचनी पड़ती है। परिणामस्वरूप उत्पादन में पर्याप्त परिश्रम और निवेश करने के बाद भी उन्हें अपेक्षित आर्थिक लाभ प्राप्त नहीं हो पाता।

दूसरी ओर, बदलते आर्थिक एवं तकनीकी परिवेश में कृषि विपणन के क्षेत्र में अनेक नए अवसर भी विकसित हुए हैं। डिजिटल तकनीकों का विस्तार, ई-नाम (e-NAM), किसान उत्पादक संगठन (FPO), मूल्य संवर्धन, जैविक कृषि उत्पादों की बढ़ती माँग, कृषि आधारित उद्यमिता तथा विभिन्न सरकारी योजनाएँ सीमांत कृषकों के लिए नए संभावित अवसर प्रस्तुत कर रही हैं। इन पहलों के माध्यम से कृषकों को व्यापक बाजारों तक पहुँच, बेहतर मूल्य प्राप्ति तथा आय वृद्धि के अवसर उपलब्ध हो सकते हैं। विकसित भारत 2047 की परिकल्पना में कृषि क्षेत्र को आत्मनिर्भर, प्रतिस्पर्धी, तकनीक-सक्षम एवं समावेशी बनाने पर विशेष बल दिया गया है। इसके लिए आवश्यक है कि सीमांत कृषकों की विपणन संबंधी समस्याओं को समझा जाए तथा उनके समाधान हेतु प्रभावी नीतियाँ एवं रणनीतियाँ विकसित की जाएँ।

इसी संदर्भ में सीमांत कृषकों द्वारा अपनाई जाने वाली विपणन रणनीतियों, उनके समक्ष उपस्थित चुनौतियों तथा उपलब्ध अवसरों का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है। यह अध्ययन न केवल सीमांत कृषकों की वर्तमान विपणन स्थिति को स्पष्ट करेगा, बल्कि विकसित भारत 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में उनकी भूमिका एवं योगदान को भी रेखांकित करेगा। साथ ही यह अध्ययन उन नीतिगत उपायों की पहचान करने में सहायक होगा, जिनके माध्यम से सीमांत कृषकों की विपणन क्षमता को सुदृढ़ बनाकर उनकी आय में वृद्धि की जा सके तथा कृषि क्षेत्र में समावेशी एवं सतत विकास को प्रोत्साहित किया जा सके। इस प्रकार सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियों एवं अवसरों का अध्ययन विकसित भारत 2047 की संकल्पना को साकार करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकता है।

उद्देश्य :

1. विकसित भारत 2047 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी कृषि विकास हेतु सीमांत कृषकों के समक्ष उपस्थित प्रमुख विपणन चुनौतियों का अध्ययन करना।
2. विकसित भारत 2047 के लक्ष्यों की प्राप्ति के संदर्भ में सीमांत कृषकों के लिए उपलब्ध विपणन अवसरों तथा उनके कृषि विकास में योगदान का विश्लेषण करना।

शोध प्रविधि :

प्रस्तुत अध्ययन “विकसित भारत 2047 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी कृषि विकास हेतु सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियों एवं अवसरों का अध्ययन” विषय पर आधारित है। इस अध्ययन का उद्देश्य सीमांत कृषकों के समक्ष विद्यमान विपणन संबंधी चुनौतियों तथा उपलब्ध अवसरों का विश्लेषण करना है। अध्ययन में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध अभिकल्प का उपयोग किया गया है। अध्ययन हेतु आवश्यक जानकारी प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आँकड़ों से प्राप्त की गई है। प्राथमिक आँकड़ों के संकलन के लिए चयनित सीमांत कृषकों से साक्षात्कार माध्यम से जानकारी एकत्रित की गई। वहीं द्वितीयक आँकड़ों के लिए विभिन्न पुस्तकों, शोध पत्रों, सरकारी रिपोर्टों, कृषि विभाग के प्रकाशनों तथा अन्य प्रासंगिक स्रोतों का उपयोग किया गया। अध्ययन में सीमांत कृषकों की विपणन संबंधी समस्याओं, बाजार तक पहुँच, मूल्य प्राप्ति, संस्थागत सहयोग तथा उपलब्ध विपणन अवसरों का विश्लेषण किया गया है। संकलित आँकड़ों का वर्गीकरण, सारणीकरण एवं प्रतिशत पद्धति द्वारा विश्लेषण किया गया है। अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर विकसित भारत 2047 के लक्ष्य के अनुरूप समावेशी कृषि विकास हेतु आवश्यक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं। इस प्रकार यह अध्ययन सीमांत कृषकों की विपणन स्थिति को समझने तथा उनके आर्थिक सशक्तिकरण की संभावनाओं का मूल्यांकन करने का प्रयास करता है।

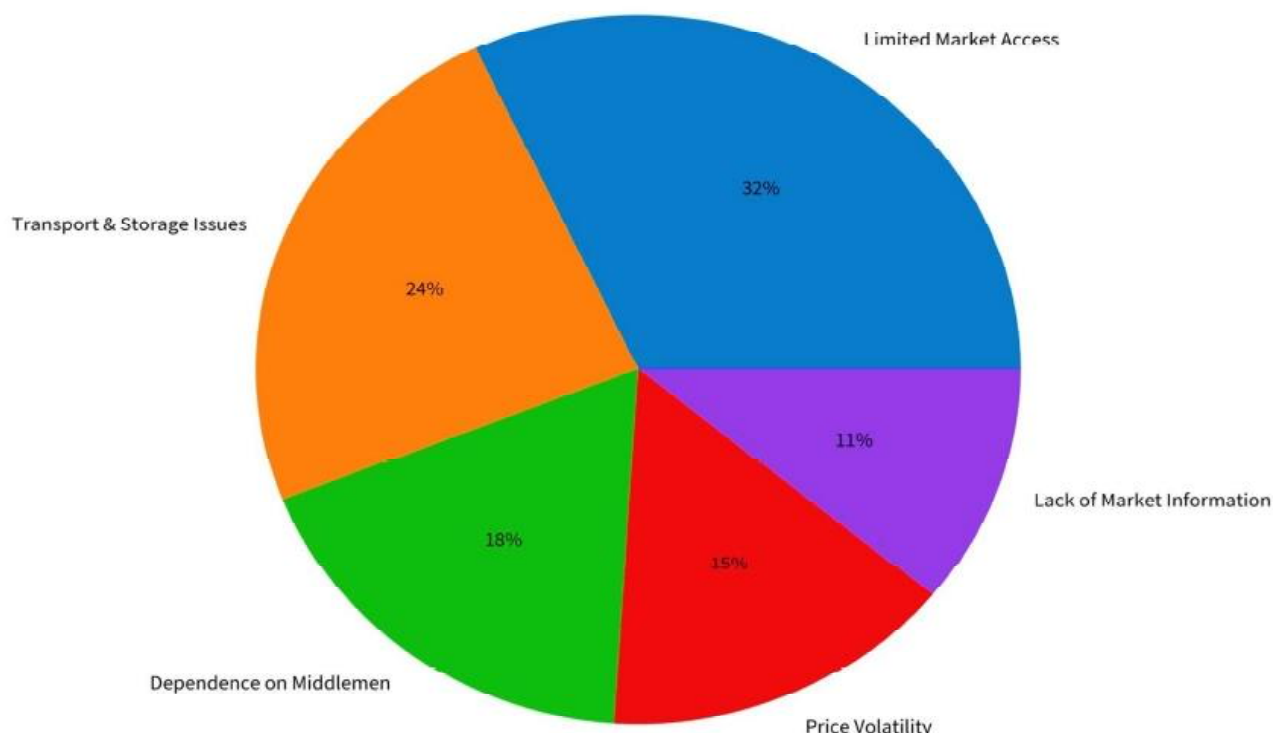
बाजार तक पहुँच एवं विपणन अवसररचना संबंधी चुनौतियाँ :

सीमांत कृषकों को अपनी कृषि उपज बाजार तक पहुँचाने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ग्रामीण एवं दूरस्थ क्षेत्रों में परिवहन सुविधाओं की कमी, सड़कों की खराब स्थिति तथा बाजारों की दूरी के कारण कृषकों की विपणन लागत बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त भंडारण, शीतगृह एवं प्रसंस्करण सुविधाओं के अभाव में कृषकों को फसल कटाई के तुरंत बाद अपनी उपज बेचनी पड़ती है, जिससे उन्हें उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता।

मूल्य निर्धारण एवं बिचौलियों पर निर्भरता की समस्या :

अधिकांश सीमांत कृषकों के पास बाजार संबंधी पर्याप्त जानकारी नहीं होती, जिसके कारण वे अपनी उपज का उचित मूल्य निर्धारित नहीं कर पाते। स्थानीय व्यापारियों एवं बिचौलियों पर निर्भरता के कारण कृषकों की सौदेबाजी शक्ति कमजोर रहती है। परिणामस्वरूप उन्हें बाजार मूल्य से कम कीमत पर अपनी उपज बेचनी पड़ती है, जिससे उनकी आय एवं लाभप्रदता प्रभावित होती है।

Major Marketing Challenges Faced by Marginal Farmers

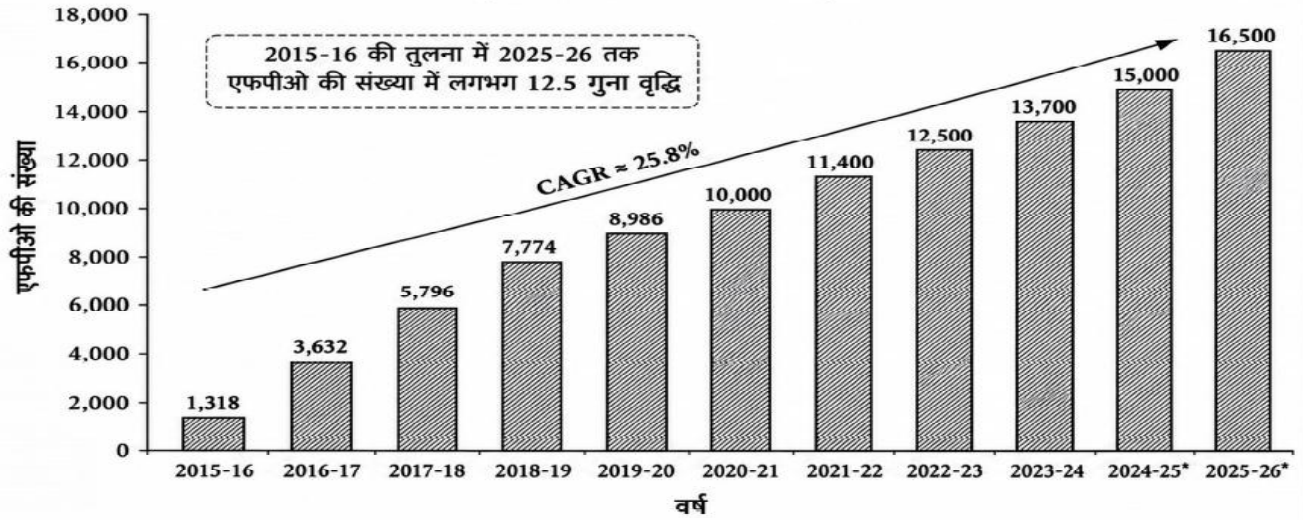


स्रोत: विभिन्न स्रोतों से संकलित आँकड़ों के आधार पर शोधकर्ता द्वारा तैयार।

चित्र से स्पष्ट होता है कि सीमांत कृषकों की सबसे बड़ी विपणन चुनौती बाजार तक सीमित पहुँच (32%) है। इसके बाद परिवहन एवं भंडारण की समस्या (24%), बिचौलियों पर निर्भरता (18%), मूल्य अस्थिरता (15%) तथा विपणन सूचना का अभाव (11%) प्रमुख चुनौतियाँ हैं। इससे स्पष्ट होता है कि समावेशी कृषि विकास एवं विकसित भारत 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु विपणन अवसंरचना एवं बाजार सुविधाओं को सुदृढ़ बनाना आवश्यक है। सूचना, तकनीकी एवं संस्थागत सहायता से संबंधित चुनौतियाँ :

वर्तमान समय में कृषि विपणन में डिजिटल तकनीकों एवं आधुनिक विपणन प्रणालियों का महत्व बढ़ रहा है, किंतु अधिकांश सीमांत कृषक इन सुविधाओं का पूर्ण लाभ नहीं उठा पाते। बाजार भाव, सरकारी योजनाओं, ई-मार्केटिंग प्लेटफॉर्म तथा किसान उत्पादक संगठनों (FPO) की जानकारी का अभाव उनकी विपणन क्षमता को सीमित करता है। साथ ही वित्तीय संस्थानों एवं सरकारी सहायता तक सीमित पहुँच भी उनकी विपणन संबंधी समस्याओं को बढ़ाती है।

**चित्र 1 : भारत में किसान उत्पादक संगठनों (FPO) की संख्या में वृद्धि
(2015-16 से 2025-26*)**



* 2024-25 एवं 2025-26 अनुमानित आँकड़े हैं।

स्रोत : कृषि जनगणना 2015-16, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, SFAC, PIB (विभिन्न वार्षिक रिपोर्ट)

स्रोत : विभिन्न स्रोतों से संकलित आँकड़ों के आधार पर शोधकर्ता द्वारा तैयार।

विकसित भारत 2047 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी कृषि विकास हेतु सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियाँ एवं अवसर : प्रमुख आँकड़े

क्र.सं.	विषय	संकेतक / विवरण	आँकड़ा / प्रतिशत	वर्ष	स्रोत
1	कुल कृषि जोत	भारत में कुल कृषि जोत की संख्या	14.65 करोड़	2015-16	कृषि जनगणना 2015-16
2	सीमांत कृषक (<1 हे.)	कुल कृषकों का प्रतिशत	68.45%	2015-16	कृषि जनगणना 2015-16
3	लघु कृषक (1-2 हे.)	कुल कृषकों का प्रतिशत	17.62%	2015-16	कृषि जनगणना 2015-16
4	सीमांत + लघु कृषक	कुल कृषकों का सम्मिलित प्रतिशत	86.08%	2015-16	कृषि जनगणना 2015-16
5	औसत जोत आकार	प्रति जोत औसत कृषि भूमि	1.08 हेक्टेयर	2015-16	कृषि जनगणना 2015-16
6	सीमांत कृषक का औसत जोत आकार	प्रति सीमांत कृषक औसत भूमि	0.38 हेक्टेयर	2015-16	कृषि जनगणना 2015-16
7	लघु कृषक का औसत जोत आकार	प्रति लघु कृषक औसत भूमि	1.40 हेक्टेयर	2015-16	कृषि जनगणना 2015-16
8	कृषि का GDP में योगदान	कुल GDP में कृषि का योगदान	लगभग 15%	2022-23	PIB, MoSPI
9	कृषि में कार्यरत जनसंख्या	कुल कार्यबल का प्रतिशत	लगभग 45%	2022-23	NSO (PLFS 2022-23)
10	किसानों की मासिक औसत आय	सीमांत किसानों की औसत मासिक आय	₹10,218	2018-19	NABARD
11	फसल की औसत उपज (खद्यान्न)	प्रति हेक्टेयर औसत उपज	2,487 किग्रा/हे.	2021-22	कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
12	मंडी के माध्यम से बिकने वाली उपज	कुल कृषि उपज का भाग	लगभग 40%	2021-22	NABARD
13	भंडारण क्षमता (ग्रामीण)	कुल आवश्यक भंडारण क्षमता का प्रतिशत	लगभग 30%	2021-22	NABARD
14	FPO (किसान उत्पादक संगठन)	कुल पंजीकृत FPO की संख्या	10,000+	2023	SFAC
15	e-NAM से जुड़े मंडी	कुल मंडियों की संख्या	1,300+	2023	e-NAM पोर्टल
16	e-NAM पर किसान पंजीकरण	कुल पंजीकृत किसान	1.72 करोड़+	2023	e-NAM पोर्टल
17	कृषि निर्यात	कुल कृषि एवं प्रसंस्कृत उत्पाद निर्यात	₹4.37 लाख करोड़	2022-23	APEDA
18	जैविक खेती क्षेत्र	कुल जैविक खेती क्षेत्र	26.52 लाख हेक्टेयर	2022-23	APEDA
19	किसान क्रेडिट कार्ड	जारी KCC की कुल संख्या	7.50 करोड़+	2023	आरबीआई / नाबार्ड
20	कृषि ऋण वितरण	कुल कृषि ऋण वितरण	₹16.37 लाख करोड़	2022-23	नाबार्ड
21	प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि	लाभार्थी किसानों की संख्या	11.5 करोड़+	2023	कृषि मंत्रालय
22	कृषि यांत्रिकीकरण स्तर	कृषि यांत्रिी से कवर क्षेत्र	लगभग 47%	2022-23	कृषि मंत्रालय
23	डिजिटल भुगतान (कृषि क्षेत्र)	कृषि लेन-देन में डिजिटल भुगतान का प्रतिशत	लगभग 35%	2023	RBI रिपोर्ट
24	कृषि स्टार्टअप	कुल कृषि स्टार्टअप की संख्या	2,000+	2023	स्टार्टअप इंडिया
25	ड्रोन उपयोग (कृषि)	ड्रोन से सेवा प्राप्त किसानों की संख्या	15 लाख+	2023	कृषि मंत्रालय
26	शीतगृह क्षमता	कुल शीतगृह क्षमता	37.48 मिलियन मीट्रिक टन	2022	कृषि मंत्रालय
27	खाद्यान्न उत्पादन	कुल खाद्यान्न उत्पादन	329.69 मिलियन टन	2022-23	कृषि मंत्रालय
28	सब्जी उत्पादन	कुल सब्जी उत्पादन	206.27 मिलियन टन	2022-23	कृषि मंत्रालय
29	फल उत्पादन	कुल फल उत्पादन	107.58 मिलियन टन	2022-23	कृषि मंत्रालय
30	दूध उत्पादन	कुल दूध उत्पादन	221.06 मिलियन टन	2022-23	पशुपालन विभाग

स्रोत : विभिन्न स्रोतों से संकलित आँकड़ों के आधार पर शोधकर्ता द्वारा तैयार।

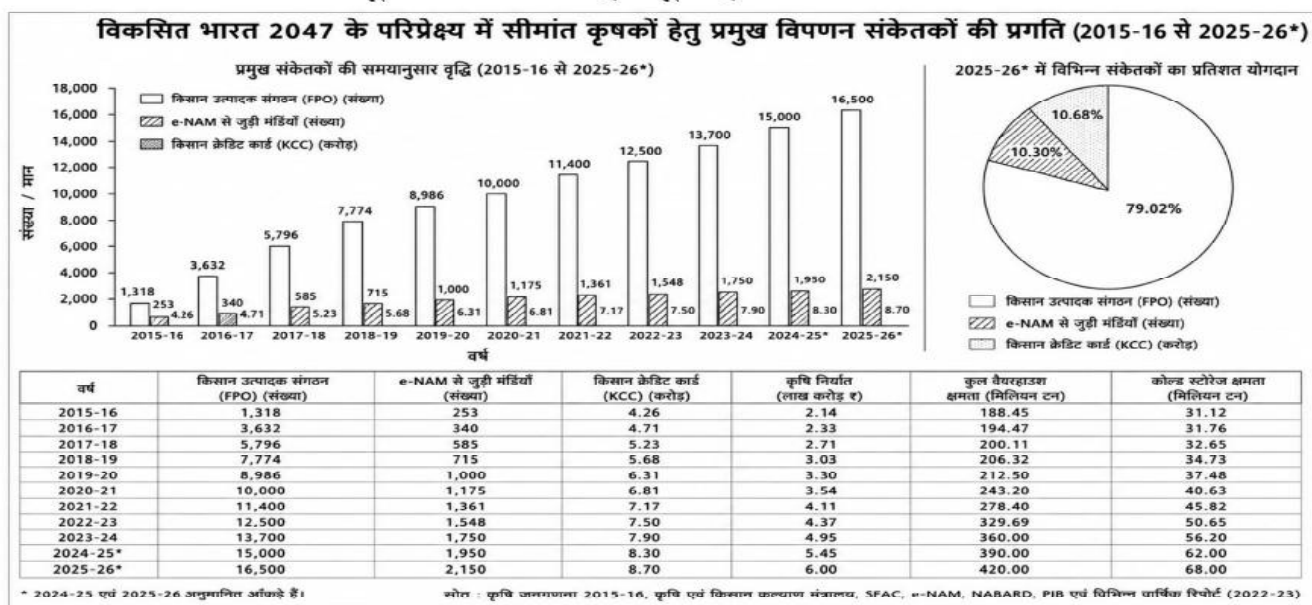
विकसित भारत 2047 के लक्ष्यों की प्राप्ति के संदर्भ में सीमांत कृषकों के लिए उपलब्ध विपणन अवसरों तथा उनके कृषि विकास में योगदान :

डिजिटल प्रौद्योगिकी एवं आधुनिक कृषि विपणन प्रणालियों के माध्यम से उपलब्ध अवसर :

वर्तमान समय में कृषि विपणन के क्षेत्र में डिजिटल तकनीकों का महत्व निरंतर बढ़ रहा है। ई-नाम (e-NAM), ऑनलाइन विपणन प्लेटफॉर्म, मोबाइल आधारित कृषि सूचना सेवाएँ, डिजिटल भुगतान प्रणाली तथा सोशल मीडिया आधारित विपणन ने सीमांत कृषकों के लिए नए अवसरों का सृजन किया है। इन माध्यमों के द्वारा कृषकों को स्थानीय बाजारों से आगे बढ़कर व्यापक बाजारों तक पहुँच प्राप्त हो रही है। विकसित भारत 2047 की परिकल्पना में डिजिटल कृषि को विशेष महत्व दिया गया है, जिसके माध्यम से विपणन प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी, सुलभ एवं लाभकारी बनाया जा सकता है।

किसान उत्पादक संगठनों (FPO), सहकारी संस्थाओं एवं सरकारी योजनाओं द्वारा सृजित विपणन अवसर :

सीमांत कृषकों की विपणन क्षमता को सुदृढ़ बनाने में किसान उत्पादक संगठन (FPO), सहकारी समितियाँ तथा विभिन्न सरकारी योजनाएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। सामूहिक विपणन, सामूहिक भंडारण, परिवहन सुविधाओं की उपलब्धता तथा बाजारों तक बेहतर पहुँच के माध्यम से कृषकों को अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा संचालित विभिन्न कृषि एवं विपणन योजनाएँ सीमांत कृषकों को वित्तीय, तकनीकी एवं संस्थागत सहायता प्रदान कर रही हैं। विकसित भारत 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में इन संस्थागत व्यवस्थाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

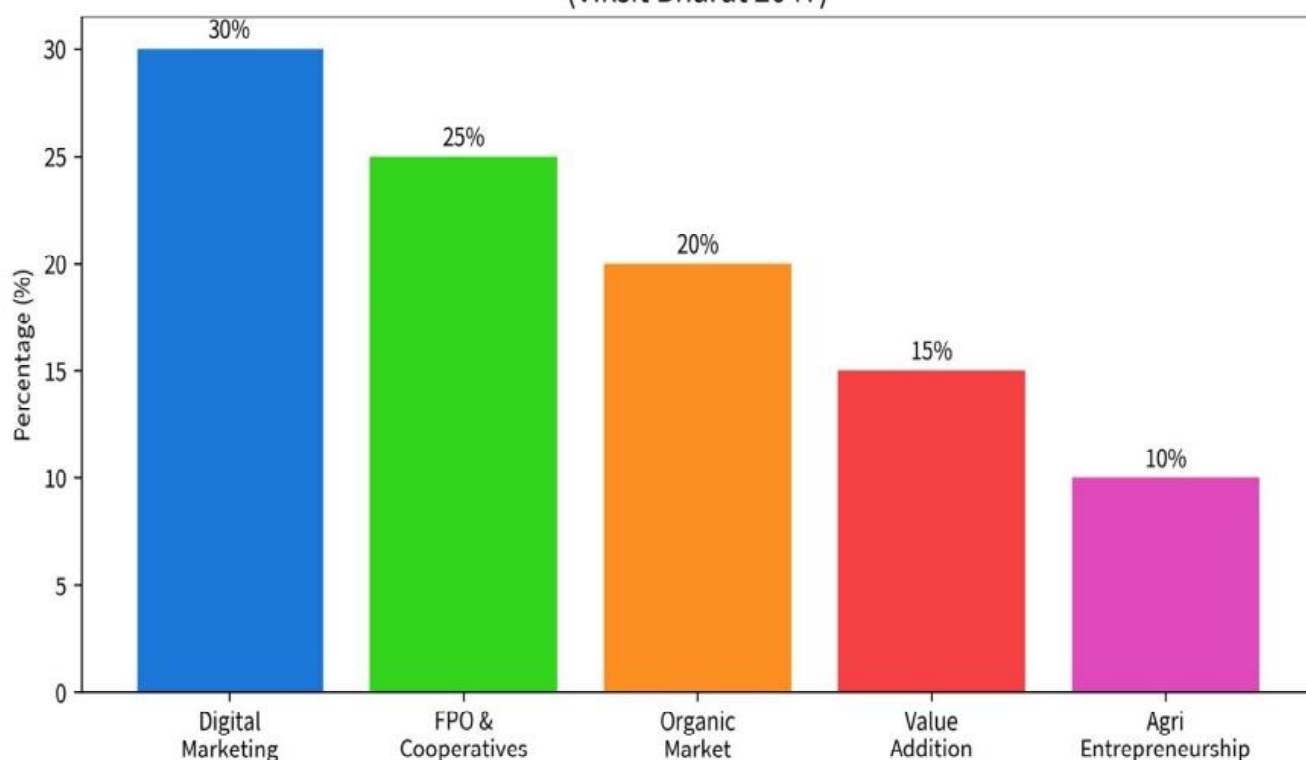


स्रोत : विभिन्न स्रोतों से संकलित आँकड़ों के आधार पर शोधकर्ता द्वारा तैयार।

मूल्य संवर्धन, जैविक कृषि एवं कृषि उद्यमिता के क्षेत्र में उभरते अवसर :

वर्तमान समय में उपभोक्ताओं के बीच जैविक उत्पादों, प्रसंस्कृत कृषि उत्पादों तथा उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थों की माँग में वृद्धि हो रही है। यह स्थिति सीमांत कृषकों के लिए नए विपणन अवसर प्रदान करती है। कृषि उत्पादों का मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण, ब्रांडिंग तथा पैकेजिंग कृषकों की आय में वृद्धि करने के प्रभावी साधन बन सकते हैं। इसके साथ ही कृषि आधारित उद्यमिता एवं निर्यात संभावनाएँ भी विकसित भारत 2047 के संदर्भ में महत्वपूर्ण अवसर के रूप में उभर रही हैं। इन अवसरों का प्रभावी उपयोग सीमांत कृषकों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने तथा समावेशी कृषि विकास को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

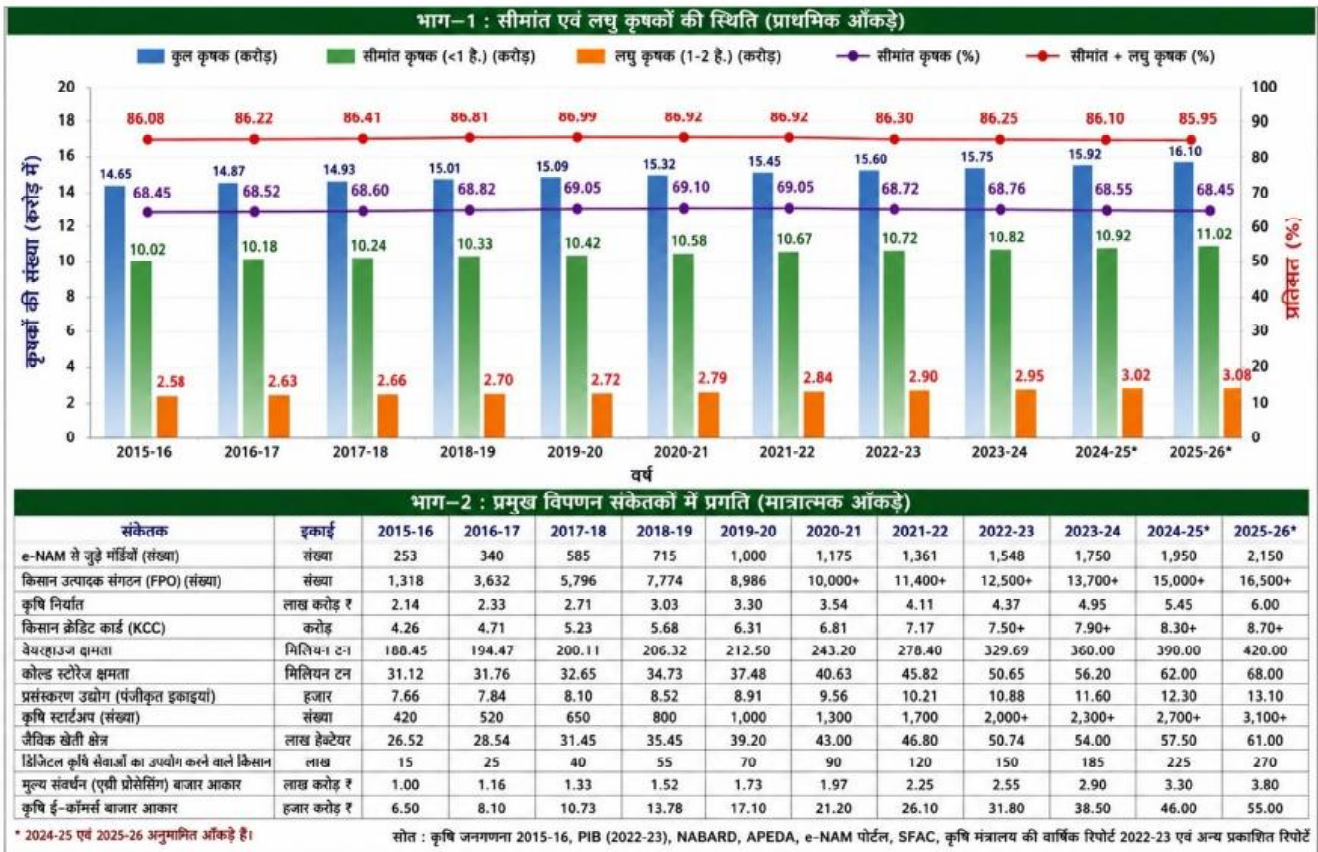
Emerging Marketing Opportunities for Marginal Farmers
(Viksit Bharat 2047)



स्रोत : विभिन्न स्रोतों से संकलित आँकड़ों के आधार पर शोधकर्ता द्वारा तैयार।

प्रस्तुत ग्राफ से स्पष्ट होता है कि सीमांत कृषकों के लिए डिजिटल विपणन प्लेटफॉर्म (30%) सबसे महत्वपूर्ण अवसर हैं। इसके पश्चात किसान उत्पादक संगठन (FPO) एवं सहकारी संस्थाओं का सहयोग (25%), जैविक कृषि बाजार (20%), मूल्य संवर्धन एवं

प्रसंस्करण (15%) तथा कृषि उद्यमिता (10%) प्रमुख अवसरों के रूप में उभर रहे हैं। इससे स्पष्ट होता है कि आधुनिक तकनीक, संस्थागत सहयोग एवं नवाचार आधारित कृषि गतिविधियाँ विकसित भारत 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में सीमांत कृषकों की आय एवं विपणन क्षमता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।



स्रोत : विभिन्न स्रोतों से संकलित आँकड़ों के आधार पर शोधकर्ता द्वारा तैयार।

निष्कर्ष :

विकसित भारत 2047 की परिकल्पना एक ऐसे भारत के निर्माण पर आधारित है जिसमें विकास का लाभ समाज के प्रत्येक वर्ग तक समान रूप से पहुँच सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति में कृषि क्षेत्र की महत्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि देश की बड़ी आबादी आज भी कृषि एवं इससे संबंधित गतिविधियों पर निर्भर है। विशेष रूप से सीमांत कृषक भारतीय कृषि व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, जो सीमित संसाधनों के बावजूद कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय योगदान देते हैं। प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि सीमांत कृषकों को कृषि विपणन के क्षेत्र में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। बाजारों तक सीमित पहुँच, परिवहन एवं

भंडारण सुविधाओं की कमी, बिचौलियों पर निर्भरता, बाजार मूल्य की अनिश्चितता तथा विपणन संबंधी जानकारी का अभाव उनकी आय वृद्धि में प्रमुख बाधक हैं। इन चुनौतियों के कारण उन्हें अपनी कृषि उपज का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति और जीवन स्तर प्रभावित होता है। दूसरी ओर, वर्तमान समय में कृषि विपणन के क्षेत्र में अनेक सकारात्मक अवसर भी उभरकर सामने आए हैं। डिजिटल तकनीकों का बढ़ता उपयोग, ई-नाम जैसे ऑनलाइन विपणन मंच, किसान उत्पादक संगठन, सहकारी संस्थाएँ, जैविक कृषि, मूल्य संवर्धन तथा कृषि उद्यमिता जैसी पहलें सीमांत कृषकों को नए बाजारों तक पहुँच प्रदान कर रही हैं। यदि इन अवसरों का प्रभावी उपयोग किया जाए तथा कृषकों को आवश्यक तकनीकी, वित्तीय एवं संस्थागत सहायता उपलब्ध कराई जाए, तो उनकी आय और विपणन क्षमता में उल्लेखनीय सुधार संभव है। इसलिए विकसित भारत 2047 के लक्ष्य को साकार करने के लिए आवश्यक है कि सीमांत कृषकों की विपणन समस्याओं के समाधान पर विशेष ध्यान दिया जाए तथा उपलब्ध अवसरों का लाभ उन्हें प्रभावी रूप से पहुँचाया जाए। इससे न केवल उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी, बल्कि समावेशी कृषि विकास, ग्रामीण समृद्धि तथा आत्मनिर्भर एवं विकसित भारत के निर्माण को भी नई दिशा प्राप्त होगी।

संदर्भ सूची :

- [1] भारत सरकार. (2023). विकसित भारत @2047: विकसित राष्ट्र के निर्माण की रूपरेखा. नई दिल्ली: भारत सरकार।
- [2] भारत सरकार, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय. (2024). कृषि सांख्यिकी एक दृष्टि 2024. नई दिल्ली: कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय।
- [3] भारत सरकार, राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय. (2024). भारत में कृषि एवं ग्रामीण विकास से संबंधित सांख्यिकीय प्रतिवेदन. नई दिल्ली: सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय।
- [4] नीति आयोग. (2023). विकसित भारत 2047: कृषि एवं ग्रामीण विकास की संभावनाएँ. नई दिल्ली: नीति आयोग।

- [5] भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद. (2023). भारतीय कृषि की वर्तमान स्थिति एवं भावी चुनौतियाँ. नई दिल्ली: भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद।
- [6] कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय. (2024). कृषि सांख्यिकी एक दृष्टि 2024. भारत सरकार. <https://agricoop.gov.in>
- [7] नीति आयोग. (2023). विकसित भारत 2047: भारत के विकास की रूपरेखा. भारत सरकार. <https://www.niti.gov.in>
- [8] भारत सरकार. (2024). ई-नाम (राष्ट्रीय कृषि बाजार) प्रगति रिपोर्ट. कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय. <https://enam.gov.in>
- [9] राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय. (2024). भारत में कृषि एवं ग्रामीण विकास से संबंधित सांख्यिकीय प्रतिवेदन. सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय. <https://mospi.gov.in>
- [10] भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद. (2023). भारतीय कृषि की वर्तमान स्थिति एवं भावी चुनौतियाँ. <https://icar.org.in>
- [11] राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक. (2024). ग्रामीण भारत में कृषि एवं वित्तीय समावेशन की स्थिति. <https://www.nabard.org>



आधुनिकता के दौर में मानवीयता का अतिक्रमण – नाटकों के विशेष संदर्भ में

खुशबू

अध्यापिका, दिल्ली पब्लिक स्कूल, बिल्हौर।

शोध सारांश :

आधुनिक साहित्य विशेषकर स्वातंत्र्योत्तर पृष्ठभूमि में जीवन का कोई-न-कोई विशिष्ट पहलू उजागर हुआ है। यह साहित्य अधिकांशतः मध्यवर्ग तक सीमित होकर वर्गीय जीविका का व्यापक दस्तावेज बनता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अधिकांश गांवों का शहरीकरण के साथ-साथ मानव भी इस खोखली संस्कृति की ओर आकृष्ट हुआ। फलतः अकेलापन, मानव का यंत्रीकरण, आपसी संबंधों में अलगाव, निरादर और अंततः आत्महत्या आदि साहित्यिक-चरित्र सामाजिक संदर्भ की ही उपज है। स्वतंत्र होकर भी असंतुष्ट रहना, जीवन-संघर्ष की निरंतरता में विश्वास रखना आदि इस दौर के साहित्य की मुख्य प्रवृत्ति रही। इस संघर्षशील जीवन के परिप्रेक्ष्य में रचनाकार की रचनात्मक संवेदना आश्चर्यजनक रूप से मुखर हो उठती है। इस परिप्रेक्ष्य में हिंदी का गद्य साहित्य पद्य से कहीं अधिक महती भूमिका निभाता है। जो आधुनिक मनुष्य की नियति के निकट से निकटतम आता गया।

बीज शब्द -

मध्य वर्ग, आर्थिक तंगी, बेरोजगारी, वैचारिक विषमता, संबंधों में बिखराव, अति-सभ्य जीवन, अनुशासन-प्रियता, यांत्रिक रूपांतरण।

मूल आलेख -

इन नाटकों के माध्यम से नाटककार चार दीवार और छत से पूर्ण होने वाले घर के भीतर की अपूर्णता व्यक्त की है। मनुष्य के मन का अधूरापन ही समस्त विसंगतियों की जड़ है। नाटककार कलात्मक रूप से समकालीन मध्य वर्गीय पारिवारिक विसंगतियों, दोगली नैतिकता, परिवार के सदस्यों के मध्य मन-मुटाव, परस्पर गलतफहमी, गरीबी से समाज में परिव्याप्त पारिवारिक अशांति से विमुख होकर अन्यत्र शांति की खोज में भटकना और समसामयिक विविध समस्याओं को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से अभिव्यक्त किया है। 'आधे-अधूरे' नाटक समकालीन कटु यथार्थ को आधार बनाए हुए है, इस नाटक को प्रेषित करने के लिए पांडव कुमार कहते हैं- "आधे-अधूरे" आधुनिक भारतीय मध्यम वर्गीय परिवार में बिखराव और संत्रास की कहानी है।¹ इस परिवार के प्रत्येक सदस्य दूसरे के प्रति परस्पर जहर रखें हुए है, जिसको राकेश जी ने इस कृति में व्यक्त किया है।

समसामयिक नाटक महानगरों के उस समस्त मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियों एवं विडंबनाओं का चित्रण करते हैं, जिनमें औपनिवेशिक शासन की समाप्ति पर अस्तित्व, अनुशासनमूलक व्यवस्था, आत्ममुग्धता और रोजगार आदि के माध्यम से अपने को समृद्ध करने की चाह रखी, लेकिन अधिकांशतः यही लालसा इनके गले का फंदा बनी। आर्थिक स्थिति मध्यवर्गीय जीवन की विडंबनाओं का मुख्य कारण है। फलसफा कि मध्यवर्ग न तो उच्च वर्ग की भाँति सुख-सुविधा संपन्न जीवन ही जी पाता है और न ही निम्न वर्ग में सम्मिलित हो पाता वरन वह आजीवन संघर्ष करता है। नाटक में मध्यवर्गीय पात्रों के आत्मकेंद्रित चरित्र, मध्यवर्गीय असंतोष एवं उनको आगे बढ़ाने की भावना का उद्घाटन भी किया गया है। मध्यवर्गीय कृत्रिम प्रवृत्ति का व्यंग्यात्मक चित्रण प्रस्तुत किया है। आर्थिक असंपन्नता की जर्जर स्थिति में भी प्रत्येक सदस्य उच्च स्वप्न देखने का कामी है।

‘आधे-अधूरे’ का ‘अशोक’ अपनी महत्वाकांक्षाओं के कारण बेरोजगारी का शिकार होते हुए भी सपनों की ऊँची उड़ान भरने से नहीं कतराता वहीं ‘सावित्री’ के पास केवल एक ही साड़ी है लेकिन वह उच्च वर्ग के सदस्यों से काफी मेलजोल रखना पसंद करती है, छोटी लड़की की आदतें दिन-प्रतिदिन बदलती जा रही है, जो अपनी उम्र के कारण ऊल-जलूल हरकते करती है। इन ही खोखली महत्वाकांक्षाओं को उजागर करते हुए ‘अशोक’ कहता है—

“जिनके आने से हम जीतने छोटे हैं, उससे ओर छोटे हो जाते हैं अपनी नजर में।”²

अशोक का यह कथन इंसानियत की सभी सीमाएं पार करता है। भारतवर्ष जो अतिथि सत्कार से अपने को बड़ा महसूस करता आया है वहीं अशोक के माध्यम से अपने छोटा महसूस करवाना, निरादर से पेश आना आदि उसके उपक्रम अमानवीयता की उत्कृष्ट स्थिति को पेश करते हैं। आधुनिकता की मुख्य समस्या है अलगाव की समस्या रही जिससे मनुष्य-मनुष्य के बीच संबंध और संप्रेषण समाप्त हो गए हैं।

“संप्रेषण का जो स्वरूप दिखायी पड़ता है वह व्यवसायिक है, यांत्रिक है। मनुष्य मनुष्य न होकर यंत्र का पुर्जा हो गया है।”³

यही संप्रेषणहीनता ‘अंजो दीदी’ नाटक में भी बड़े गहरे रूप में उजागर हुई है संप्रेषण का अर्थ केवल बोलकर शब्दों को दूसरे तक पहुँचाना नहीं बल्कि कथन का भावार्थ श्रोता तक पहुँचने में उसकी सार्थकता सिद्ध होती है, लेकिन इस नाटक की केंद्रीय पात्र की सनक या मार्बिडनेस की बंदोलत परिवार के सभी जन उसकी मनुष्यों के प्रति यांत्रिक भावना या उनको मशीन के पुर्जों की भाँति एक परिधि तक केंद्रित करना आदि से उसकी अतिअनुशासन प्रियता की सनक मानवीय समाज के लिए एक खघ्तरा बनता है। अंजो की एक मिस्ट्री है जिस भाँति मशीनी पुर्जों को खराब देखकर जो टीस होती है वैसी ही अंजो में, मनुष्यों की अनुशासन हीनता को देखकर। बच्चन सिंह कहते हैं—

“यह अनुशासनप्रियता यांत्रिक होने के कारण परिवार के प्रत्येक प्राणी को पुर्जे के रूप में ढलती जाती है।”⁴

नाटक की केंद्रीय चरित्र पढ़ी-लिखी, महत्वाकांक्षी, महिला है। वह जीवन को भरपूर अनुशासन से स्वयं जीना और दूसरों को भी उसी रास्ते का राहगीर बनना चाहती है और ऐसा करने में काफी हद तक सफल भी होती है। लेकिन इस सफलता की आड़ में वह अपने परिवार जनों का जीवन, उनकी जिज्ञासाओं का कत्ल करते चलती है, अपने बच्चे अपने पति सभी को समय का पाबन्द बनाना, अतिअनुशासित करना उसके जीवन के मुख्य

ध्येय है मानवीय का अतिक्रमण तब होता है जब वह कहती है —

“इस घर के कण-कण को मैंने सलीका, समय की पाबन्दी और सभ्य लोगों के रंग-ढंग सिखाए हैं।”⁵

X X X X X X

“मेरा घर भी घड़ी ही की तरह चले। हम सब उसके पुर्जे बन जाएँ और नियमपूर्वक अपना-अपना काम करते जाएँ।”⁶

वस्तुतः यह स्थिति केवल नाटक के दौर की ही नहीं बल्कि बदलते परिवेश में भी प्रासंगिक बने हुए है। बहरहाल ‘अंजो दीदी’ नाटक में तो यह स्थिति उसकी सनक और नाना से विरासत में मिली अतिअनुशासन प्रियता से फलीभूत हुई है। सामान्य जीवन में वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हर व्यक्ति यंत्र बनने का यात्री है। इसका कारण डगमगाती आर्थिक स्थिति भी बहुत हद तक सही है, क्योंकि आज का समय रोजगार के अकाल का समय है, यदि आभिजात्य वर्ग को एक बार नकार दे तो सामान्य परिवारों में मुश्किल से कहीं एक ही व्यक्ति के पास आय का महीन साधन है जो उसकी परिवार की रोजमर्रा की छोटी-छोटी जरूरतों को पूरा करता है और इस संघर्ष की घड़ी में वह व्यक्ति अकेला एक मशीन की भाँति कार्य करता है। ‘आधे-अधूरे’ में ‘सावित्री’ की नौकरी से पूरा घर चलता है। पति व्यवसाय में असफल होकर निकम्मा हो गया, बेटा पढ़ाई में असफल होकर कामचोर, बड़ी बेटी लव मैरिज के बाद भी सुखी नहीं और छोटी बेटी की तो जरूरतें ही पूरी नहीं हो पाती। ऐसे में ‘सावित्री’ का खीझना, असहज महसूस करना स्वाभाविक भी लगता है, मानो उसकी अपनी जिंदगी खो सी गयी है। जिस प्रकार मशीन से केवल काम पूरा करवाया जाता है वही स्थिति इस परिवार में सावित्री की है, ‘बिन्नी’ से वार्तालाप करते हुए वह कहती है—

“यहाँ पर सब लोग समझते क्या है मुझे? एक मशीन, जो कि सबके लिए आटा पीस-पीसकर रात को दिन और दिन को रात करती रहती है।”⁷

अपनी महत्वाकांक्षाओं की बदौलत मानव मानव में जिस पूर्णता की कामना करता है। दरअसल जीवन में वैसा होता ही नहीं। वह एक सम्पूर्ण महामानव की खोज है। यदि इस प्रवृत्ति का खोजी व्यक्ति जब इस अनैसर्गिक तत्व को खोजने में कहीं असफल है तो उसके अंदर एक बौखलाहट पैदा होती है। मोहन राकेश हो या उपेन्द्रनाथ अश्व दोनों लेखकों का मूल इशारा भी इसी ओर है कि दुनिया में पूर्ण कोई नहीं है। पूर्णता की तलाश बेमानी है। मनुष्य की महत्वाकांक्षा असीम है जो दुनिया के यथार्थ से हरदम मेल नहीं खाती, यह स्थिति तब और भयावह हो जाती है जब आर्थिक सक्षमता पर्याप्त न हो। आदमी जो भी है, अपने खूबियों और खामियों के सहभाव में है। दोनों नाटक और इनकी केंद्रीय पात्र इनका अतिक्रमण करती है ये दोनों की मानव को या तो महामानव के रूप में देखना चाहती है या मशीन के रूप में, एक मनुष्य को ईश्वर की भाँति सर्वगुण संपन्न पुरुष के रूप देखने की अभिलाषी है तो दूसरी उसे मानव के रूप में देखने की अपेक्षा एक यंत्र की भाँति उसकी सीमाएँ तय कर देना चाहती है। वस्तुतः स्थिति कोई भी हो दोनों ही चाहे महामानवीकरण की हो या यंत्रीकरण की दोनों ही सम्पूर्ण मानवी समाज और जीवन के लिए भयावह है। इस परिप्रेक्ष्य में कमलेश्वर का कहना है— “यह जुल्म वस्तु-जगत से लेकर मानसिक धरातल तक छाया हुआ है। इतने भीषण दबाव के नीचे जिन विकृतियों का उग आना साधारण जीवन में असंभव था, वें ही विकार पनपने लगते हैं।”⁸

जब मानव अति आत्ममुग्धता का शिकार होता है तब उसे सर्वस्व वही नजर आता है वह अपने को सब

कुछ का निमित्त मानने की बड़ी भारी भूल कर बैठता है और इस ग्रंथि का शिकार व्यक्ति अपने को सभ्य बनाने के रास्ते में मशीन बना बैठता है। लेकिन व्यावहारिक जीवन सिद्धांतों की पूर्ण परिपाटी पर नहीं चलता जीवन को सक्रिय बनाने के उसके अलग पैमाने होते हैं, व्यवहार में मनुष्य परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य से प्रतिबद्ध होकर रास्तों का चुनाव करता है और इसी में उसके अस्तित्व की सार्थकता भी है। लेकिन जब मनुष्य इन महत्वाकांक्षाओं का शिकार हो और उनपर नकार की कठोर मार पड़ने पर उसके लिए यह असहनीय हो जाता है फलस्वरूप वह या तो आत्महत्या कर बैठा है या अपने विरोधी या असंगति मार्ग का अनुयायी बना बैठता है। और ये दोनों की स्वातंत्र्योत्तर आधुनिक भारत की समाज और साहित्य की मुख्य प्रवृत्ति रही। 'आधे-अधूरे' की 'सावित्री' सदैव सम्पूर्ण बनने की चाह में या सब कुछ को एक साथ लेकर जीने की महत्वाकांक्षा से आहत होकर उसी अतिभौतिक तत्व की पाने में तरह-तरह के रास्ते पर चलती है और 'अंजो दीदी' की 'अंजलि' अपने बनाए गए सांचों के टूटने से इतनी आहत होती है कि प्रत्युत्तर में आत्महत्या को अनजान देती है। आत्महत्या इस दौर के साहित्य की केंद्रीय प्रवृत्ति है इस समय समाज अनेक प्रताड़नाओं का शिकार हो रहा था। समकालीन साहित्य समाज में व्याप्त दोनों ही समस्याओं को मानवीय विरोधी समस्याओं के रूप में मुद्रित करवाते हैं। आधुनिक साहित्य समाज में परिव्याप्त वर्ग संघर्ष साहित्य पर अधिक मात्र में लेखनी चलता है लेकिन कुछ मुद्दे ऐसे भी रहे जो मनुष्य को केंद्रित कर के लिखे गए। इन नाटकों में दोनों मनुष्य की वैयक्तिक समस्याओं को दिखाया गया है। बच्चन सिंह का कहना है—

"इस नाटक में जो समस्या उठाई गई है वह वर्ग विशेष की उतनी नहीं है जितनी स्वयं जीवन की। इसलिए इस नाटक की समस्या अपेक्षाकृत व्यापक और गहरी बन पड़ी है।"⁹

सम्बन्धों का निर्वहन स्वीकार बोध के साथ ही सम्भव है, अन्यथा जीवन घसीटते-घसीटते गुजरता है। अन्य परिस्थितियां नकारात्मक हो तो अवश्य ही इसकी तीव्रता को बढ़ा देती हैं। ये नाटक स्त्री-पुरुष के मध्य लगाव और तनाव का दस्तावेज और पारिवारिक विघटन मानवीय संतोष के अधूरेपन का रेखांकन करते हैं। जो लोग जिंदगी से बहुत कुछ चाहते हैं, उनकी तृप्ति अधूरी ही रहती है। नाटक टूटते-बिखरते, गिरते-संभलते, बिगड़ते-सुधरते संबंधों को सृजनात्मक दृष्टि से उजागर करते हैं। इन सभी संबंधों को कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है यथा स्त्री-पुरुष का संबंध, भाई-बहन का संबंध, माता-पिता से संतानों का संबंध, प्रेमी-प्रेमिका संबंध, दफ्तरी सदस्यों से पारस्परिक संबंध, मित्र-मित्र का संबंध, पिता-पुत्र के विचारों में विसंगति आदि अनेक संबंध इन नाटकों का कालजयी होने उल्लेख करते हैं। इसी प्रकार अन्य संबंधों का भी त्रासदायक उल्लेख इस नाटक में किया है। विशेषकर 'आधे-अधूरे' डॉ. लक्ष्मीराय का कहना है—

"इसमें वर्तमान जीवन के यथार्थ परक और विश्वसनीय पात्रों, परिस्थितियों और मनःस्थिति के साधन बिंदुओं को रेखांकित किया गया है।"¹⁰

निष्कर्ष :

संक्षेप में कहें तो दोनों ही नाटक आजाद भारत की समकालीन जिन्दगी को चित्रित करने में सार्थक सिद्ध हुए। इनका गठन सुदृढ़ एवं रंगोपयुक्त है। ये नाटक जीवन के यथार्थ को अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। महानगरों में रहने वाले, आर्थिक अभाव, सभ्यता के पर्दे में यांत्रिकता को बढ़ावा देना और अन्य मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन की त्रासदी को दोनों नाटक सजीव चित्रण करते हैं। दोनों की नाटक मानवीयता के दौर बढ़ती

अमानवीकरण को यथार्थ रूप में चित्रित करते हैं। इसका उद्देश्य इस खोखली सभ्यता को बढ़ावा देना नहीं बल्कि इनको समाज से जड़मूल खत्म करना है। दोनों ही नाटक के प्रतिरोधमूलक पात्र 'जुनेजा' और 'श्रीपत' इनके भ्रम को जड़मूल तोड़ने का सफल कार्य करते हैं। अतः कहा जा सकता है कि आत्ममुग्धता से ग्रसित व्यक्ति असामान्यों की श्रेणी का व्यक्ति है।

संदर्भ :

1. डॉ० पांडव कुमार, मोहन राकेश के नाटकों में मानवीय संबंधों का विश्लेषण, गीता प्रकाशन, हैदराबाद, 2015, पृष्ठ 78
2. मोहन राकेश, आधे-अधूरे, राधाकृष्ण प्रकाशन, जगतपुरी दिल्ली, 2020, पृष्ठ 57
3. बच्चन सिंह, हिंदी नाटक, राधाकृष्ण प्रकाशन, जगतपुरी दिल्ली, 2022, पृष्ठ 176
4. वही, पृष्ठ 170
5. उपेन्द्रनाथ अशक, अंजो दीदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2023, पृष्ठ 28
6. वही, पृष्ठ 31
7. मोहन राकेश, आधे-अधूरे, राधाकृष्ण प्रकाशन, जगतपुरी दिल्ली, 2020, पृष्ठ 48
8. उपेन्द्रनाथ अशक, अंजो दीदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2023, पृष्ठ 10
9. बच्चन सिंह, हिंदी नाटक, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2022, पृष्ठ— 170
10. डॉ० लक्ष्मीराय, आधुनिक हिंदी नाटक चरित्र सृष्टि के आयाम, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 1979, पृष्ठ 433

मों० — 8178917850

मेल— khushboorajputk138@gmail.com



पारिवारिक उपेक्षा का यथार्थ 'गिलिगडु'

राहुल वर्मा

शोधार्थी, हिंदी विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद।

शोध सार :

प्रस्तुत शोध आलेख 'पारिवारिक उपेक्षा का यथार्थ : गिलिगडु' में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि चित्रा मुद्गल का उपन्यास शगिलिगडु आधुनिक समाज में व्याप्त पारिवारिक विघटन, मानसिक द्वंद्व और वृद्धों की दयनीय स्थिति को उजागर करने वाला एक अत्यंत मार्मिक दस्तावेज है। इस उपन्यास के पात्र केवल कथावस्तु को आगे बढ़ाने का माध्यम मात्र नहीं हैं, बल्कि वे उस समाज का आईना हैं जहाँ उनके त्रासद जीवन का मूल कारण पारिवारिक मूल्यों का विघटन है। आधुनिकता, भौतिकतावाद, बदलते नैतिक मूल्यों और बढ़ती व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं के कारण संयुक्त परिवार की कड़ियाँ कमजोर और असुरक्षित हुई हैं। इसके परिणामस्वरूप वृद्धजनों में असुरक्षा, संत्रास, अकेलापन और मृत्युबोध जैसी भावनाएँ गहराने लगी हैं। चित्रा मुद्गल ने 'गिलिगडु' उपन्यास के माध्यम से आधुनिक भौतिकतावादी भारतीय समाज में पात्र कर्नल स्वामी और बाबू जसवंत सिंह के जरिए बुजुर्गों की उपेक्षा, एकाकीपन, अलगाव और पारिवारिक संत्रास से पीड़ित वृद्धजनों की व्यथा को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ व्यक्त किया है।

बीज शब्द : आधुनिकता, भौतिकतावाद, अकेलापन, संत्रास, अलगाव, वृद्ध, मूल्य-परिवर्तन।

मूल आलेख :

वृद्धावस्था जीवन का एक ऐसा पड़ाव है, जो किसी भी धर्म या जाति, स्त्री या पुरुष, अमीर या गरीब और ग्रामीण या शहरी व्यक्ति पर एक निश्चित समयावधि के बाद अवश्य आता है। यह एक स्वाभाविक और नैसर्गिक प्रक्रिया है। वृद्धावस्था में व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक रूप से दुर्बल तो होता ही है, साथ ही परिवार में सामंजस्य का अभाव, एकाकीपन, अलगाव, कुंठा, संत्रास, समय का सृजनात्मक उपयोग न हो पाना और अनेक प्रकार की शारीरिक समस्याएँ (जैसे-हाथ-पाँव में सूजन, जोड़ों में दर्द, कमर का झुक जाना, आँखों से कम दिखाई देना आदि) उसे निरंतर घेरे रहती हैं।

इसके अतिरिक्त, यदि वृद्धों के मनोभावों की बात करें, तो उम्र के इस पड़ाव पर पहुँचकर सब कुछ खो जाने, परिवार द्वारा ठगे जाने की अनुभूति, वंचना, परिजनों द्वारा सामान्य देखरेख का अभाव और अपनों का उपेक्षापूर्ण व्यवहार उन्हें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रताड़ित करता है। यह स्थिति वृद्धों में स्वयं को एक अनुपयोगी वस्तु समझने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है। विशेषकर वे वृद्धजन जो आर्थिक रूप से सक्षम नहीं हैं और जिनके पास संपत्ति के नाम पर कुछ नहीं है, वे परिवार की यातनाओं से पीड़ित होकर तथा गंभीर बीमारियों के चलते

सड़क, फुटपाथ, रेलवे स्टेशन, मंदिर—मस्जिद और बस स्टैंड आदि पर बेबस व लाचार स्थिति में बेसहारा दिखाई देते हैं। उनकी यह दयनीय स्थिति किसी भी संवेदनशील मन को उनकी वास्तविक मनःस्थिति को गहराई से समझने के लिए विवश कर देती है।

चित्रा मुद्गल का यह उपन्यास 13 दिनों की कथा के माध्यम से दो मुख्य वृद्ध पात्रों 'जसवंत सिंह और कर्नल नारायण स्वामी के जीवन का जीवंत चित्रण करता है। मूलतः, इस उपन्यास में संयुक्त परिवारों के बिखराव, वृद्धजनों की उपेक्षा, मानवीय मूल्यों में आते निरंतर क्षरण तथा वृद्धों को निरर्थक समझने की प्रवृत्ति को प्रमुखता से उभारा गया है। इसके साथ ही, समाज में बढ़ते अमानवीय और हिंसात्मक रवैये पर भी गहरा प्रकाश डाला गया है।

भारतीय समाज में बड़े-बुजुर्गों की सेवा करना व्यक्ति का उच्च एवं उदात्त जीवन—मूल्य माना जाता है। कुछ वर्षों पूर्व तक भारतीय परिवार का प्रत्येक सदस्य अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को भली-भाँति समझता था तथा उनका निष्ठापूर्वक निर्वाह भी करता था। इसके फलस्वरूप प्रत्येक बुजुर्ग को यह विश्वास था कि उनका बुढ़ापा सुरक्षित, सेवायुक्त एवं सम्मानपूर्वक व्यतीत होगा। किंतु पिछले कुछ वर्षों में युवा वर्ग पर पाश्चात्य सभ्यता का ऐसा प्रभाव पड़ा है कि वह अपने प्राचीन मूल्यों, मान्यताओं और आचार—व्यवहार को भूलता जा रहा है। पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण में उसने अपने रहन—सहन और खान—पान को तो बदला ही है, साथ ही अपने जीवन—मूल्यों, संस्कृति एवं परंपराओं को भी परिवर्तित कर दिया है। आज के समाज में आमतौर पर यही स्थिति देखने को मिलती है। उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह के बेटे की बहू सुनयना उनसे कहती है कि— "आखिर बाबूजी इस संभ्रांत सोसाइटी में उनकी इज्जत खाक में मिलाने पर क्यों उतारू हैं? अभी भी जवानी का जोश बाकी हो, दिक्कत कैसी? चले जाया करें रेड लाइट एरिया।"¹

जिन माता—पिता ने बड़ी शिद्दत और मेहनत से अपना घर बनाया तथा बच्चों की जरूरतों को पूरा करते हुए उन्हें पढ़ा—लिखाकर इस काबिल बनाया कि वे बुढ़ापे में उनका सहारा बन सकें, आज की परिस्थितियाँ उसके बिल्कुल विपरीत हैं। आज उनके अपने ही बच्चे उन्हें बात—बात पर यह उलाहना देते हैं कि 'आपने अपने जीवन में किया ही क्या है? आपके समय न तो किसी बात की प्रतिस्पर्धा थी और न ही भविष्य की चिंता।' बच्चे अप्रत्यक्ष रूप से अपने ही वृद्ध माता—पिता का मजाक उड़ाते हैं और बातों—बातों में यह एहसास दिलाते हैं कि वे उन पर एहसान कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में ये वृद्धजन स्वयं को असहाय और बच्चों के एहसान तले दबा हुआ महसूस करते हैं। इस बात से उन्हें गहरा आघात पहुँचता है, जिसके कारण उन्हें अपने ही बच्चे पराए लगने लगते हैं।

घर—परिवार और समाज में वृद्धजनों की इतनी उपेक्षा की जाती है कि वे अपनी तुलना पशु—पक्षियों से करने लगते हैं। इन वृद्धजनों को ऐसा प्रतीत होने लगता है कि अब घर में उनकी कोई आवश्यकता नहीं है, उनसे बेहतर स्थिति तो घर के कुत्ते की है, जिसे प्यार—दुलार से रखा जाता है और जिसके खाने—पीने का समयानुसार ध्यान रखा जाता है। उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह अपनी स्थिति का आकलन करते हुए सोचते हैं कि— "इस घर में एक नहीं दो कुत्ते हैं" एक टॉमी, दूसरा अवकाश प्राप्त सिविल इंजीनियर जसवंत सिंह। टॉमी की स्थिति निस्संदेह उनकी बनिस्बत मजबूत है। उसकी इच्छा—अनिच्छा की परवाह में पूरा परिवार बिछा रहता है, पूरा घर। उनके लिए किसी का बिछे रहना जरूरी नहीं लगता।"²

यह हमारे समाज की कितनी बड़ी विडंबना और त्रासदी है कि जो व्यक्ति जीवन भर अपना खून—पसीना बहाकर परिवार का भरण—पोषण करता है, वही वृद्धावस्था की दहलीज पर पहुँचकर उपेक्षा का शिकार हो जाता है। ढलती उम्र के साथ जब उसका शरीर अक्षम होने लगता है और जीविकोपार्जन के स्रोत समाप्त हो जाते हैं, तब उसके सामने एक अत्यंत कारुणिक स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जीवन के जिस पड़ाव पर उसे सर्वाधिक स्नेह और संबल की आवश्यकता होती है, उसी समय जो सदस्य कभी उस पर आश्रित हुआ करते थे, वे ही उसे बोझ समझने लगते हैं। स्वयं पर आश्रित होते ही वे न केवल अपनी जिम्मेदारियों से मुँह मोड़ लेते हैं, बल्कि उस वयोवृद्ध को कटु वचन सुनाने और अपमानित करने से भी नहीं चूकते। उपन्यास के पात्र जसवंत सिंह जब अपने बेटे के पास दिल्ली आते हैं, तब उन्हें अपनी बहू से न जाने कितने प्रकार के उलाहने और तंज सुनने को मिलते हैं। इसके कारण उनका मन बार—बार दिल्ली से वापस अपने घर लौट जाने को उचटता है— “दिल्ली बाबू जसवंत सिंह ने कभी नहीं चाही, न आने के बाद कोई दिन गुजरा कि वे चिहुंक—चिहुंक कर दिल्ली से उचाट न हुए हों।”³

वृद्धावस्था में मनुष्य अकेला, निर्बल और असहाय हो जाता है। उसकी कार्यक्षमता घटने लगती है, जिसके कारण उसे अपने दैनिक क्रियाकलापों के लिए भी परिवार के सदस्यों पर निर्भर रहना पड़ता है। वृद्धजनों के लिए यह निर्भरता ही उनकी सबसे बड़ी समस्या बन जाती है। बुढ़ापे में प्रायः प्रत्येक वृद्ध को कोई न कोई शारीरिक व्याधि अवश्य घेर लेती है। ऐसा संभव ही नहीं कि कोई व्यक्ति जीवन के अंतिम पड़ाव में पूर्णतः स्वस्थ रहे। उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह बवासीर की बीमारी से ग्रस्त हैं, जिससे उनके वस्त्रों पर रक्त के धब्बे लग जाते हैं। इस पर उनके बेटे की बहू सुनयना उन्हें उलाहना देती है और स्वयं कपड़े धोने की हिदायत देते हुए कहती है— “उनके पायजामे और चड्डी में लगे खून के धब्बे वाशिंग मशीन में नहीं छूटते। उनके बाथरूम में रिन की बट्टी रख दी गई है। कपड़े धोने डालने से पहले स्वयं धब्बों को तनिक रगड़ दिया करें।”⁴

वृद्धजन बुढ़ापे में अपने ही घर में अजनबी महसूस करने लगते हैं। इसका मुख्य कारण बच्चों द्वारा उनकी उपेक्षा करना तथा उनके सुख—दुख से कोई सरोकार न रखना है। उपन्यास में जसवंत सिंह, कर्नल स्वामी को अपने घर चाय—कॉफी पर आमंत्रित करना चाहते हैं, लेकिन बहू सुनयना के भय और उपेक्षा के कारण उनसे कह नहीं पाते कि कहीं सुनयना कर्नल विष्णु नारायण स्वामी के सामने उनकी बेइज्जती न कर दे। जैसा कि उपन्यास में चित्रा मुद्गल लिखती हैं— “गेट के निकट पहुँचकर बाबू जसवंत सिंह की इच्छा हुई कि अजनबी को घर चलकर एक कप कॉफी पीने का न्योता दें, लेकिन न्योता देने का साहस नहीं जुटा सके।”⁵

प्रत्येक माता—पिता का यह स्वप्न होता है कि उनके बच्चे बुढ़ापे में उनके उन सपनों को पूरा करें, जिन्हें वे बच्चों और घर—परिवार की जरूरतों को पूरा करने के कारण स्वयं पूर्ण नहीं कर सके थे। इसकी स्पष्ट झलक ‘गिलिगडु’ उपन्यास में देखने को मिलती है। उपन्यास में जसवंत सिंह अपने बेटे नरेंद्र द्वारा किए गए वादों को सँजोए हुए थे कि वह बाबूजी और अम्मा को केदारनाथ की यात्रा करवाएगा और उनके बिना वह कभी केदारनाथ और बद्रीनाथ की यात्रा नहीं करेगा। किंतु वह अपने माता—पिता को दिए गए वचनों को तोड़कर स्वयं अपने मित्रों के साथ केदारनाथ की यात्रा पर चला जाता है। जब यह बात बाबू जसवंत सिंह को पता चलती है, तो वे मन ही मन बहुत आहत होते हैं, जैसा कि उपन्यास में वर्णित है— “नरेंद्र ने उन्हें सूचित किया। सितंबर की बात है। मित्रों के साथ उसका अचानक केदारनाथ जाने का कार्यक्रम बन गया है। अपनी गाड़ी से सभी मित्र सपरिवार

जाएँगे। बच्चों की छुट्टी करानी होगी।”⁶

वृद्धावस्था में जीवन—साथी की मृत्यु बुढ़ापे को अधिक कष्टकर और दुखदायी बना देती है, क्योंकि उन्होंने अपने जीवन का एक बहुत बड़ा कालखंड साथ रहकर गुजारा होता है, जिसमें उन्होंने जीवन के सुख—दुख हाथ से हाथ मिलाकर बाँटे होते हैं। जब इनमें से किसी एक साथी की अचानक मृत्यु हो जाती है, उस परिस्थिति में जीवित बचा वृद्ध स्वयं को अत्यंत अकेला महसूस करने लगता है और अपने अतीत को याद करके पल—पल मानसिक रूप से व्यथित रहता है— “नरेंद्र ने बहुत पहले कहा था कि बाबूजी और अम्मा की बद्रीनाथ और केदारनाथ जाने की इच्छा को वह अवश्य पूरा करेगा। उनके बिना वह कभी केदारनाथ के दर्शनों को नहीं जाएगा। व्यस्तता की मारामारी में केवल उसे हफ्ते भर की फुरसत की तलाश है। नरेंद्र की फुरसत की तलाश पूरी नहीं हो पाई और नरेंद्र की अम्मा अचानक धोखा दे गई।”⁷

मध्यवर्गीय परिवारों की यह विडंबना है कि वहाँ के वृद्धजन अपने ऊपर होने वाले अत्याचार और शोषण को परिवार के बाहर किसी भी व्यक्ति से साझा नहीं करना चाहते। उन्हें लगता है कि यदि वे परिवार द्वारा किए जा रहे दुर्यवहार को किसी अन्य के सामने प्रकट करेंगे, तो घर—परिवार की प्रतिष्ठा धूल में मिल जाएगी। उपन्यास में चित्रा मुद्गल ने ऐसी घटनाओं को अत्यंत स्पष्टता के साथ उजागर किया है। उदाहरण के लिए, कर्नल विष्णु नारायण स्वामी का बेटा अपने पिता से पलैट अपने नाम करवाने के लिए कहता है। जब वे पलैट उसके नाम करने से मना कर देते हैं, तो वह उनसे हिंसा करता है, जिससे वे बुरी तरह लहलुहान हो जाते हैं। इसके बावजूद कर्नल स्वामी अपने साथ हुए इस अमानवीय व्यवहार की शिकायत किसी से नहीं करना चाहते— “कर्नल स्वामी पहले ही राजनगर (गाजियाबाद) वाले कीमती प्लॉट को बेचकर उन्हें पलैट खरीदने में मदद कर चुके थे। श्रीनारायण का प्रस्ताव उन्होंने ठुकरा दिया। क्रुद्ध श्रीनारायण ने पिता पर हाथ उठा दिया। कर्नल स्वामी के रोने—चीखने का आर्त स्वर सुनकर मिस्टर एंड मिसेज श्रीवास्तव का दिल दहल उठा। दरवाजा भड़भड़ाया। श्रीनारायण से उन्होंने दरवाजा खोल देने की चिरौरी की। श्रीनारायण ने भीतर से ही उनको आपसी मामले में दखल न देने की धमकी दी। घबराए श्रीवास्तव ने सौ नंबर डायल कर पुलिस सहायता बुला ली। पुलिस ने दरवाजा खुलवाया। लहलुहान कर्नल स्वामी को ‘कैलाश अस्पताल’ ले जाया गया। बोलने के काबिल होते ही उन्होंने बेटे के विरुद्ध एफ.आई.आर. दर्ज कराने से मना कर दिया।”⁸

जीवन की अंतिम बेला में, जब वृद्धजनों को अपने परिवार की सबसे अधिक आवश्यकता होती है, उसी समय उनके अपने बच्चे उन्हें स्वयं से अलग कर देते हैं या वृद्धाश्रम भेजने की तैयारी करने लगते हैं। समकालीन दौर तीव्र प्रतिस्पर्धा और आगे बढ़ने की होड़ का दौर है। प्रत्येक व्यक्ति इस होड़ में गाँव से शहर, शहर से महानगर और महानगर से विदेश जाना चाहता है। भूमंडलीकरण, औद्योगिकीकरण व आधुनिकता के इन पैमानों ने बच्चों को अपने ही माता—पिता से दूर रहने के लिए विवश कर दिया है, जिसके कारण वे अपने माता—पिता को या तो घर में अकेला छोड़ देते हैं या वृद्धाश्रम में। इस संदर्भ में चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यास ‘गिलिगडु’ में स्पष्ट रूप से लिखा है— “हरिद्वार के किसी आश्रम के विषय में भी भैया के मित्र राजीव रायजादा ने उनसे चर्चा की है। आश्रम ठीक गंगातट पर है। आश्रम से बाहर न भी निकला जाए, तो भी आराम से कमरे की खिड़की से सँझा की मनोरम आरती देखी जा सकती है। भैया को आगे की चिंता हो रही है। एकाध महीने के भीतर अमेरिका वाली कंपनी का नियुक्ति—पत्र भी मिल सकता है उन्हें। अम्मा जिंदा थीं तो बात और थी। अब उन्हें

अकेला कानपुर छोड़ना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं...⁸

उपरोक्त विवेचन के फलस्वरूप अंततः कहा जा सकता है कि प्रस्तुत आलेख इस कड़वे सत्य को उजागर करता है कि वृद्धावस्था जीवन का एक अनिवार्य एवं स्वाभाविक पड़ाव है, जिसे प्रत्येक मनुष्य को पार करना ही पड़ता है। आधुनिकता, भूमंडलीकरण और पाश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण ने हमारे पारंपरिक संयुक्त परिवारों के ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर दिया है, जिससे भारतीय समाज के उच्च एवं उदात्त जीवन-मूल्य निरंतर क्षरित हो रहे हैं। चित्रा मुद्गल का उपन्यास गिलिगडु जसवंत सिंह और कर्नल नारायण स्वामी जैसे जीवंत पात्रों के माध्यम से इस पारिवारिक बिखराव और वृद्धजनों की मर्मतक उपेक्षा को अत्यंत संवेदनशीलता से रेखांकित करता है। जिस संतान के संवर्धन और उज्ज्वल भविष्य के लिए माता-पिता अपना सर्वस्व अर्पण कर देते हैं, वही संतान बुढ़ापे में उन्हें उपेक्षित, बोझ और असहाय छोड़ देती है। शारीरिक व्याधियों, एकाकीपन और आर्थिक निर्भरता के बीच वृद्धजन अपने ही घर में अजनबी की भांति अपमानजनक जीवन जीने को विवश हैं। यहाँ तक कि वे स्वयं की तुलना घर के पालतू पशुओं से करने लगते हैं, जो सामाजिक संवेदनाओं के पतन की पराकाष्ठा है। मध्यवर्गीय लोकलाज के कारण वृद्धजन अपने ऊपर होने वाले मानसिक एवं शारीरिक अत्याचारों को मौन रहकर सहते हैं, किंतु अपने बच्चों के विरुद्ध आवाज नहीं उठाते। जब जीवन के अंतिम पड़ाव पर उन्हें सर्वाधिक स्नेह, संबल और सम्मान की आवश्यकता होती है, तब उन्हें वृद्धाश्रमों या बेसहारा स्थितियों में धकेल दिया जाता है। अतः यदि समाज ने समय रहते अपने प्राचीन नैतिक मूल्यों, मानवीय संवेदनाओं और वृद्धों के प्रति अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक पुनर्मूल्यांकन नहीं किया, तो हमारी सांस्कृतिक धरोहर और पारिवारिक व्यवस्था पूर्णतः विखंडित हो जाएगी।

संदर्भ सूची -

1. चित्रा मुद्गल, गिलिगडु (नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, 2002), 59।
2. मुद्गल, गिलिगडु, 96।
3. मुद्गल, गिलिगडु, 36।
4. मुद्गल, गिलिगडु, 71।
5. मुद्गल, गिलिगडु, 14।
6. मुद्गल, गिलिगडु, 68।
7. वही, 68। (या मुद्गल, गिलिगडु, 68)
8. मुद्गल, गिलिगडु, 137।
9. मुद्गल, गिलिगडु, 97।

संपर्क सूत्र 7557314948

ईमेल : rv567894321@gmail.com

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115

Impact Factor : 8.642

बोहल शोध मंजूषा



Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFEREED RESEARCH JOURNAL

Website :

www.bohalshodhmanjusha.com

Email : grsbohal@gmail.com

Editor :

Dr. Naresh Sihag, Adv.
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान

द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित



ISSN : 2321-8037

Impact Factor : 7.834

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

Website : www.ginajournal.com

Email : grngobwn@gmail.com

Office : 8708822674

Editor :

Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantiya University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ

द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गालियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639

Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

Website : <https://ginajournal.com/shodh-samalochan/>

Executive Editor : **Dr. Varsha Rani** M. 9671904323

Managing Editor : **Dr. Mukesh Verma** M. 9627912535

Editor :

Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

गिना प्रकाशन द्वारा

जयपुर, भिवानी एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2321-0540

Impact Factor : 5.621

KANCHANLATA

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES HALF YEARLY RESEARCH JOURNAL

Managing Editor :

Dr. Mukesh Verma

M. 9627912535

Editor :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना देवी शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज भिवानी से
छपवाकर कार्यालय #202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037





गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

रामदरश मिश्र का यात्रा-साहित्य : संवेदना, संस्कृति
और मानवीय दृष्टि का अनुशीलन

Authored by

डॉ. रेम्मा के आर

सह आचार्य, हिंदी विभाग,
श्री शंकरा विद्यापीठम कॉलेज, पेरुम्बूर, केरल।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 08-12

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रासंगिकता : वर्तमान
परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन

Authored by

डॉ. निरंजन कुंभकार

ग्राम—जोजोहातु, पोस्ट—दलभंगा, प्रखण्ड—कुचाई,
जिला—सरायेकेला—खरसावाँ, झारखण्ड—833216

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 13-16

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

नालंदा और जावा के बौद्ध शिक्षा केन्द्रों का तुलनात्मक
अध्ययन (7वीं-12वीं शताब्दी)

Authored by

प्रभात यादव

शोध छात्र, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्त्व विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 17-23

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

एकविसाव्या शतकातील स्त्रीवादी कादंबरीतील
सामाजिक संवेदन : एक अभ्यास

Authored by

डॉ. गजानन भाऊराव घोंगटे, मार्गदर्शक, मराठी विभाग प्रमुख
श्रीमती साळुंकाबाई राऊत कला व वाणिज्य महाविद्यालय, वनोजा.

कु. प्रगती माणिक बेलखेडे, संशोधक विद्यार्थीनी
श्रीमती साळुंकाबाई राऊत, कला व वाणिज्य महाविद्यालय, वनोजा.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 24-28

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सांस्कृतिक चेतना

Authored by

राजेश कुमार साव

शोधार्थी, हिंदी भवन,
विश्वभारती, शान्तिनिकेतन।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 29-37

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

RESHAPING OF CONSUMER BEHAVIOUR WITH EMERGENEC OF ONLINE MARKET AND AI

Authored by

Dr. Ramesh Kumar Chouhan, Assistant Professor,
Poonam Bishnoi, Research Scholar,
Department of Business Administration, Jai Narain Vyas University.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 38-45

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

फणीश्वरनाथ रेणु की 'नैना जोगिन' में गाली का
सौंदर्यबोध और सामाजिक अर्थ

Authored by

डॉ. गायत्री सिंह, सहायक प्राध्यापिका,

रंजीत कुमार पुष्पाकर, शोध छात्र

हिंदी विभाग, ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज प्रयागराज।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 46-49

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

प्रशासनिक कार्यो पर “संवैधानिक रूप से न्यायिक
नियंत्रण” का एक अध्ययन

Authored by

सुरेश चंद्र यादव

शोधार्थी (विधि), शास. ठा. र. सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

डॉ० एस०पी० सिंह

सेवानिवृत्त प्राध्यापक, शासकीय विधि महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

Published in **SANGAM** **ISSN : 2321-8037**

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 50-57

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

भारतीय अर्थव्यवस्था पर स्टार्टअप्स योजना का प्रभाव

Authored by

डॉ. कामिनी सिंह

अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र)

शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 58-69

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

**भारतीय ऑनलाइन बाजार का स्वरूप – एक
विरलेषणात्मक अध्ययन**

Authored by

डॉ. हर्षिता श्रीवास्तव

अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र)

शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

Published in **SANGAM** **ISSN : 2321-8037**

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 70-79

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

दक्षिण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय चेतना

Authored by

डॉ. फत्ताराम नायक

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 80-86

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

न्याय प्रणाली और महिलाओं के अधिकार : एक
आलोचनात्मक दृष्टिकोण

Authored by

Dr. Nisha Rani

Asst. Professor,
Political Science.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 87-97

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

Negotiating Indian and Western Cultural Influences in the Writings of Amitav Ghosh : A Postcolonial Perspective

Authored by

Rakesh Kumar Singh

Research Scholar, Department of English,
Jai Prakash University, Chapra.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 98-103

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

आलोचना की परंपरा और स्त्री लेखन

Authored by

रश्मि, शोधार्थी

डॉ० अनिल कुमार, सहायक प्रोफेसर,
हिंदी विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 104-108

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

उत्तराखण्ड के समाज में जाति व्यवस्था का वर्तमान
परिदृश्य : एक ऐतिहासिक अध्ययन

Authored by

दीपक कुमार

शोध छात्र, इतिहास विभाग,
डी0 एस0 बी0 परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 109-117

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

बौद्ध दर्शन में मध्यम मार्ग की अवधारणा एवं वर्तमान
युग में प्रासंगिकता

Authored by

सिद्धार्थ सिंह पटेल

शोधार्थी, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 118-121

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

THE HINDU BIRTH RITUALS : THEIR RELEVANCE IN THE CURRENT SOCIETY

Authored by

Dr. Kumari Soni Rekha

Assistant Professor,
Dept. of Sociology, J. D. Women's College, Patna.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 122-125

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

महिलाओं में प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता एवं
समस्याएं : पटना के अशोक नगर के मलिन बस्ती के
संदर्भ में

Authored by

शीतल सिन्हा, शोधार्थी

डॉ. मीरा रानी, शोध निर्देशक

असिस्टेंट प्रोफेसर, एम. एम. महिला कॉलेज

गृह विज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 126-133

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

अल्फा-बीटा-गामा : संवेदना का नवीन आख्यान

Authored by

डॉ. मिन्नु जोसेफ

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
सेंट. तेरेसास कॉलेज (स्वायत्त) एर्णाकुलम।

Published in **SANGAM** **ISSN : 2321-8037**

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 134-141

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

स्वामिविवेकानन्दस्यप्रारम्भिकजीवनम्

Authored by

डॉ. बलवन्त सिंह वत्स

मकान न0 59, सैक्टर 04 अर्बन इस्टेट,
कुरुक्षेत्र पिन 136118

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 142-146

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

Women Entrepreneurship Through Traditional Indian Skills

Authored by

Neelam Singh, Research Scholar

Dr. Nageshwar Prasad Agrawal, Professor
Coommerce, PMCOE Govt. Auto. P.G. College, Satna.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 147-150

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक-आर्थिक चिन्तन
का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Authored by

पूजा साकेत, शोधार्थी,

डॉ. अनुराधा जैन, प्राध्यापक

राजनीति विज्ञान, शासकीय स्वशासी स्नाताकोत्तर महाविद्यालय,
सतना (म०प्र०)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 151-156

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

‘धूप से रूठी चाँदनी’ में प्रवासी जीवन की काव्यात्मक
अभिव्यक्ति

Authored by

डॉ. सदफ इशत्याक

पोस्ट डॉक्टोरल फैलो (ICSSR PDF)

आगरा कॉलेज, आगरा।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 157-161

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

वर्तमान संदर्भों में हनुमान के आदर्शों
की आवश्यकता

Authored by

डॉ. दीपक कुमार

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी

राजकीय महाविद्यालय भेरियाँ, पेहोवा, कुरुक्षेत्र।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 162-165

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

भाषा एवं साहित्य के विकास में तेलुगु साहित्यक
पत्रकारिता का योगदान

Authored by

डॉ. टी. अरुणा कुमारी

विभागाध्यक्ष एवं सह आचार्या

हिन्दी विभाग, शासकीय महाविद्यालय (स्वायत्त), पाल्वंछा,
जिला भद्राद्री, कोत्तगूडेम।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 166-173

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

**औपनिवेशिक भारत में महिलाओं के कानूनी अधिकार
: एक अध्ययन**

Authored by

सुनीता कुमारी

पीएच.डी. स्कॉलर,

इतिहास विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर, बिहार।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 174-178

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*
**CYBER SECURITY GOVERNANCE AND
RISK MANAGEMENT : STRATEGIES
FOR SECURING CRITICAL
INFORMATION INFRASTRUCTURE**

Authored by

Bagwan Kaisar Parvez Nisar, Research Scholar,
Dr. Kalpana Midha, Research Guide,
DEPARTMENT OF COMPUTER SCIENCE,
SHRI KHUSHAL DAS UNIVERSITY, HANUMANGARH, RAJASTHAN

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 179-187

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

The Relationship between Mental Health and Life Satisfaction in the Digital Age

Authored by

Amirah Kaisar Parvez Bagwan, Research Scholar,

Dr. Pawar Anuradha Vijay, Research Guide,

DEPARTMENT OF PSYCHOLOGY,

SHRI KHUSHAL DAS UNIVERSITY, HANUMANGARH,
RAJASTHAN.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 188-194

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*
**Artificial Intelligence and Generative AI in
Commerce and Business Models :
Transformations, Applications, and Future
Implications**

Authored by
Prof. (Dr.) Manish Kumar Kannoja
HEAD & DEAN – FACULTY OF COMMERCE
GOVERNMENT DEGREE COLLEGE- CAMPIEARGANJ-
GORAKHPUR.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,
Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 195-200

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

**महिला सशक्तिकरण में पंचायती राज
की भूमिका**

Authored by

बिभा कुमारी, शोधार्थी,

प्रो.(डॉ.) अवध बिहारी सिंह, शोध निदेशक

प्रोफेसर व अध्यक्ष, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग,

वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 201-207

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

विकसित भारत 2047 के परिप्रेक्ष्य में समावेही कृषि
विकास हेतु सीमांत कृषकों की विपणन चुनौतियों एवं
अवसरों का अध्ययन

Authored by

गगन दीप सिंह, शोधार्थी,

डॉ. दिनेश जोशी, विभागाध्यक्ष,

वाणिज्य विभाग, इंदिरा प्रियदर्शिनी राजकीय स्नातकोत्तर महिला वाणिज्य
महाविद्यालय हल्द्वानी (नैनीताल)
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 208-218

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

आधुनिकता के दौर में मानवीयता का अतिक्रमण –
नाटकों के विशेष संदर्भ में

Authored by

खुशबू

अध्यापिका,

दिल्ली पब्लिक स्कूल, बिल्हौर।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 219-223

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com



गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Certificate of Publication for the paper titled*

पारिवारिक उपेक्षा का यथार्थ 'गिलिगडु'

Authored by

राहुल वर्मा

शोधार्थी, हिंदी विभाग,

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद ।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, July-Aug. 2026,

Vol. 14, Issue 7-8, Part-2, Page No. 224-228

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Naresh

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ grngobwn@gmail.com